

# آء ڪانگا ڪر ڄاڻ

(فقير دريا خان ڪنڊڙيءَ واري جو ڪلام)



سميڙيندڙ: نياز همايوني

سنڌي ادبي بورڊ



# آء ڪانگا ڪر ڄاڻھ

(فقير دريا خان ڪنڊڙيءَ واري جو ڪلام)

سهيڙيندڙ:

نياز همايوني



سنڌي ادبي بورڊ

ڄام شورو سنڌ

2007ع

[هن ڪتاب جا سڀ حق ۽ واسطا سنڌي ادبي بورڊ وٽ محفوظ آهن]

چاپو پهريون	سال 1992 ع	تعداد هڪ هزار
چاپو ٻيو	مئي 2007 ع	تعداد هڪ هزار

قيمت: هڪ سؤ ڏهه رپيا

[Price Rs. 110.00]

خريداريءَ لاءِ رابطو:

سنڌي ادبي بورڊ ڪتاب گهر

تلڪ ڇاڙهي، حيدرآباد سنڌ

(Ph: 022\_2633679, Fax: 022\_2771602)

Email Address: [sindhiab@yahoo.com](mailto:sindhiab@yahoo.com)

Website: [www.sindhiab.com](http://www.sindhiab.com)

---

هيءُ ڪتاب سنڌي ادبي بورڊ پرنٽنگ پريس ڄام شورو ۾ مئنيجر سيد سڪندر علي شاھ  
چپيو ۽ اعجاز احمد منگي، سيڪريٽري سنڌي ادبي بورڊ، ان کي پترو ڪيو.

پاران ايم ايڇ پنهور انسٽيٽيوٽ آف سنڌ اسٽڊيز، ڄامشورو.

Digitized by M. H. Panhwar Institute of Sindh Studies, Jamshoro.

ڪنڊڙي پورو ڌام هي، جيڪوئي ليوي نام،  
جيٽ دولهه دريا خان بستي، سڀئي ساري ڪام.  
روحل فقير

پڳت ڪنور جي نالي

بيجل ٻولي ڪينڪي، تندون تنوارين.  
”نياز“

## چپائيندڙ پاران

سنڌ جي شاعرن مان، ڪنڊڙيءَ (تعلقو روهڙي) جي درويش شاعرن جا نالا خصوصيت سان وٺڻ جي لائق آهن. هنن عظيم شاعرن جو سرچشمو ۽ مقتدا صوفي فقير ”روحل“ آهي، جنهن جي پرڪيف ميخاني جو فيض پيڙهين کان جاري رهندو آيو آهي.

فقير دريا خان جي ڪلام ۾ صوفيءَ جي لاءِ هڪ مفصل پروگرام موجود آهي. سندس ڪلام ۾ ڪوبه مبالغو يا اهڙي ڳالهه موجود ڪانه آهي، جنهن کي صوفي شطحيات سڏين ٿا. شطحيات منجهان مقصد آهي، اُهي ڳالهيون جي شرع سان تضاد ۾ اچن.

فقير دريا خان جي ڪلام ۾ جو سوز و گداز رس ۽ ڪمال آهي، ان کي ڏسي تعجب ٿو ٿئي، ته سنڌ جي اندر ڪهڙا ڪهڙا نه صاحب ذوق ۽ صاحب رهنما ٿي گذريا آهن.

هن ڪتاب ۾ خاص ڪري ”ڪافي“ جي صنف تي پريور ڪلام آيل آهي، جنهن ۾ سنڌي ۽ هنديءَ ۾ ڪافيون، دوا، پڄن، شبد ۽ واٽي چيل آهن. بهرحال هيءُ ڪتاب سنڌي ٻوليءَ جي ڪلاسيڪل صوفي شاعر فقير دريا خان جي ڪلام تي مشتمل آهي، جيڪو ڪيترن ڪشالن ڪاٺڻ کان پوءِ سنڌ جي سُريلِي شاعر نياز همايوني (مرحوم) هٿ ڪري ترتيب ڏنو جنهن جو پهريون ڇاپو سال 1992ع ۾ بورڊ ڇپائي پڌرو ڪيو. جيڪو خيرن سان مارڪيٽ مان ختم ٿي ويو ۽ پڙهندڙ حضرات جي اصرار کي نظر ۾ رکندي هن ڪتاب جو ٻيو ڇاپو نئين اهتمام سان ڇپي پڌرو ڪيو ويو آهي.

اميد ٿي ڪجي ته هيءُ ڇاپو گذريل ڇاپي وانگر پنهنجي مقبوليت ماڻيندو ۽ خاص طور تي سنڌي ادب جا شاگرد هن ڪتاب مان استفادو حاصل ڪندا.

اعجاز احمد منگي

سيڪريٽري

سنڌي ادبي بورڊ

ڄام شورو سنڌ

سومر 4- جمادي الاول ۱۴۲۸ھ

بمطابق 21- مئي 2007ع

هن گهراڻي جي گادي ڌڻي فقيرن جو تذڪرو هيٺئين سلسلي  
سان درگاهه جي هڪ عقيدتمند ڀائي جيوڻ داس شڪارپوري نظم ۾  
ڪيو آهي.

روحل رام اوتار ڪنڊڙي آهي پريم منڊلي،  
شاهو سائين پيد بتايو غلام علي گلزار  
درس دريا خان دولهه آهي، نظر علي نروار  
روحل ٻيو رمزن وارو محمد حسن موچار  
غلام علي ٻيو بهگن ٻالڪ، صورت وند سردار  
سائين فيض علي فيض وارو جو آهي صاحب دستار  
خاص خليفو سائين سپاڳو جنهن کي ذات ڏني ڏاتار  
جهڙي ڪاشي تهڙي ڪنڊڙي، وٽ نه پانيان وار  
جيوڻ آڪي آهيان بندو ستگر تو آڌار\*.

## وڏن فقيرن جي ولادت ۽ وفات جي تاريخ وار ترتيب

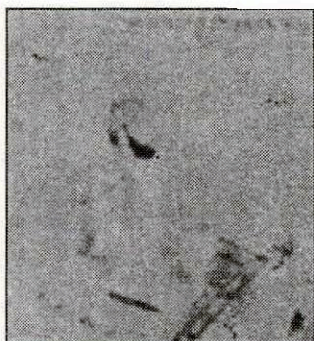
### ولادت   وفات

- |              |                          |
|--------------|--------------------------|
| 1734 – 1804ع | 1. روحل فقير             |
| 1743 – 1796ع | 2. مراد فقير             |
| 1748 – 1815ع | 3. شاهو فقير             |
| 1755 – 1839ع | 4. غلام علي فقير         |
| 1843ع        | 5. خدا بخش فقير          |
| 1765 – 1853ع | 6. دريا خان فقير         |
| 1806 – 1921ع | 7. صوفي جلال فقير ٽالپور |
| 1891ع        | 8. دريا خان ڪلهوڙو       |





فقير مراد صوفي



فقير محمد حسن



روحل فقير صوفي



فقير دريا خان صوفي

(تصوير ماهوار نئين زندگي جي ٽورن سان)

وفات وقت فقير سائين جو چيل بيت

هي حيران سهڻي يار ڪيتا،  
گهر ٻار اسانون ڀُل ڳئي.

سانون يار دي حسن حيران ڪيتا،  
ڪم ڪار اساڏي ڀُل ڳئي.

جيڪي ڦٽ فراق والي هئي،  
سي ته ڀڄندي ڀڄندي ڀڄل ڳئي.

جيڪي عاشقان دي ننڍا ڪرن،  
اهي راج رقيب دي ڀُل ڳئي.

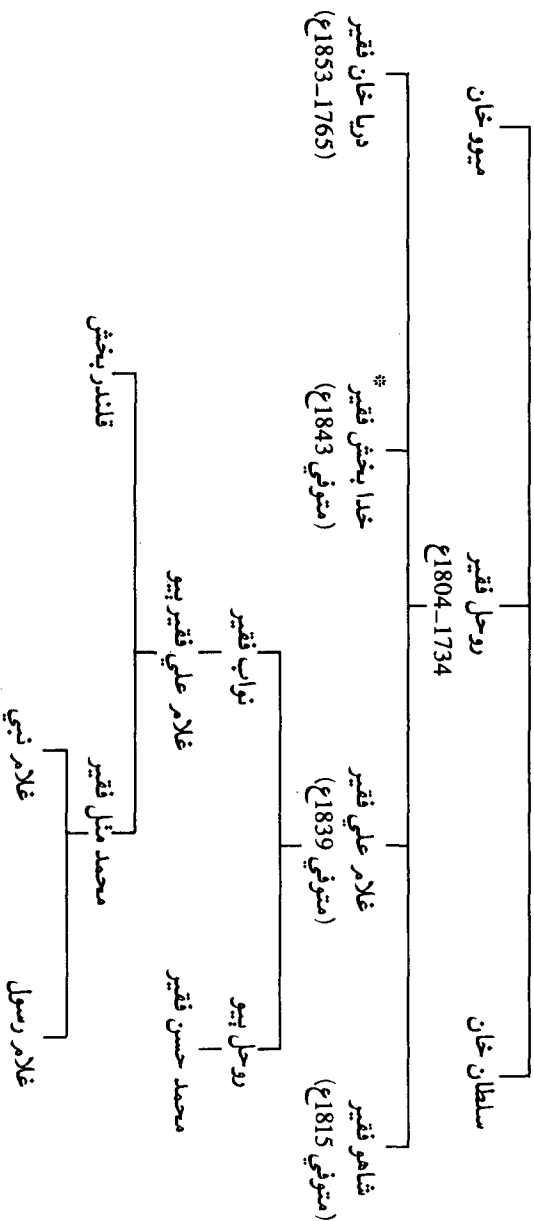
هاڏي يار مليا مطلب ٿئي،  
تازيان تاڪ اندر دي ڳل ڳئي.

”دريخان“ ڀڳي هن يار دي پيوسي،  
اهي هوڪي اساڏي هُل ڳئي.

✽

[جيئن بيت پورو ٿيو ته پاڻ دم ڏنائين]

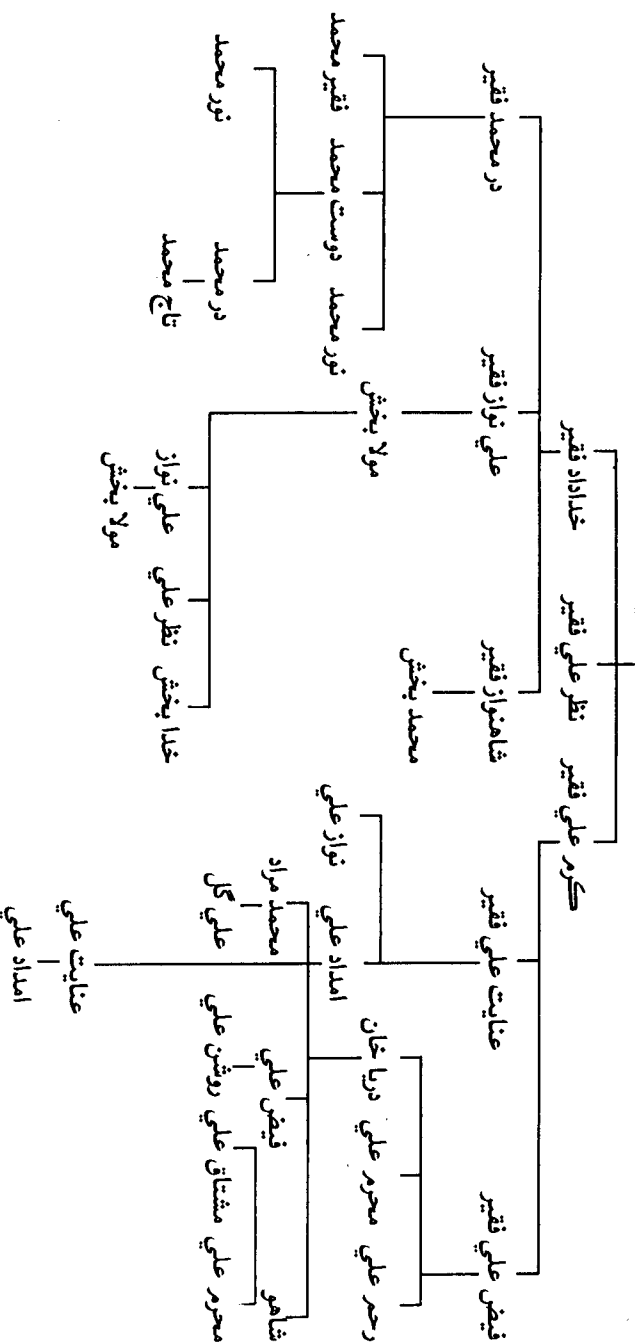
ڪنڊيڙيءَ جي فقيرن جو شجرو ”الف“  
(1) روحل فقير ذات زنگيجو ’بلوچ‘ پاڻو شاهائي  
شاهو خان



\* شجرو ايندڙ صفحي تي.

(2) خدا بخش فقیر ولد روحل فقیر (ایمن نمبر فرزند)

	1	2	3	4	5	6	7	8	9	10	11	12	13	14	15	16	17	18	19	20	21	22	23	24	25	26	27	28	29	30	31	32	33	34	35	36	37	38	39	40	41	42	43	44	45	46	47	48	49	50	51	52	53	54	55	56	57	58	59	60	61	62	63	64	65	66	67	68	69	70	71	72	73	74	75	76	77	78	79	80	81	82	83	84	85	86	87	88	89	90	91	92	93	94	95	96	97	98	99	100	101	102	103	104	105	106	107	108	109	110	111	112	113	114	115	116	117	118	119	120	121	122	123	124	125	126	127	128	129	130	131	132	133	134	135	136	137	138	139	140	141	142	143	144	145	146	147	148	149	150	151	152	153	154	155	156	157	158	159	160	161	162	163	164	165	166	167	168	169	170	171	172	173	174	175	176	177	178	179	180	181	182	183	184	185	186	187	188	189	190	191	192	193	194	195	196	197	198	199	200	201	202	203	204	205	206	207	208	209	210	211	212	213	214	215	216	217	218	219	220	221	222	223	224	225	226	227	228	229	230	231	232	233	234	235	236	237	238	239	240	241	242	243	244	245	246	247	248	249	250	251	252	253	254	255	256	257	258	259	260	261	262	263	264	265	266	267	268	269	270	271	272	273	274	275	276	277	278	279	280	281	282	283	284	285	286	287	288	289	290	291	292	293	294	295	296	297	298	299	300	301	302	303	304	305	306	307	308	309	310	311	312	313	314	315	316	317	318	319	320	321	322	323	324	325	326	327	328	329	330	331	332	333	334	335	336	337	338	339	340	341	342	343	344	345	346	347	348	349	350	351	352	353	354	355	356	357	358	359	360	361	362	363	364	365	366	367	368	369	370	371	372	373	374	375	376	377	378	379	380	381	382	383	384	385	386	387	388	389	390	391	392	393	394	395	396	397	398	399	400	401	402	403	404	405	406	407	408	409	410	411	412	413	414	415	416	417	418	419	420	421	422	423	424	425	426	427	428	429	430	431	432	433	434	435	436	437	438	439	440	441	442	443	444	445	446	447	448	449	450	451	452	453	454	455	456	457	458	459	460	461	462	463	464	465	466	467	468	469	470	471	472	473	474	475	476	477	478	479	480	481	482	483	484	485	486	487	488	489	490	491	492	493	494	495	496	497	498	499	500	501	502	503	504	505	506	507	508	509	510	511	512	513	514	515	516	517	518	519	520	521	522	523	52
--	---	---	---	---	---	---	---	---	---	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	-----	----



## جملات وقایع

مسترداد

حاجني محمد

15

احمد خان

٢٠٦

محمد خان

دین محمد

میر محمد

دعوت

مکرم

جعفر

یہ جان

١٢

۱۵۵

James P.

 $\frac{1}{2}$ 

غلام حسین

مختار

Shelton

ابراہیم

hazır

بسم الله الرحمن الرحيم

غلام رسول

احمد خان

۱۲۱

C.

١٠٠

has been

میر محمد

How can

مریڈ جسنین

۱۰۰

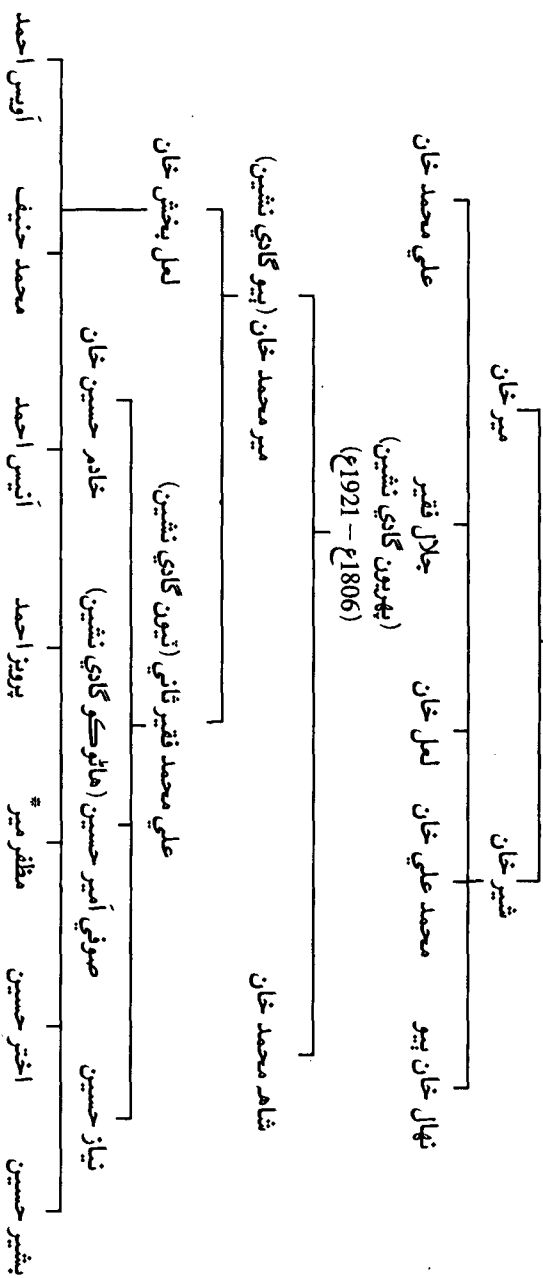
C.

جیسا کہ

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥

جیلانی داتا

شجره صوفي جلال فقير تالپور - گورث تالپور - وڈا ضلع خيرپور ميرس  
نہال خان (جنهن سڀ کان اول گورث تالپور وڌا آباد ڪيا)



## فهرست

صفحو	عنوان
19	جي تون پنهنجو پاڻ سڃاڻين
	<b>سنڌي ڪلام</b>
55	1- بيت (سرجوڳ)
58	2- سر سهڻي
59	3- سر سسئي
60	4- سر ليلان / متفرق بيت
66	5- ڪافي بلاولي
67	6- ڪافي بروو / ڪافي جوڳ
68	7- ڪافي بروو / ڪافي پهاڙي
69	8- ڪافي جوڳ
70	9- ڪافي بروو
71	10- ڪافي لوڙائو / ڪافي ڪلياڻ
72	11- ڪافي پهاڙي / ڪافي بلاولي
73	12- ڪافي جوڳ / ڪافي لوڙائو پهاڙي
74	13- ڪافي پهاڙي / ڪافي بروو
75	14- ڪافي / ڪافي سسئي
76	15- ڪافي بروو
77	16- ڪافي بلاولي / ڪافي ڪلياڻ
78	17- ڪافي جوڳ
79	18- ڪافي پيروي
80	19- ڪافي روپ ڪلياڻ / ڪافي بروو
81	20- ڪافي روپ شان / ڪافي سارنگ
82	21- ڪافي پهاڙي / ڪافي بروو
83	22- ڪافي لوڙائو پهاڙي / ڪافي ڪوهياري
84	23- ڪافي
85	24- ڪافي آسا / ڪافي جوڳ

- 25- ڪافي ڪاريهر / ڪافي پهاڙي ..... 86
- 26- ڪافي ڪوهياري / ڪافي ..... 87
- 27- ڪافي راڻو / ڪافي سر ڪاريهر ..... 88
- 28- ڪافي سسئي / ڪافي جوڳ ..... 89
- 29- ڪافي ..... 90
- 30- ڪافي جوڳ / ڪافي ..... 91
- 31- ڪافي ..... 92
- 32- ڪافي ڪلياڻ ..... 93
- 33- ڪافي ڪنڀات ..... 94
- 34- ڪافي پيروي / ڪافي سارنگ ..... 95
- 35- ڪافي وهاڳ / ڪافي روپ شان ..... 96
- 36- ڪافي پهاڙي / ڪافي پهاڙي ..... 97
- 37- ڪافي ڪلياڻ / ڪافي ڪوهياري ..... 98
- 38- ڪافي تلنگ / ڪافي بروو ..... 99
- 39- ڪافي ڪلياڻ / ڪافي بروو ..... 100
- 40- ڪافي جهنگلو / ڪافي جوڳ ..... 101
- 41- ڪافي جهنگلو / ڪافي ڏناسري ..... 102
- 42- ڪافي وهاڳ / ڪافي تلنگ ..... 103
- 43- ڪافي ڪاريهر / ڪافي سر پهاڙي ..... 104
- 44- ڪافي / ڪافي تلنگ ..... 105
- 45- ڪافي گجري / ڪافي ..... 106
- 46- ڪافي / ڪافي پهاڙي ..... 107
- 47- ڪافي / ڪافي ..... 108
- 48- ڪافي روپ بلاولي ..... 109
- 49- ڪافي ..... 110
- 50- مداح (مدح) ..... 111

### سرائڪي ڪلام

- 51- بيت / سر هير رانجهو ..... 115
- 52- متفرقه ..... 117



- 53\_ ڪافي تلنگ ..... 121
- 54\_ ڪافي آسا / ڪافي بلاولي ..... 122
- 55\_ ڪافي جوڳ / ڪافي پيرم ..... 123
- 56\_ ڪافي / ڪافي روپ آسا ..... 124
- 57\_ ڪافي روپ قصور / ڪافي سر سارنگ ..... 125
- 58\_ ڪافي بلاولي / ڪافي پهاڙي ..... 126
- 59\_ ڪافي پهاڙي / ڪافي بلاولي ..... 127
- 60\_ ڪافي سر آسا / ڪافي جوڳ ..... 128
- 61\_ ڪافي جهنگلو / ڪافي جوڳ ..... 129
- 62\_ ڪافي بلاولي / ڪافي بروو ..... 130
- 63\_ ڪافي جهنگلو / ڪافي بلاولي ..... 131
- 64\_ ڪافي جوڳ / ڪافي بلاولي ..... 132
- 65\_ ڪافي جهنگلو / ڪافي تلنگ ..... 133
- 66\_ ڪافي بروو / ڪافي بلاولي ..... 134
- 67\_ ڪافي جوڳ ..... 135
- 68\_ ڪافي ..... 136
- 69\_ ڪافي روپ ڪسوري ..... 137
- 70\_ ڪافي روپ بروو ..... 138
- 71\_ ڪافي روپ بلاولي ..... 139
- 72\_ ڪافي روپ آسا ..... 140
- 73\_ ڪافي ..... 141
- 74\_ ڪافي ڪوهياري ..... 142
- 75\_ ڪافي سر بلاولي ..... 143
- 76\_ ڪافي / ڪافي جوڳ ..... 144
- 77\_ ڪافي ڌناسري / ڪافي ..... 145

### هندي ڪلام

- 78\_ دوها / پڇن ..... 149
- 79\_ شبد / واڻي ..... 150
- 80\_ واڻي ..... 151

- 81- وائي ..... 152
- 82- وائي ..... 153
- 83- وائي ..... 154
- 84- ڪافي بلاولي ..... 155
- 85- هر ڪاسمرڻ ..... 156
- 86- اُلت بيد ..... 157
- 87- سي حرفي ..... 159
- 88- صوفي روحل فقير جو ڪلام / بيت سنڌي ..... 165
- 89- بيت سرائڪي ..... 166
- 90- هندي دوها / اُتتر بلاس ..... 167
- 91- من پرپوڌ ..... 168
- 92- مراد فقير جو ڪلام / سنڌي بيت ..... 169
- 93- سرائڪي بيت / ڪافي سرتوڏي / ڪافي سربسنت ..... 170
- 94- شاهو فقير ..... 171
- 95- بيت سنڌي ..... 172
- 96- بيت سرائڪي / هندي رنگ / سنڌي رنگ ..... 173
- 97- ڪافي / ڪافي روپ آسا ..... 174
- 98- ڪافي ..... 175
- 99- سوال جواب (هندي) ..... 176
- 100- غلام علي فقير ..... 178
- 101- بيت ..... 179
- 102- ڪافي / ڪافي ..... 181
- 103- ڪافي / ڪافي جوڳ ..... 182
- 104- ڪافي / ڪافي جوڳ ..... 183
- 105- ڪافي جوڳ ..... 184
- 106- ڪافي / ڪافي ..... 185
- 107- ڪافي / ڪافي ..... 186
- 108- ڪافي ..... 187
- 109- ڪافي ..... 188

- 110 - ڪافي ..... 189
- 111 - سرائڪي ڪلام / ڪافي ڪلياڻ / ڪافي روپ ملاري ..... 190
- 112 - ڪافي روپ مالڪونس / ڪافي بلاولي ..... 191
- 113 - ڪافي جوڳ / ڪافي بلاولي ..... 192
- 114 - ڪافي جوڳ ..... 193
- 115 - ڪافي جوڳ ..... 194
- 116 - ڪافي جوڳ / ڪافي جهنگلو ..... 195
- 117 - ڪافي جوڳ ..... 196
- 118 - ڪافي جوڳ / ڪافي روپ بروو ..... 197
- 119 - ڪافي روپ بلاولي ..... 198
- 120 - هندي واڻي / واڻي سر ريخت جهنگلو ..... 199
- 121 - واڻي ..... 200
- 122 - خدا بخش فقير / سي حرفي ..... 201
- 123 - نظر علي فقير / ڪافي روپ پرياتي ..... 204
- 124 - ڪافي ..... 205
- 125 - فقير درمحمد / ڪافي روپ شان / ڪافي روپ تلنگ ..... 206
- 126 - ڪافي روپ ڪلياڻ ..... 207
- 127 - ڪافي ..... 208
- 128 - فقير محمد حسن / ڪافي روپ بروو ..... 209
- 129 - صوفي جلال فقير ..... 210
- 130 - سنڌي بيت / هندي واڻي (هاڻي) ..... 212
- 131 - واڻي / واڻي ..... 213
- 132 - سرائڪي ڪلام (دل) ..... 214
- 133 - ٿانورداس شڪارپوري / ڪافي روپ سسئي ..... 215
- 134 - دريا خان دولهه ..... 216

## جي تون پنهنجو پاڻ سڃاڻين

ابن عربي، عشق جي اسرار جو اظهار ڪندي چوي ٿو، منهنجي دل هر صورت جو مسڪن بڻجي چڪي آهي، اها عيسائي راهبن لاءِ خانگاه، بت پرستن واسطي مندر ته اسلام وارن لاءِ ڪعبي جي حيثيت رکي ٿي. آءٌ عشق جي مذهب جو پوئلڳ آهيان ۽ انهيءَ ئي پاسي هلندو رهان ٿو جنهن پاسي ان جو قافلو مون کي وٺي وڃي ٿو.

عشق دراصل جسم ۽ روح جي انهيءَ پاڪيزگي ۽ پرهيزگاريءَ کي چيو وڃي ٿو جنهن جي مهياي انسان جي دل آرسيءَ جتان اچي اُچري ٿي ويندي آهي، اها ئي دل بنان ڪنهن شڪ شبيهي جي آخري الاهي جلال ۽ جمال جو مظهر ٿي بڻجي، جنهن ۾ جهاتي پائڻ سان هر ڪنهن کي حقيقي محبوب جي جهلڪ نصيب ٿئي ٿي. صوفي جڏهن مرشد جي رهنمائي ۽ پنهنجي اندر جي سڄهائي سان مجاز جامر حلاطيءَ ڪري حقيقت جي منزل تي پهچي ٿو ته عرفان ذريعي اهو مقصد حاصل ڪري ٿو جنهن لاءِ انسان ازل کان آرزومند رهندو ٿو اچي، ان کان پوءِ هو ابن عربي وانگي سراپا عشق بڻجي پوي ٿو ۽ سندس دل هر مظهر جو مسڪن ٿي وڃي ٿي.

تصوف خدا جي عشق ۾ غرق ٿي خلق جي امن خوشحالي جي تقاضا سان گڏ اتحاد، عافيت ۽ اطمينان لاءِ تحرڪ ۾ اچڻ جي تلقين ۽ تبليغ ڪري ٿو دنياداري جا هٿرادو پيدا ڪيل ويڃا، جيڪي انسان کي انسان جي ويري بڻائي حيات ۽ ڪائنات ۾ فساد جو ڪارڻ بڻجن ٿا، تن جي خاتمي لاءِ 3 صوفي لوڪ صدين کان تحريڪ هلائيندا پيا اچن، جنهن جو پتو تصوف جي تاريخي پس منظر مان پوي ٿو.

تصوف جي ابتدا جنهن عجيب انداز ۾ ٿي آهي تنهن بابت چيو وڃي ٿو ته قديم يونان ۾ فيثاغورس (500 ق.م) اشراق نالي تصوف ۾ آغاز

ڪيو. هي فلسفي عارفاڻي مسلڪ جو مبلغ هو. ٻئي پاسي اشراق جي معنيٰ روشن ٿيڻ ۽ روشني ڏيڻ آهي انهيءَ نسبت سان اشراقي يا اشراقيين، فلسفين جي انهيءَ گروهه کي سڏيو وڃي ٿو جنهن گهڻي رياض (مراقبي ۽ مڪاشفي) جي ذريعي ايتري قدر دل جي روشني ۽ باطن جي صفائي حاصل ڪئي هجي، جو کين ڪنهن به مسئلي لاءِ هڪ ٻئي ڏانهن رجوع ٿيڻ جي ضرورت درپيش نه اچي.

هن گروهه جي فلسفي ۾ سڀ کان اهم فڪر اهوئي هو ته ازل کان عشق جو لاڳاپو حسن ازل سان رهندو اچي ٿو جڏهن به ڪو شخص هن دنيا ۾ ڪنهن حسين شيءِ کي ڏسي ٿو ته سندس ذهن ۾ حسن ازل جي حصول جي تمنا اڀري اچي ٿي، ان لاءِ انهي حسين شيءِ جو حسن حقيقت ۾ حسن ازل جو عڪس هوندو آهي. فيثاغورسين (اشراقيين) جي خيال ۾ حسن ازل جو عرفان باطني نور يا اشراق جي وسيلي ملي سگهي ٿو.

اڳتي هلي انهيءَ فڪر جي وضاحت هن ريت ڪرڻ ۾ آئي ته حيات ۽ ڪائنات جون سموريون شيون حسن مطلق يا حسن ازل ڏانهن چرپر ڪنديون رهن ٿيون ۽ عشق به انهيءَ ئي چرپر يا تحرڪ، چڪ يا ڪشش جو نالو آهي. حسن جتي به هجي حسن ازل جو پرتو (اولڙو) ۽ عشق جو متقاضي (آسائو) رهي ٿو.

افلاطون (427 ق.م) انهيءَ چڪ يا ڪشش جو اصل ڪارڻ ٻڌائيندي فيثاغورسين جي تائيد ۾ چوي ٿو: ارواح، مادي عالم ۾ اچڻ کان اڳ پنهنجن پنهنجن ستارن ۾ مقيم هئا، جڏهن مٿن مادي عالم جي ڪشش غلبو ڪيو ته هو جسم جو قيد قبولڻ لاءِ مجبور ٿي پيا. پوءِ اهي ئي ارواح انهيءَ قيد مان چوٽڪارو حاصل ڪري وري ٻيهر پنهنجي اصل مسڪن ڏانهن وڻڻ لاءِ بيقرار ٿيڻ لڳا، انهيءَ لاءِ ته هنن کي هتي اچي حقيقت ۽ مجاز جي پروڙ پئجي چڪي هئي. شاهه لطيف چواڻي:

دلبو منجهه درياه، پسي پڪي آيا،  
ويچارا ويساه، آئي ات اڙايا.

هي وحدت الوجود واري فلسفي جي ابتدائي نوعيت هئي جنهن ۾ انسان حسن ۽ حق جي جستجو ۽ حصول خاطر جنون جي حد تائين نڪري نروار ٿئي ٿو اهوئي جنون هن کي عاشق صادق جو درجو عطا ڪري ٿو. اهو عاشق جنهن جو عشق خدا ۽ خلق جي وچ ۾ هڪ ناتي جو ڪم ڏيندڙ آهي اهوئي ناتو انسانذات کي ان الاهي صفات سان همڪنار ڪري ٿو جنهن جي طفيل امن، خوشحالي، اتحاد، عافيت ۽ اطمینان لاءِ راهون کلي پون ٿيون.

اها ڳالهه خاص ڪري ڌيان ۾ رکڻ جهڙي آهي ته فلسفو صرف سوچن جي مجموعي جو نالو ناهي جنهن تي فقط يقين ۽ اعتقاد رکيو وڃي. بلڪ هي هڪڙي قسم جو اصول آهي جنهن تي ڪاربنڊ ٿيڻ سان ئي انسان کي صحيح نموني زندگي گذارڻي پوي ٿي.

تصوف هڪ اهڙو علم آهي جيڪو دل جي باطني حال سان تعلق رکندڙ احڪامن جي پوئواري ڪرائي ٿو. گویا هي دل جي رياض ۽ نفس جي مجاهديءَ جو علم آهي جنهن مان انسان کي وڏو مشاهدو حاصل ٿئي ٿو. اهڙيءَ طرح هي نه رڳو علم پر عمل به آهي بلڪ هن کي ٻنهي جو مجموعو چئجي ته وڌيڪ مناسب ٿيندو. علم ان لاءِ جو هن جو وسيلي انسان نفس جي مصیبتن کان واقف ٿئي ٿو ۽ عمل انڪري جو انهيءَ علم کي عملي جامو پهراڻڻ سان هڪ نئون علم حاصل ٿئي ٿو. جنهن کي صوفي معرفت يا عرفان ڪوٺين ٿا. مقصد هي ته تصوف انساني نفس کي مهذب بنائڻ جو علم آهي جنهن کي مذمت ڪيل (ندیل) اخلاق کان پاڪ صاف ڪري ساراهيل اخلاق سان سنوارڻ جو عمل چئي سگهجي ٿو. صوفي جڏهن پنهنجي عمل جي انتها تي پهچي ٿي ته پوءِ صحيح نموني انسان ذات جي رهنمائي ڪرڻ لائق ٿئي ٿو ۽ بني نوع انسان جي اخلاق جي اصلاح جو فرض پوريءَ ريت سرانجام ڏيڻ جهڙو ٿئي ٿو.

افلاطون کان پوءِ فلاطینوس (205 - 270 ق.م) افلاطون جي فلسفي کي زندگيءَ جي زنده انداز جي صورت ۾ نئين سر نروار ڪيو. جنهن ۾

تفڪر ۽ استغراق کان علاوه نفس جي پاڪيزگي ۽ باطن جي صفائيءَ کي بنيادي حيثيت ڏني وئي. ان باري ۾ هي ارسطو (384-322 ق.م) کان به اڳتي وڌي ويو ڇو ته فلاطينوس اهل صفا جي ارتقائي مدارج جو قائل هو. سندس خيال ۾ انسان جيڪڏهن چاهي ته انهيءَ ئي سرچشمي کان اڳڀرو ٿي اصل تائين رسائي ڪري سگهي ٿو، جتان سندس اچڻ ٿيو آهي. ٻيو ته اڄ وڃ جو اهو سلسلو سدائين ڪائنات ۾ هلندو اچي ٿو ۽ هر روح ۾ ان هستيءَ ڏانهن وڙڻ جي چڪ يا ڪشش رهي ٿي جنهن کي واحد سڏيو وڃي ٿو پر انهيءَ واحد جو نالو هن خدا بدران نيڪي يا خير رکيو آهي تڏهن به چوي ٿو ته ان جي ڪابه جامع يا مانع تعريف امڪان کان ٻاهر آهي. بهتر ائين ٿيندو ته ان جي تعين عوض ان جي تلاش ڏانهن توجهه ڏنو وڃي. فلسفي جي ڪن مورخن جو چوڻ آهي ته: فلاطينوس پنهنجي هم عصر ٻڌمت جي پوئلڳن کان به استفاده ڪيو هو. ماني (ايران جو مشهور مدعي نبوت) جيڪو پڻ فلاطينوس جي دور جو هو سو به ٻڌمت جي عقيدن کان متاثر چيو وڃي ٿو. ياد رهي ته مهاتما ٻڌ جي پيدائش (543 ق.م) ۾ ٿي هئي جنهن سڄي ڄمار زهد ۽ تقويٰ ۾ گذاري، مرڻ گهڙيءَ وصيت ڪئي هئي ته دنيا ۾ سچائي کان سواءِ سڀ ڪجهه فاني آهي. پنهنجي محنت سان پنهنجي چوٽڪاري جي ڳڻ ڪريو جيڪڏهن اوهان جي محنت ۾ سچائي موجود هوندي ته ڪاميابي اوهان کي هر حال ۾ نصيب ٿيندي.

ماني ۽ فلاطينوس کان اڳ ٻڌمت وارن افغانستان ۽ خراسان ۾ پنهنجي فڪر ۽ فلسفي جي تعليم جاري ڪئي هئي جتي هر هنڌ ٽپ ۽ چٽيون يادگار طور (اڃا تائين) قائم آهن. خاص ڪري بلخ ته ٻڌمت وارن جو مرڪز هو. جتان جا پوڄاري هڪ مها پوڄاري يا پر مک پوڄاري جي اولاد هئا، جن جا پويان عباسي خليفن جي دور ۾ اسلام قبولي برامڪا سان مشهور ٿيا، ايران ۾ هڪ ٻئي جي ويجهڙائيءَ ڪري صدين کان ٻڌمت ۽ مجوسيت درميان اثر تائير جو سلسلو قائم رهندو آيو. ماني

پنهنجي تعليم جو گهڻو حصو ٻڌمت وارن کان اخذ ڪيو هو. ساڳيءَ طرح فلاطينوس جي همعصري سبب مانويت ۽ نو اشراقيت جو گڏوگڏ پرچار ٿيندو رهيو. هي ٻئي رهبانيت جا قائل هئا، جنهن ڪري هنن جي تعليم جو شروعاتي دور جي عيسائين تي تمام گهڻو اثر پيو. انهيءَ اثر جي نتيجي ۾ عيسائيت جي ابتدائي صدين ڌاري مصر، شام ۽ خراسان ۾ نو اشراقيت، مانويت، مسيحي رهبانيت ۽ سمنيت (ٻڌمت) جي عقيدن تي هر هنڌ بحث مباحثي جي بازار گرم هئي.

اسلامي دنيا ۾ انهن عقيدن جي اوائلي اشاعت خراسان، جندي شاپور ۽ ٻين مڪتببن وارن جي واسطيداريءَ سان شروع ٿي، جيڪي عيسائين شام کان وٺي ايران، عراق تائين قائم ڪيا هئا، انهن هنڌن تي فلاطينوس جا ڪتاب ۽ انهن جون شرحون شامي زبان ۾ ترجمو ڪري پڙهايون ٿي ويون جن ۾ افلاطون، ارسطو ۽ فيثا غورس جي فڪر ۽ فلسفي جي ترجماني نو اشراقي رنگ ۾ ڪري انهن جي تطبيق عيسائي عقيدن سان ڪئي ويندي هئي. خليفي مامون الرشيد جي زماني (813-833ع) ۾ بيت الحڪمت جي عالمن مٿي ذڪر ڪيل ڪتابن ۽ انهن جي شرحن جا عربيءَ ۾ ترجما ڪيا جن کان مسلمانن جي مذهبي عقيدن ۾ هڪڙي قسم جي هلچل مچي وئي ۽ متڪلمين خاص طرح نو اشراقي فڪر جي مذهبي عقيدن سان مطابقت ڪرڻ لڳا. فيثا غورسي ۽ نو اشراقي افڪار جي اشاعت کان مذهب اسلام ڪيترن فرقن ۾ ورهائجي ويو جنهنڪري نسخ ارواح، سريان، امتزاج، تجسيم، حلول ۽ اوتار جا نو اشتراڪي آريائي افڪار اسلامي تعليمات ۾ نفوذ ڪري ويا. مسلمانن جي فلسفي ۽ علم ڪلام وانگي تصوف به انهن فڪرن جي اشاعت مان صورت پذير ٿيندو ويو. تصوف جي انهي عجيب ارتقائي سلسلي کي پٽ ڌڻيءَ هيٺينءَ ريت سهيڙيو آهي:

لنگ ٻڌائون لانگ، موٽي ڪن نه مَسُوه  
جا اسلامان اڳي هئي، سا ٻڌائون ٻانگ،  
سامي ڇڏي سانگ، گڏيا گور ڪناٺ ڪي.



ڪن عالمن جو چوڻ آهي ته اسلام ۾ تصوف جو پيدا ٿيڻ مذهبي زندگيءَ جي فطري تقاضا موجب هو ليڪن عام خيال اهو به آهي ته تصوف خود مذهب جي ردعمل کان وجود ۾ آيو جنهن ظاهر پرست عالمن جي بيجا مذهبي مداخلت خلاف بغاوت جو ڪردار ادا ڪيو.

جيتري قدر تصوف جي اصل روح جو تعلق آهي نبي ڪريم ﷺ ۽ صحابين جي زماني ۾ به هن جو وجود هو مگر ان وقت انهيءَ جي اها صورت ڪانه هئي جيڪا صدين کان پوءِ اختيار ڪيائين. تاريخي اعتبار کان ٿوري عرصي اندر سڀ کان اول جنهن کي صوفي جو لقب مليو سو خواجه حسن بصري هو (ولادت 26هه - 111هه - 643ع - 728ع) اسلامي تصوف جو آغاز اصل مصر ۽ خراسان مان ٿيو هو ذوالنون مصري متوفي 861ع سڀ کان پهريان معرفت جو تصور مسلمانن جي تصوف ۾ داخل ڪيو هن جي مريد ابوسعيد الخزاز متوفي 890ع فنا في الله جو جيڪو نظريو پيش ڪيو اهو سنئون سڌو قديم عارفن ۽ نو اشتراقين جي فلسفي تان ورتل هو. ذوالنون مصري جي اها تحريڪ بصري ۽ بغداد ۾ گهڻي قدر مقبول ٿي ان ڪري جو هڪ ته ابوسعيد الخزاز پاڻ بخارا ۾ ۽ بصري ۾ وري رابع بصري متوفي 754ع ان کي وڌيڪ مروج ڪيو.

خراسان ۾ تصوف جي مڪتب جي شروعات ابراهيم ادهم متوفي 779ع کان ٿي. خراسان واري صوفين جي مڪتب جنهن گوشي نشيني، ذکر فڪر ۽ تجرد پسندي (گويا رهبانيت) جي تبليغ ڪئي، اها صدين کان خراساني ٻڌمت وارن جي توسط سان اتي رواج ۾ آيل هئي. مسلمانن جي تصوف ۾ انهن ٻنهي روايتن جو امتزاج عمل ۾ اچي چڪو آهي.

تصوف جي هن تاريخي پس منظر پيش ڪرڻ کان پوءِ خود تصوف جي باري ۾ جيڪي بنيادي اسباب سان بيان ڪيا ويا آهن تن تي پڻ نظر وجهڻ لازمي آهي. ان باري ۾ هڪڙا عالم چون ٿا ته تصوف سماجي ناانصافين خلاف هڪ ردعمل جي صورت ۾ اُڀريو. جهڙيءَ ريت ٻڌمت برهمڻيت خلاف هڪ سڌريل انقلاب يا تبديلي جي روپ ۾ نروار ٿيو هو.

اهو ثبوت هن جي هيڪڙائي واري نڪتي مان ملي ٿو جنهن مطابق سڀئي ننڍ وڏائي واريون حدون ۽ حڪايتون انساني برادري ۽ برابري جي منافي سمجهيون ويون آهن. ٻين عالمن جي خيال ۾ تصوف اصل ۾ هڪ نفسياتي عمل هو. ڇو ته مسلمانن لاڳيتي جنگبازي، خونريزي ۽ خانہ جنگي کان تنگ ٿي چڪا هئا. صوفين ترار جي زور تي ٿيندڙ جهاد کي ننڍي جهاد جو نالو ڏنو. جنهنڪري وڏي جهاد جي پيٽ ۾ ننڍي جهاد کان فراريت اختيار ڪرڻ جي تلقين ڪئي وئي، جيئن شاهه قطب بکري (بکر جو شيخ الاسلام) متوفي 977ھ چوي ٿو:

جهاد نفس به است از جهاد اسلامي

ڪه در درون امان است دشمن دين را.

اسلامي جهاد کان نفس سان جهاد ڪرڻ افضل آهي ڇاڪاڻ ته دين جو اصل دشمن انسان جي اندر ۾ ئي لڪل رهي ٿو. نفس جي انهيءَ جهاد ۾ ابن عربي عشق کي عروج تي پهچايو ته منصور حلاج ان جي انتها ڪري ڇڏي، جنهن جي پاداش ۾ کيس 922ع ڌاري سوريءَ تي چاڙهيو ويو.

مشرق ۾ وحدت الوجود جي اوج سان گڏ وحدت الشهود به زور ورتو جنهن جي تحرڪ ۾ وقت جي حڪمران طبقي (پهريون بادشاهن پوءِ جاگيردارن) جو وڏو عمل دخل رهندو آيو. انهيءَ ئي طبقي جي همٿائڻ تي وحدت الشهود وارن مخالف ڌر (وحدت الوجود) خلاف ڪفر جون فتوائون جاري ڪرايون ۽ انهن کي موت جون سزائون ڏياريا. عالمن جي تحقيق مطابق هنن ٻنهي فرقن درميان جيڪو فرق هو تنهن جي اصليت هيءَ آهي:

وحدت الوجود جو فلسفو فرد کي انا الحق جي پاسي مائل ڪري ٿو ۽ وحدت الشهود وارو فلسفو فرد کي انا عبد ڏانهن راغب ٿو ڪري. انا الحق جي مابعد الطبيعي ڪٿي ڪهڙي به هجي بهرحال هي تصور فرد جي خود اعتمادي ۽ ذهني آزادي جو مظهر آهي، هي پنهنجي ذات جي سرچشمي

مان اُن جي اجنبيت جي نفى ڪري ٿو اهڙيءَ طرح هڪ مڪمل انسان جنم وٺي ٿو. ٻئي پاسي انا عبد جو تصور ان جي ابتڙ فرد ۽ سندس ذات جي درميان اجنبيت جو سبب بڻجي ٿو. هي فرد جي بيوسي، بيچارگي ۽ بي مايگي جو نه صرف اثبات ڪري ٿو پر فرد کي ان جي قبول ڪرڻ لاءِ پڻ مجبوريءَ ۾ ٿو آڻي. ان جي حوالي سان فرد جي زندگيءَ جو مقصد مطلق بڻجي ٿو وڃي.

سند جي سرزمين تي وحدت الوجود جو پرچار شيخ ابو علي سنڌي، ٽين صدي هجري جي عظيم سنڌي صوفي وٽان شروع ٿيو، جيڪو جڳ مشهور صوفي بايزيد بسطامي (261ھ - 874ع) جو استاد هو. مولانا عبدالرحمان جامي نفحات الانس ۾ شرح شطحيات جي حوالي سان لکي ٿو: شيخ روزبهان بجلي پنهنجي تاليف شرح شطحيات ۾ آندو آهي ته ابو علي سنڌي، بايزيد بسطامي جي استادن مان آهي، بايزيد پڻ چوي ٿو ته مون توحيد ۽ فنا وارو علم (وحدت الوجود) ابو علي سنڌي کان سکيو، ۽ ابو علي مون کان الحمد ۽ قل هو الله پڙهيو.

علامه غلام مصطفيٰ قاسمي پنهنجي هڪ مضمون سنڌ جا اولياءَ ۽ صوفياءَ ڪرام (نئين زندگي آگسٽ - سيپٽمبر 1980ع حيدرآباد) ۾ مٿين اقتباس کان پوءِ ڄاڻائي ٿو ته نفحات الانس جو اهو چاڙهي نسخو اصل ۾ منهنجي بزرگ دوست مولانا دين محمد وفائي مرحوم جي ملڪيت ۽ مطالعي ۾ رهيو آهي. مولانا وفائي شيخ ابو علي سنڌي جي تذڪري ۾ حاشي هيٺ فارسيءَ ۾ هڪ معلوماتي نوٽ لکيو هو جو سنڌيءَ ۾ هن ريت آهي:

منهنجا استاد مولانا عبيدالله سنڌي جن فرمائيندا هئا ته جڏهن ابو علي سنڌي نو مسلم هو ۽ ويدانت جي علمن ۾ (جن جو دارومدار وحدت الوجود جي مسئلن تي آهي) پوريءَ طرح واقف ۽ ماهر هو ان ڪري بايزيد بسطامي، ابو علي سنڌي کان وحدت جا راز سکيو ۽ ابو علي سنڌي

نماز ادا ڪرڻ جي وات بايزيد وٽان سکي، اهو ان ڪري جو نو مسلم لاءِ شروعاتي طور قرآن جي ننڍڙين سورتن جو سکڻ لازمي آهي.

هن مان پڌرو ٿيو ته اسلامي تصوف توڙي وحدت الوجود جو مسئلو برصغير هند ۾ يونان جي فلسفين وٽان پهتو هو. هندستان ۾ خاص ڪري چشتي بزرگن جي ذريعي صوفين جا سمورا سلسلا ترقي ڪندا ويا، جن مان سرفهرست خواجه معين الدين چشتي اجميري (1140-1237ع) جو نالو اچي ٿو. هند ۾ هر هنڌ چشتي سلسلي کي جيڪا حيرت انگيز مقبوليت حاصل ٿي، تنهن جو اصل ڪارڻ اهو ئي هو ته چشتي مشائخ وحدت الوجود جي اصول تي ڪاربنڊ هئا ۽ وحدت الوجود جو نظريو ويدانت فلسفي سان مشابھت رکڻ ڪري هتان جي ماڻهن جي مزاج سان گهڻي قدر ٺهڪي ٿي آيو. ان کانسواءِ چشتي مسلڪ جي صوفين، هندن سان خوشگوار لاڳاپا قائم ڪري ڇڏيا هئا ۽ سندن تاليف قلب جون ڪوششون ڪندا ٿي رهيا جنهن جي اثر کان هندن جي اڪثريت انهن جي هٿان اسلام قبول ڪيو ۽ انهن جي بيعت به ڪرڻ لڳي.

ويدانت ۾ اُپنشدن جي ٽڙيل پڪڙيل تعليمات کي منطقي ۽ مربوط نموني پيش ڪيو ويو آهي جنهن جو حاصل مطلب هي آهي ته: برهم حقيقي ذات آهي ان کانسواءِ جيڪي ڪجهه هن ڪائنات ۾ ڏسجي پيو ميا (نظر جو نيرنگ يا فريب) آهي ۽ اوديا (جهالت) آهي. انساني روح (آتما) ۽ آفاقي روح (برهم) اصل ۾ هڪ ئي آهن. آتما ميا جي چار (قندي) ۾ قاسي پنهنجو اصل ماڳ وساري ٿي ڇڏي، جڏهن مٿس اهوراز ظاهر ٿئي ٿو ته هي پاڻ ۽ برهم هڪ ئي آهن ته ميا جو پيرم کلي ٿو پوي ۽ آتما پنهنجي اصلي ماڳ ڏانهن وري جي ڪري ٿي، ڇو ته ان ۾ ئي هن جو چوٽڪارو آهي. انهيءَ چوٽڪاري جا ٽي طريقا علم، عمل ۽ عشق آهن ويدانت کي وحدت جو علم پڻ چيو وڃي ٿو جنهن جو شارح مشهور هندي فلسفي شنڪر آچاريه (788-820ع) هو.

شنڪر آچاره کان پوءِ رامانج (1017-1137ع) ان جي برهمه کي سنئون سڌو شخصيت جي روپ ۾ پيش ڪيو. جيئن سڀڪو ان سان جذباتي سطح تي پنهنجو ناتو قائم ڪري سگهي. انهيءَ اصول تي هلي رامانج ڪيترن سچن ۽ سرويچ عالمن کي پاڻ سان شامل ڪرڻ ۾ ڪامياب ٿي ويو. جن پنهنجي پنهنجي وقت ۾ هن جي فلسفي ۽ تعليم جي اشاعت ڪئي. نه رڳو ايترو پر رامانج وڏي فراخديءَ کان ڪم وٺي ٻڌن، جينين، شودرن ۽ اڇوتن کي پنهنجي حلقن ۾ داخل ڪيو. شاھ لطف الله قادري چواڻي:

نڪا ڏاڍائي ڏيهه ۾ نڪا ذات جڳاءِ،

مولد سني راج ۾ جو کڻي سو ڪاءِ.

رامانج پنهنجي تصنيف ويدانت سنگره ۾ چوي ٿو: خدا انسان کي دنياڌاريءَ جي منجهائيندڙ مامرن مان ان وقت چوٽڪارو ڏياري ٿو جڏهن هو پنهنجي مرشد جي هدايتن مطابق حقيقي علم تائين رسائي ڪري عام زندگيءَ ۾ ضابطي، رياض، پاڪيزگي، معافي، خلق، فياضي ۽ عدم تشدد جي مشق پڄائيندي سڀئي لازمي ۽ رسمي فرض سرانجام ڏيڻ جي ڪري ٿو ۽ منع ڪيل ڳالهين کان پاسي رهي پاڻ کي توڪل جي آڌار خدا جي حوالي ڪري ٿو ڇڏي، موت ۾ خدا پنهنجي رحمت سان سندس اندر جي سڄي اونڌاهي هٽائي هن جي خمير کي روشن ڪري ٿو. هن جي خيال ۾ لازمي ۽ رسمي فرضن جي ادائگي سڀني بلندترين اخلاقي صفتن تي دائمي طور محڪم رهڻ يا انهن جي حصول جي ڪوشش ڪرڻ ۽ حقيقي علم جي تحصيل لاءِ پاڻ پتوڙڻ اهي سڀ چوٽڪاري جا ضروري شرط آهن. جڏهن انسان اهڙي نموني پاڻ ۾ استعداد پيدا ڪري ٿو ته کيس خدا جي آڏو پاڻ حوالي ڪرڻ ۽ ان جي عبادت ۾ محور رهڻ سبب دنيا جي سڀني قيدن کان رهائي ملي ٿي. رامانج جي راءِ ۾ پڳتي کان مراد خدا جي ذات جو لاڳيتو فڪر آهي، جنهن کان سواءِ علم به انسان کي چوٽڪارو ڏياري نه ٿو سگهي. پڳتي (الاهي عشق) جي خاص نشاني اها

آهي ته عاشق پنهنجي محبوب لاءِ ڪجهه ڪرڻ کان علاوه دنيا جي ڪنهن به معاملي ۾ ڪابه دلچسپي نه ٿو وٺي.

پڇاڙيءَ ۾ چوي ٿو ته: پڳتي هڪ طرح جو جذبو نه، پر علم آهي جيڪو پنهنجي محبوب جي تات ۽ طلب کان سواءِ ٻيو سڀ ڪجهه فراموش ڪرائي ٿو ڇڏي. هڪ ٻيو فلسفي وينڪنٽ ناٿ (1268-1369ع) وڌيڪ چٽائيءَ سان چوي ٿو ته لازمي ۽ رسمي فرضن جي ادائگي انسان کي حقيقي علم جي تحصيل لائق بڻائي ٿي ۽ حقيقي علم جو حصول انسان کي پڳتيءَ لائق بڻائي ٿو جڏهن انسان علم جي تحصيل لائق ٿئي ٿو ته هو سڀ ڪجهه ترڪ ڪري سگهي ٿو. هن جي راءِ ۾ پڳتي صرف علم نه پر پوڄا لائق ذات ۾ مسرت جي احساس پيدا ڪرڻ جو ڪارڻ پڻ ٿئي ٿي. اهو چوڻڪارو جنهن جي مهاڀي انسان خدا سان هڪ ۽ هر صفت ٿي ٿو وڃي، اهڙي قسم جي پڳتي جو نتيجو آهي، انهيءَ چوڻڪاري ۾ انساني روح خدا جي ”علم ڪل“ وارين صفتن ۽ سرور ۾ شريڪ ٿئي ٿو.

انهي رامنڇ جي پنجن پيڙهيءَ مان رامنڇ پيدا ٿيو جنهن عملي طرح پڳتي تحريڪ کي عروج تي آندو. هي پندرهن صدي عيسوي جو شروعاتي دور هو جڏهن هندستان ۾ سڪندر لڏي (1489ع) جي حڪومت هئي. تڏهن ملڪ ۾ تشدد پسندي انتهائي چٽي وڃي ٿي. بنيادي طور پڳتي تحريڪ برصغير جي ٻن عظيم تهذيبن درميان ترڪيبي صورت پيدا ڪرڻ جي لاءِ شعوري طور وجود ۾ آئي هئي. ليڪن اها پنهنجي قسم جي پهرين تحريڪ نه هئي؛ ان کان اڳ اهڙيون ڪيئي ڀاڻ وائي اسرندڙ تحريڪون هتان جي معروضي صورتحال مان اڀري چڪيون هيون، جن جي نتيجي ۾ هيٺين طبقن جي سطح تي هندو مسلم ترڪيبي ثقافت جنم وٺي رهي هئي. انهي عمل جو آغاز برصغير ۾ مسلمانن جي آمد سان شروع ٿيو جنهن موجب ان عمل جي اوائلي دور ۾ سنڌ جي نومسلمن عربن جي حڪومت دوران پنهنجي اڳوڻن مذهبي

اڳواڻن کي اسلامي نالا ڏئي ڇڏيا هئا. سومرن جي دور (يارهين کان چوڏهين صدي عيسوي) ۾ بعضي اهڙا بزرگ هئا جن جي انهي گڏيل تهذيب واري زماني ۾ هندو مسلمانن سان گڏجي ياترا ڪندا ٿي آيا جهڙوڪ: پير پٺو ديبلجي جنهن کي هندن راجا گوبي چند جو نالو ڏنو. هي قلندر شهباز جو همعصر هو جيڪو وري هندن وٽ راجا ڀرتري هري ليڪيو ٿي ويو. اهڙيءَ طرح منگهو پير جنهن قلندر شهباز کان ٻه صديون پوءِ مقبوليت حاصل ڪئي تنهن کي هندن جس راج ٿي ڪوٺيو. حيدرآباد جي ڀرسان شيخ طاهر کي هندو اڄ به اڏيرو لال سڏين ٿا جتي هن جي ٻئي ۽ سماڌي پئي موجود آهن. هڪ مجاور هندو ته ٻيو مسلمان، هيڏانهن مندر ته هوڏانهن مسجد، اهو عجب نظارو جئن جو تئن ايامن کان موجود آهي. ڪشلو خان بکر جي قلعي ڀرسان هڪ ننڍڙي ٻيٽ تي مسجد ٺهرائي ته مسلمانن ان کي خواجه خضر جو آستان ۽ هندو زنده پير چوڻ لڳا. تنهن کان سواءِ سنڌ جي ڪيترن مشهور پيرن ۽ درگاهن، لواري، جهوڪ، درازن، بيدل فقير ۽ رکيل شاهه ناڙي واري جا هندو مسلمان پئي معتقد ۽ مريد آهن ۽ هندستان مان ڪشالا ڪري اچي ميلي جي موقعي تي پهچن ٿا جئن هتان جا زيارتي اجمير ڪهي ويندا آهن.

مغل دور کان اڳ انهي ترڪيبي ثقافت يا گڏيل تهذيب جي تسڪيل جو عمل تصوف جي وسيلي نهايت شدت اختيار ڪري ويو. هي دور حقيقت ۾ اسلامي ۽ هندستاني ادبيات، افڪار ۽ روايات جي اتصال (ڳانڍاپي) جو دور هو. جيتوڻيڪ انهي ترڪيبي ثقافت جي حمايت ڪندڙ صوفين مان ڪي اهڙا ڀلارا به هئا جن ۾ چاڀڙائي جو پهروپ پئي پسايو. قاضي جاويد (مصنف هندي مسلم تهذيب) هڪ هنڌ لکي ٿو: امير خسرو جنهن خواجه نظام الدين اولياءَ جي پيروي ۾ پنهنجي عمر ڏئي ڇڏي. پر ساڳيو شخص نون بادشاهن (جن مان ڪي هڪ ٻئي کي قتل ڪري تخت نشين ٿيا هئا) جا قصيدا اهڙيءَ ريت لکندو هو جيئن اڄڪلهه اخبارن جا ادارا نگار بدلجندڙ حڪومتن جي حمايت ۾ ادارا لکندا آهن.

وحدت الوجود جي فلسفي جنهن کي ويدانت وارن ۽ مسلمان صوفين جي فڪر ۽ خيال مان مساوي (برابري) جي حد تائين هيڪانڊو ڪرڻ آسان هو. هن ترڪيبي ثقافت لاءِ مابعدالطبيعي بنياد جو ڪم ڏنو. پندرهن صدي عيسوي ۾ هندن ۽ مسلمانن مان اهڙا ڪئين دانشور پيدا ٿيا جن هن نئين نرالي صورتحال جي باري ۾ نظريه سازي ۽ ترڪيبي ثقافت جي تشڪيل ۽ تعمير جي عمل کي تيز ڪرڻ لاءِ نوان نوان ترڪيبي فڪر پيش ڪيا. سورهن صدي عيسوي تائين انهن دانشورن جي تحريڪ کي پڳتي تحريڪ جو نالو ڏنو وڃي ٿو. دراصل اها تحريڪ برصغير جي سمنڊ وانگر ڪيترن گهٽ وڌائين کي جذب ڪرڻ جي بي انت صلاحيت جو هڪ اهم اظهار هئي. مولانا نجيب اشرف جي لفظن ۾:

اسلام جي اشاعت جو ڪم انهن صوفين شروع ڪيو جيڪي باهم ۽ بي هم (سڀ سان گڏ يا سڀ کان الڳ) جي اصول تي ڪاريند، وسيع مشرب، آزاد خيال ۽ رواداريءَ وارا هئا. هندن به سندن صحبت ۾ اهو رنگ اختيار ڪيو. رامانند، گرونانڪ ۽ سوامي چيتنا اهڙائي گرو هئا. هنن نه فقط ويدانتي توحيد ۽ صوفياڻي اصول ”فنا في الله“ کي عام ڪيو پر پنهنجي حلقي ۾ داخل ٿيڻ لاءِ هندو مسلمان هئڻ جي پابندي به هٽائي ڇڏيائون. نتيجو اهو نڪتو جو انهن جي معتقدن ۾ ته ٺهيو پر سندن خليفن ۾ به ڪيترا مسلمان نظر اچڻ لڳا. ڪبير پنٿي ۽ دائود پنٿي انهن جا جيئرا جاڳندا مثال آهن. مشهور مؤرخ ڊاڪٽر تاراچند لکي ٿو:

اتر هند ۾ جتي مسلمان پهريان اچي آباد ٿيا. هندن جي مذهبي توڙي معاشرتي خيالن ۾ ڪافي تبديليون اينديون ويون، جن مان ڪيتريون تبديليون شڪر آچار به، شو ۽ وشنومت جي ساڌن سببان هيون.

راناڻج ان جو خاص اسلوب ترتيب ڏنو ۽ پڳتي تحريڪ کي سڄي ملڪ ۾ روشناس ڪيائين، پڳتي يا محبت ۽ عبادت جو مذهب جيڪو هوريان ڏاڍيان اتر جي سڀني علائقن ۾ پکڙندو ويو هڪ لحاظ کان اڀرندڙ ۽ پڳوت گيتا جي تعليمات تي مبني هو. ليڪن وچئين زماني ۾ هن جي



مقبوليت اسلامي اثرن هيٺ ٿي. ڀڳتي جي پراڻن پهلون تي اسلامي اثر جي ڪري گهڻو زور ڏنو ويو ۽ هن جون ڪيئي ڳالهيون اسلامي تعليمات تان ورتيون ويون. ان مان ثابت ٿئي ٿو ته هندن ۽ مسلمانن معاشرتي بهتري جي خيال کان عقيدتي جي حد تائين پنهنجي پنهنجي دين ۽ ڌرم جون اهي سڀئي سچايون ۽ چڱايون قبول ڪري انسان دوستي جو اهو رشتو قائم ڪيو جيڪو سنئون سڌو انساني برابري ۽ برادريءَ سان ڳنڍيل هو.

رامانج پنهنجي پيشرو شنڪر آچاريه جي نه صرف احديت مطلق جي تقليد جي بدران ويدانت (وحدانيت) جي فلسفي تي پنهنجي فڪر جو بنياد رکيو پر پنهنجو سمورو ڌيان هندن جي هيٺين ذاتين ڏانهن ڏئي انسان دوستي جو ثبوت مهيا ڪيائين. ان کان پوءِ جڏهن سندس پيرو رامنند جو وارو آيو ته ن ڀڳوت گيتا جي پيش ڪيل انهي تصور جو خاص طرح پرچار شروع ڪيو ته سڀئي انسان هڪجهڙا آهن. انهيءَ اصول تي هن ذات پات جي نظام تي به چڱي چوٽ ڪئي. اصل ۾ ذات پات جي نظام جي مخالفت ڀڳتي تحريڪ جو بنيادي مقصد هئي. هن تحريڪ سان تعلق رکندڙ لوڪ روحاني دٻاءُ ۽ عصبيت سان گڏوگڏ سماجي طبقي بندي ۽ تشدد جي به خلاف هئا. روحاني رجعت پسندي ۽ عصبيت خلاف احتجاج ڪندي رامنند اها تبليغ شروع ڪئي ته خدا تائين رسائي صرف محبت ذريعي حاصل ٿي سگهي ٿي. تصوف ۾ ثقافت جي شموليت کان پوءِ سياست جي مداخلت بابت ڪجهه بيان ڪرڻ کان اڳ هتي خود تصوف جي عصري صورتحال مطابق ان جي موجودگي ۽ پيش رفت متعلق ڪي اهم ڳالهيون پيش ڪجن ٿيون.

برصغير جي علائقي تشڪيل ڪجهه اهڙي نوعيت جي هئي جو هتي جي مقامي طرح ڪيترين قومن ۽ مذهبن جا ماڻهو سکونت پذير هئا. مذهبي ۽ قومي تفريق سبب هنن ۾ ايتري قدر ننڍيون وڏيون وچوليون هيون جو هي انهن کي پار ڪري هڪ ٻئي جي ويجهو اچي نٿي سگهيا ۽ هڪ ٻئي کي سمجهڻ کان قاصر هئا.

هي اهو دور هو جڏهن اقتصادي طور ملڪ جي پيداواري نظام کي اهم سمجهڻ بدران صرف حڪومت جي انتظامي امور کي اهميت ڏني ٿي وئي ۽ انهيءَ ئي نڪتي کي نظر ۾ رکي سماجي اتحاد توڙي امن جي ضرورت تي زور ڏنو ٿي ويو. اڪثر صوفين جي سرپرستي به وقت جي حاڪمن ۽ حڪمرانن انهي مقصد کي خيال ۾ رکي ٿي ڪئي ته جيئن گهڻين قومن ۽ مذهبن جي ڪري ملڪ ۾ تفرقي بازي عوض هڪ اهڙو اتحاد قائم ٿي سگهي جنهن مان حڪومت لاءِ به امن عافيت جو جواز پيدا ٿئي ته ماڻهن جي واسطي پڻ خير ۽ صلح جو سبب برقرار رهي سگهي.

اڳتي هلي جيئن برصغير ۾ ٻاهرين قومن جي آمدرفت جو سلسلو شروع ٿيو ۽ ان جي نتيجي ۾ مقامي معاملن اجنبين ماڻهن جي عمل دخل هيٺ ايندا ويا ته هڪ نئين صورتحال پيدا ٿي. اها هيءَ ته ڌارين حڪمرانن کي پنهنجي تسلط قائم رکڻ جو خفت جاڳيو جنهنڪري هنن تصوف کي سياسي رنگ ڏئي پنهنجو ڪم ڪڍڻ ٿي چاهيو ان ردوبدل مان ڪيئي ڏکيا مسئلا پيدا ٿيڻ لڳا جن کي دٻائڻ لاءِ حڪمران طبقي طرفان نوان جتن سوچيا ويا ته صوفين انهن کي روڪڻ جا اپاءَ شروع ڪري ڏنا. انهيءَ تصادم جي ڪري تصوف، جيڪو اوائل ۾ يونان مان ظهور پذير ٿي هت اچڻ کان پوءِ مقامي نوعيت اختيار ڪري بني نوع انسان جي اخلاقي بهتري ۽ سماجي برتري لاءِ اڳتي وڌندو ٿي ويو تنهن جي وسعت پذيري تي وار ڪري ان کي هڪ محدود دائري ۾ آندو ويو.

انهيءَ حدبندي کان پوءِ تصوف تي سنئون سڌو دٻاءُ وڌو ويو ته جيئن هو ڪمزور ٿي پنهنجو اثر ويڃائي ڇڏي ليڪن جڏهن ائين ڪرڻ مان ڪجهه نه وريو ته خود حڪمرانن تصوف مان ٿيندڙ پورائي جو ٺيڪو کڻي پاڻ کي ڏنو ڪيو. ان مان پهريون طبقو لوڏين جو ۽ ٻيو طبقو مغلن جو هو جيڪي ٻين حڪمرانن کان وڌيڪ نشانبر پڌرا هئا. لوڏين مان سڪندر لوڏي ته مغلن مان اڪبر بادشاهه اهي ڀڳون ٻڌي پاڻ وٺائڻ جي هام هڻي.

قاضي جاويد (برصغير مين مسلم فڪر ڪا ارتقاء) ۾ انهيءَ صورتحال جي وضاحت ڪندي لکي ٿو: پندرهن صدي جي برصغير ۾ پڳتي تحريڪ ۽ باغيانه صوفي افڪار جي وسيع تر اشاعت ۽ عوامي مقبوليت آخر هندو مسلم تفریق کي وڌي وڻ ڪمزور ڪري ڇڏيو. انهن قوتن جي عمل مان هڪ پاسي ترڪيبي ثقافت کي تقويت حاصل ٿي ته ٻئي طرف برصغير جي مختلف مذهبي ۽ ثقافتي گروهن جي ميلاپ سان گڏيل قوميت جي احساس جو بنياد مضبوط ٿيو. سلاطين دهليءَ جي دور حڪومت جي پڇاڙيءَ ۾ انهن ترڪيبي قومن جو عمل دخل گهڻي قدر وڌي چڪو هو. لوڌي خاندان جي حڪمرانن جي مذهبي ۽ سياسي حڪمت عملي انهن قوتن جي خلاف ردعمل طور وجود ۾ آئي جنهن جو اصل ڪارڻ اهوئي هو ته هندستان جا مسلم حڪمران ترڪيبي رجحان کي پنهنجي وجود جي امتياري خصوصيت لاءِ وڏو خطرو تصور ڪري رهيا هئا.

مغلن جو دور آيو ته اڪبر بادشاهه تصوف جي فلسفي کي مورڳو سياسي حڪمت عملي جو بنياد بنائي تصوف جو شڪل ٿي بدلائي ڇڏي. مولانا عبيدالله سنڌي لکي ٿو: هندستان جي هي (اڪبر وارو) تاريخي دور هڪ اهڙي نظام جو متقاضي هو جيڪو هندن، هندستاني مسلمانن ۽ مغلن کي هڪ جهنڊي هيٺ جمع ڪرڻ جي ڪوشش ۾ هو. ان وقت جهڙيءَ طرح هندن مسلمانن جي ميل ميلاپ سان هڪ گڏيل تهذيب جنم وٺي رهي هئي ۽ هڪ گڏيل زبان جو بنياد پوڻ وارو هو. ان سان گڏ هتي پڳت ڪبير ۽ گرونانڪ جهڙا مصلح پيدا ٿيا جيڪي ٻنهي قومن، تهذيبن ۽ مذهبن کي هڪ ٻئي جي ويجهو آڻڻ ۾ رڌل هئا، تنهن نموني سلطنت ۽ سياست ۾ به هڪ اهڙي نظام جي قيام جي ضرورت هئي جو ٻنهي قومن ۾ مشترڪ (هڪ جهڙو) هجي ها.

اڪبر پنهنجي حڪمراني جي بقاء ۽ بچاء لاءِ 1582ع ۾ دين الاهي قائم ڪري هي طبقي سان تعلق رکندڙ ماڻهن کي زبردستي قائل ڪرڻ لڳو ته هي مذهب تصوف ۽ تهذيب جو نعم البدل آهي تنهنڪري هر ڪنهن کي ان ۾ داخل ٿي ثواب دارين حاصل ڪرڻ گهرجي.

هن جي باري ۾ پويان ايندڙ تاريخ نويسن جو عام رايو اجهو هي آهي ته: برصغير ۾ سورهن صدي عيسوي ڌاري اڪبر جي دين الاهي جو اجراء ڪو غير معمولي واقعو نه هو. انهيءَ دين جو نظرياتي اساس آزاد خيال تصوف ۽ ڀڳتي تحريڪ تان اخذ ڪيل هو. ليڪن عملي اعتبار کان اهو حڪمن ۽ رسمن جو مضحڪه خيز (ڪل جهڙي) مجموعي کان علاوه ڪجهه نه هو. مغل اعظم جي مصنف سمٿ ٻه قدم اڳتي وڌي فيصلو ڪندڙاءِ ڏني ته: دين الاهي مغل اعظم جي حماقت جو شاهڪار هو.

قول ۽ فعل جو تضاد اڪبر کي ورثي ۾ مليو هو. سندس ڏاڏي بابر بادشاهه پنهنجي پٽ همايون جي لاءِ جيڪو وصيت نامو تيار ڪيو هو تنهن ۾ ٻين ڳالهين سان گڏ ان ڳالهه جو به ڪيس تاڪيد ڪيو هئائين ته ڪنهن به صورت ۾ ڪهڙي به قوم جي عبادت گاهه کي ڊانويا ڊهرايو نه وڃي. ليڪن بابر پنهنجي حڪمراني برقرار رکڻ جي خيال سان ان تاڪيد جي تدارڪ کان مجبور رهيو جنهن ڪري سندس وصيت جي تعميل ڪانه ٿي سگهي.

اڪبر پنهنجي ڏاڏي مڙسي جي زور تي هندستان جون ننڍيون وڏيون حڪومتون هٿ ڪرڻ کان پوءِ اچي پاڙيسري حڪمرانن جي ڪڍ پيو. هر ڪنهن کي خبر آهي ته اڪبر جو جنم سنڌ ۾ ٿيو هو پر جڏهن ڪيس بادشاهي جي هوس انڌو ڪيو ته پنهنجي ماتر پومي تي لشڪر ڇاڙهي پورو سال سانده سنڌ ۾ ظلم، ستم ۽ خونريزي جي تباهي مچائي ڏنائين، سڄو سال سنڌ سڙندي رهي، ماڻهو مرندا رهيا، پراڪبر کي ڪابه ڪهل نه آئي، انهيءَ دور جو هڪ عارف ۽ صوفي ميون وهيون انهي قهري ڪاررواين تي چيچلائي بيوسي جو اظهار ڪرڻ لڳو:

ڏڪن ۾ مرجال، گهوريا سکن ڏينھڙا،

جيھي تيهي حال، لنگهي ويندا ڏينھڙا.

تصوف جي جاءِ تي دين الاهي قائم ڪرڻ محض هڪ ڍونگ هو جيڪو اڪبر پنهنجي حڪومت بچائڻ لاءِ رڇايو تصوف جا پوئلڳ ته

سڀڪجهه ترڪ ڪري انسان ذات جي امن اتحاد عافيت ۽ اطمینان لاءِ پاڻ پتوڙيندا ٿي آيا، پر هي وري ڪهڙو مها صوفي اچي پيدا ٿيو جنهن پنهنجي هوس ۾ مخلوق کي ڏچي ۾ آڻي ڇڏيو اڃا به گهڻا ماڻهو ان کي اڪبر اعظم جو لقب ڏئي سرها پيا ٿين!

اڪبر پنهنجي اڌ صدي واري بادشاهت دوران هاڃا هٽندي جيڪي سياسي مصيبتون پيدا ڪيون تن مان جڳ پڌرو جاگيرداري نظام اڃا سوڌو انسانيت جي بربادي جو مظاهرو ڪندو اچي ٿو جنهن جو تفصيلي ذڪر اڳتي اچي رهيو آهي.

رامانند پنهنجي دور ۾ جيڪا عملي تحريڪ شروع ڪئي تنهن کي پڳت ڪبير پنهنجي زماني ۾ اوج تي رسايو. هي پيدائشي طور مسلمان هو پر سندس پرورش هندو گهراڻي ۾ ٿي هئي. خيال آهي ته برصغير جي ٻن عظيم ثقافتي قوتن (جن جو مٿي تفصيل اچي چڪو آهي) پڳت ڪبير جي شخصيت ۽ ڪردار جي تشڪيل ۾ هڪ جيترو بهرو ورتو. سندس زندگيءَ ۾ جيڪي ٻه عوامل اچي هيڪاندا ٿيا هئا اهي ئي سندس خيالن جي بهتري ۽ برتري جو باعث بڻيا ۽ انهن ئي اُچن خيالن جي آڌار تي هو رام ۽ رحيم سان روحاني رشتو قائم ڪري چڪو هو. هڪ جديد مؤرخ هن کي پهريون هندستاني قرار ڏنو آهي جنهن هندومت ۽ اسلام درميان متوازن راهه ڳولي لڌي هئي. اهو مؤرخ آهي ڊاڪٽر تاراچند جنهن جي فيصلي سان هرڪو متفق هوندو.

بيشڪ پندرهن صدي عيسوي جي ثقافتي ۽ روحاني تاريخ ۾ پڳت ڪبير کي خاص درجو حاصل هو. هن جي اتاهين سوچ عصبيت جي صورت پسندي ۽ روحاني آمريت خلاف شديد قسم جي احتجاج جي حيثيت رکي ٿي. هن سڀني ثقافتي ۽ مذهبي قدرن خلاف بغاوت ڪندي صداقت سان رابطي رکڻ جي ڪوشش ڪئي. سندس تعلق جيئن ته سماج جي هيٺئين طبقي وارن سان هو ۽ هن جي سوچ تي اجتماعيت پسندي غالب هئي، ان ڪري پاڻ پنهنجي پيشروئن مهاوير ۽ مهاتما ٻڌ کان

به وڌيڪ سماجي طبقي بندي جي مخالفت ڪيائين. هن کي پنهنجي ڪوشش وسيلي انسانن اندر هڪجهڙائي پيدا ڪرائڻ جي پوري پڪ هئي. اهوئي يقين سندس فڪر جو بنياد بنجي پيو. انسانن لاءِ خارجي رهنمائي کان زياده باطني رهبري تي زور ڏيندي پڳت ڪبير سڀني ظاهر دارين جي (جيڪي مذهب ۾ داخل ٿيل هيون) سخت مخالفت ڪندو رهيو. اهائي ڳالهه هن کي مسلمان صوفين ڏانهن مائل ٿيڻ ۾ مددگار ثابت ٿي.

مابعد الطبعي سطح تي هندومت ۽ اسلام ٻنهي کي رد ڪرڻ جي باوجود پڳت ڪبير انهن کي هڪ جيتري حد تائين اهم ليکيو ٿي، انهيءَ بنياد تي ٻنهي مذهبن جي عصبيت پسند عالمن جا سائنس سخت اختلاف رهندا ٿي آيا، تڏهن به پاڻ ماڻهن جي پرواهه ڇڏي گيتن ۽ اپديشن وسيلي محبت ۽ انسان دوستيءَ جو پرچار ڪندو آيو. ايتري تائين جو 1495ع ۾ جڏهن سٺ ورهين جي ڄمار ۾ آيو ته هندستان جي متعصب حڪمران ڪندر لودي کيس دربار ۾ گهرائي موت جي سزا جو ڌڙڪو ڏنو پر هن الله لوڪ تي ان جو ڪوبه اثر ڪونه ٿيو.

شاد باش اي عشق خوش سوداي ما،

اي طبيب۔ جمل علت هاي ما!

خوش ره اي خوش خيال عشق! تون ئي اسان جي سڀني دردن جي دوا ثابت ٿيو آهين.

لودين جي عهد حڪومت ۾ رونما ٿيل انهي ذڪر لائق واقعي کي دهراڻيندي ڊاڪٽر محمد اڪرام لکي ٿو: اتر هندستان ۾ اهڙن ڪيترن بزرگن جو ان دور ۾ ظهور ٿيو جن هندن مسلمانن جي عقيدن کي پاڻ ۾ ملائڻ چاهيو ۽ اهڙن فرقن جي شروعات ڪيائون جيڪي ٻنهي مذهبن جي انسان دوست عقيدت جا قائل هئا. انهن بزرگن مان پڳت ڪبير سڀني کان آڳاھون هو. جنهن 1440ع ۾ جنم ورتو ۽ 1518ع ۾ وفات ڪيائين. تذڪره اولياءِ هند ۾ هن کي شيخ ڪبير ڪوري قدس سره لکيو ويو آهي. اها روايت به ملي ٿي ته هي حضرت تقی سهروردي جو خليفو

هو ۽ زماني جي مشاهير مان ٿي گذريو آهي. آئين اڪبري ۾ به پڳت ڪبير جو مختصر احوال ملي ٿو ته هي پنهنجي وقت جو وڏو موحد هو جنهن جي طريقي جي وسعت ۽ نظريه جي بلنديءَ جي ڪري هندو مسلمان ٻئي سائنس عقيدت رکندا هئا. آئين اڪبري جي انهي اختصار مان ظاهر آهي ته اڪبر بادشاهه جي دؤر ۾ پڳت جي ڪافي شهرت هئي ۽ خود بادشاهه سندس فڪر کان ناواقف ڪونه هو تنهن هوندي به ان جي ڪردار کي مسخ ڪري تصوف جي سڄي جدوجهد تي پاڻي ڦيري ”دين الاهي“ جو دنبورو ڪلهي تي کنيائين، ڇاڪاڻ ته پڳت ڪبير جنهن اعليٰ ڪردار جو مالڪ هو تنهن جو مقابلو ڪرڻ اڪبر جي پهچ کان مٿي هو. جيڪڏهن اڪبر بادشاهه جي من ۾ واقعي ڪا سچائي سڄي ها ته هو پڳت ڪبير جي تحريڪ کي اڳتي وڌائي اشوڪ اعظم جيان لائق بنجي ها، پر هڪ حريص بادشاهه جي نصيبن ۾ اهڙي سريلندي ڪٿي. سچ چيو اٿن ته خدا به ڪنهن کي سچائي سڱ ڏيندو آهي. پڳت ڪبير شاعري ۾ رامانند بيراجي کان تربيت ورتي هئي، هندي زبان ۾ هن وٽان ئي عرفان جي بيان جي ابتدا ٿي، تنهن کان پوءِ گرونانڪ (1469-1538ع) سندس تقليد ڪئي.

پڳت ڪبير جو سمورو ڪلام انسان دوستي جي پرچار سان لاڳاپيل آهي، پاڻ هر انهي انڌي اونڌي سوچ ۽ سمجهه جي مخالفت ڪري ٿو جنهن ۾ انسان دشمني جون ڳالهيون ويڇاريون ۽ پڇاريون وڃن ٿيون. پنهنجي مقصد جي منتهي بيان ڪندي هڪ هنڌ چوي ٿو:

سرگن ڪي سوا ڪرونرگن ڪا ڪيا گيان،

نرگن سرگن سي پري تهين همارا ڌيان.

ڪي ذات ته ڪي صفات جي سڌ ۽ سوا لاءِ ستوه ٿا پرين، پر

پنهنجو ڌيان انهي ٻنهي کان اتاهون آهي.

وري ٿو چوي:

جا ڪارن جڳ ديونڊيا، سو توگهت هي مانهن،

پردا ديئا ڀرم ڪا، تاتي سو جهت نانهن.

انسان جنهن شيءِ جي ڳولا ۾ ٿو پٽڪي سان ته منجهس ئي آهي،  
ليڪن گمان جي پردي هٽڻ ڪري اها شيءِ کيس نظر نٿي اچي.

پڳتي جنهن کي الاهي عشق سڏيو وڃي ٿو، ان ۾ نه ته دوزخ جي  
عذاب جو ڊپ هوندو آهي نه وري بهشت جي عشق جي لالچ رهي ٿي. اهو  
عشق خالص عشق آهي جنهن ۾ سواءِ محبوب جي، عاشق کي ڪا طلب  
يا تانگهه ڪانه ٿي رهي، جيئن شاهه لطيف چوي ٿو:

ڪيهي ڪام ڪا پڙي، ٿا اهڙي روش رون،

نڪا دل دوزخ ڏي، نڪي بهشت گهرن،

نڪو ڪم ڪفار سين، نڪا مسلمانن مَن،

اُڀا ائين چون، ته پرين ڪجو پانهنجو.

پڳت ڪبير انهي عشق جي آرزو ڪندي پيو چوي:

پڳتي، مڪتي مانگون نهين، پڳتي دان دي مونهن،

اور ڪوئي ياچون نهين، نندن يا چون تونهن.

مون کي سزا پوڳڻ يا چوٽڪارو ملڻ واري ماري سان ڪو مطلب

ناهي، آءٌ ته رات ڏينهن، منهنجا محبوب توکان توکي پيو مڱان!

انسان دوستي هن لاءِ ايڏي ته اُتم آهي جو چوي ٿو ته اهو ڳڻ جنهن

۾ ناهي تنهن جي پيري فقيري به ڪفر برابر ليکن ڪبي:

ڪبيرا سوئي پير هي جو جاني پير

جو پير پير نه جاني، سو ڪافر بي پير

پڳتي لاءِ پاڻ هي شرط ٿو وجهي ته:

جب لگا نانا جگت ڪا، تب لڳ پڳت نه هوءَ،

ناتا توري هري پڇي، پڳت ڪهاوي سوءَ.

ڪبير چوي ٿو جتي پيار آهي اتي سڀ ڪجهه هوندو جتي پيار

ناهي اُتي سڀ ڪجهه هوندي ڪجهه به نه آهي:

جو گهٽ پريم نه سنجري، سو گهٽ جان مسان،

جيوسي ڪهاڻ لوهار ڪي، سانس ليت بن پاران.



جتي پيار نه سنجري سو گهٽ ڄڻ مساڻ آهي. ان کي ائين سمجهيو وڃي جيئن لوهار جي ڌنڌن، جيڪا ساهه ته کڻي ٿي پر ان ۾ روح آهي ئي ڪين.

وري ٿو چوي:

هري تو جن هيت ڪر ڪر هري جن سي هيت،  
مال ملڪ هري ديت هين، هري جن هر هين ديت.  
هي دوهو پڙهي ڀڳت ڪبير جي شاعراڻي عظمت جو قائل ٿيڻو پوي  
ٿو پاڻ ٿو چوي:

تون خدا سان پلي محبت نه ڪر پر خلق خدا سان ضرور محبت رک. خدا توکي مال ملڪيت ڏيندو ۽ خلق توکي خدا سان ملائيندي.

انساني احساس لفظن جي لباس ۾ اچي شعر بڻجي ٿو پوي اهڙي شعر جو سمورو حسن ان ڳالهه تي انحصار ٿوري ته ان جي بنيادي افاديت جو اصل مقصد ڪهڙو آهي، اهائي خصوصيت ڀڳت ڪبير جي شعر ۽ فڪر مان بکي ٿي:

ڪاسي ڪنڊري ايڪ هي روجل روپ ڪبير.

روجل فقير پڻ ڀڳت ڪبير وانگي هندو مسلمان درويشن وٽان روحاني فيض حاصل ڪيو. جن مان شاهه عنايت جهوڪ وارو ساراه لائق آهي. هڪ روايت موجب روجل فقير جهوڪ ميرانپور ۾ شاهه عنايت جي مزار تي چلي ۾ وڃي ويٺو فارغ ٿيڻ کان پوءِ اندر جي آواز تي درگاهه جي گادي ڏئي شاهه عزت الله جي مريدن ۾ شامل ٿيو. شاهه عزت الله شاهه عنايت جو فرزند هو ۽ وقت جي ولين مان وڏي درجي وارو ليکيو ٿي ويو.

روجل فقير جو ٻيو رهبر ٿرپارڪر جو ڏونگر سي مهراج هو. هي پڻ پنهنجي دور جو ساڌ سنگت وارو وڏو ساڌو ٿي گذريو آهي. پاڻ هندي ٻوليءَ جو ناميارو شاعر پڻ هو. شاهه عنايت جي روحاني صحبت ۽ ڏونگر سي مهراج جي سنگ ۾ روجل تي جيڪو رنگ چڙهيو تنهن جي سونهن سوپيا آجا سوڌي سنڌ ۾ سندس ڪلام وسيلي سرهاڻيون پکيڙيندي رهي ٿي.

روحل فقير جو والد شاهو خان ميان يارمحمد ڪلهوڙي (1701-1719ع) وٽ ملازم رهيو. روحل فقير (1734-1804ع) ميان غلام شاه (1762-1772ع) جي ملازمت ۾ آيو هن ڪلهوڙن جي بادشاهه گري واري زماني (1762-1782ع) جو پورو مشاهدو ڪيو. آخر ملازمت ڇڏي ويراڳي ٿي ويو.

روحل فقير روماني رنگ ۾ اچڻ کان پوءِ پنهنجي حياتيءَ جو گهڻو حصو سير سياحت ۾ گذاريو. جوڌپور کان بيڪانير تائين خوب گهميو ڦريو. جتي به ٿي پهتو اتي سوين ماڻهو سندس روحاني فيض کان سيراب پئي ٿيا. پنهنجي مريدن کي اڪثر جوڳ جي پاڪر ڏيندو هو. ان ڪري جوڳي فقير وڏي حب سان سندس ارادتمنديءَ ۾ داخل ٿيندا رهيا. سير دوران هن جي ملاقات جوڌپور جي راجا بجي سنگهه سان ٿي جنهن جي راضي سان پاڻ ڪجهه وقت جوڌپور ۾ رهي راجا کي صوفي مسلڪ کان واقف ڪيائين. ان لاءِ ”آگر ورتا“ رچيائين. جنهن جي مطالعي مان معلوم ٿئي ٿو ته روحل فقير کي هندو ڌرم ۽ ويدانت جي چڱيءَ پر ڄاڻ هئي. هن جي انهي روحاني ڪمال کي ڏسي راجا سندس معتقدن ۾ شامل ٿيو ۽ کيس جوڌپور ۾ رهي پوڻ لاءِ زور ڀريائين پر هي راضي نه ٿيو.

جوڌپور جي راجا بجي سنگهه (جنهن 1753-1793ع) تائين حڪومت ڪئي) سنڌ جي حڪمران طبقي سان سياسي ناتا هئا، جن جو بنياد عمرڪوٽ جو قلعو ۽ پرڳڻو هو. 1780ع ۾ راجا بجي سنگهه کي ميان عبدالنبي عمرڪوٽ جو آسرو ڏئي مير بحر خان جي قتل لاءِ تيار ڪيو. انهي مقصد واسطي راجا پن رانوڻن کي پنهنجي پاران وڪيل بڻائي ميان عبدالنبي ڏانهن اُماڻيو جن سان ڪي ٻيا ماڻهو به گڏ هئا. رانوڻن سازش موجب هڪ ڏينهن خط پڙهي ٻڌائڻ جي بهاني مير بحرتي اڃانڪ حملو ڪري کيس ماري ڇڏيو. 1787ع ۾ وري ميان عبدالنبي ٽالپور اميرن مير عبدالله پٽ مير بجر خان ۽ ٻين کي دغا سان قتل ڪرايو. ائين هر ڀيري قرآن تي صلح ڪري وري ميرن کي دوڪي سان مارائڻ سبب ملڪ ۾ ميان

عبدالنبي خلاف ماڻهن ۾ ڌڪار پيدا ٿي، نتيجي ۾ نيٺ مير فتح علي خان ٽالپور کي چڱمڙسيءَ جي پڳ ٻڌرائي سڀني مير لشڪر گڏ ڪري جنگ جي تياريءَ ۾ لڳي ويا. هوڏانهن جو ميان عبدالنبي کي اچي سر جي لڳي تنهن عمرڪوٽ وارو قلعو ۽ پرڳڻو جوڌپور جي راجا بجي سنگهه کي ڏئي ڪانئس مدد طلب ڪئي.

راجا بجي سنگهه پنهنجي سپه سالار ڦلو سنگهه جي اڳواڻي ۾ سنڌ ڏانهن پنهنجو لشڪر چاڙهي موڪليو پر ميان عبدالنبي وٽان هن کي پورو خرچ نه مليو سو هو جيئن آيو هو تيئن واپس هليو ويو. ميان عبدالنبي نيٺ جنگ هارائي ويٺو ۽ مير فتح علي خان ٽالپر سنڌ جي گادي والاري ۽ ميان عبدالنبي ميرن سان ڦٽائي روھ رلا مٿي ڪلا ٿي ويو.

سنڌ جيڪا مغل شاهي جي طويل تباهيءَ کان پوءِ 1836ع ڌاري پنهنجي پيرن تي بيهڻ جهڙي ٿي ته نادر شاه 1739ع ۾ مٿان ڪاهي آيو. وري ماڻهن اڃا ساھ مس پٽيو ته 1754ع ۾ احمد شاه ابدالي اچي ڦهري ڪارروائي ڪئي، تنهن کان پوءِ ان جي پوين ٻيگهي مچائي ڏني، پڇاڙي ۾ مدد خان پٺاڻ 1780ع ڌاري هڻي هنڌ ڪري ڇڏيو.

روح فقير پنهنجي اکين ۽ ڪنن اهي سڀئي ڪلور ٻڌندو ۽ ڏسندو ٿي آيو خاص ڪري شاه عنايت وارو سانحو (جيڪو سندس ويجهپ ۾ ٿي گذريو هو ۽ ان جا ڪيئي اکين ڏنا شاهد موجود هئا) جڏهن هن اهل دل درويش جي ڌيان تي آيو ته اڳو پوءِ لاڳاپا لاهي دنيا کي ڪوڙو واءِ ۽ ڪوڙي وڏائي چئي ترڪ ڪري وڃي ڪنڊڙيءَ ۾ ڪنڊ وسائي ويهي رهيو.

شاه عنايت (1656-1718ع) مغل شاهي جي منظم ڪيل جاگيرداري نظام ۽ ان جي نمائندي ميان يارمحمد ۽ مغل شاهي چاڙهي نواب اعظم خان جي جبر خلاف بغاوت ڪندي ”الارض لله“ زمين خدا جي آهي، جو کيڙي سو کائي، جو نعرو هنيو ته مٿس ڪفر جون فتوائون جاري ڪرائي کيس قتل جو سزاوار ٺهرايو ويو. مقالات الشعراء جي لکت

موجب: ميان يارمحمد ڪلهوڙو سنڌ جا سڀئي زميندار ۽ انهن جا حمايتي جيڪي اڳ ۾ ئي شاهه عنايت ۽ سندس فقيرن تي سڙيا ويٺا هئا، تن مغل شاهي جي چرچ تي ماکڙ وانگي مڙي سڙي اچي مٿانن چڙهائي ڪئي. نيٺ شاهه عنايت قيد ٿيڻ کان پوءِ مغلن هٿان صلح جي بهاني قتل ٿي ويو.

روحل فقير جي گوشي نشيني ڏانهن رغبت الاهي عشق واري رمز موجب هئي، جيئن ان جي وسيلي خلق کي روشنيءَ جي راهه ڏيکاري سگهجي.

پاڻ چوي ٿو:

نہ مون جن نہ ڪن، اچي عشق اُٿاريو اوچتو  
روحل چوي روح ۾، محبت محبوبين،  
سيئي سڄڻ آيا، تات جنين جي ٿن،  
جيءَ جڙ لڳي جن، سي سائين ميڙيا سپرين.

هن کي دنيا جي ڌنوانن يا ودوانن جي درس ۽ دور سان ڪاٺي به دلچسپي ڪانه هئي، ڇاڪاڻ ته هن کي پروڙ پئجي چڪي هئي ته پتڪيل انسانيت کي نه ته دنيا جو دور ڪا تسلي ۽ تسڪين ڏياري سگهي ٿو نه وري پراڻيون ڪٿائون انساني زندگيءَ کي سنوارڻ سڌارڻ لاءِ ڪو ڪم ڏئي ٿيون سگهن:

پڙهيا بيد ڪتيب جا، ٿا ڏين ڏورانهان ڏس،  
سي سچ سچائڻ ڪينڪي، موهيا پسي مس،  
رات ڏينهان روحل چوي، رڙهي تنهن کي رس،  
پير پريان جو پس، نائي ڪنڌ قلوب ۾.

سڀني صوفين وانگي روحل به اها تلقين ٿو ڪري ته پنهنجي اندر ۾ ليئو پائي اول پاڻ پسڻ کڻي، تنهن کان پوءِ پنهنجي رب ڏانهن رجوع ٿيڻ جي ڪجي، جيستائين انسان پاڻ تائين نٿو رسي، تيستائين پنهنجي رب

ڪي لهي نٿو سگهي. رب جيڪو حيات ۽ ڪائنات جو اصل مقصد آهي  
جنهن کي نيڪي ۽ سچائي جو سرچشمو چئجي ٿو.

روحل فقير جو عزيز مراد فقير جيڪو سندس رڱ ۾ رڱجي لال ٿيو  
تنهن به اها راه اختيار ڪندي ورجايو ته:

دوست جنهن دا دل وچ هوي،

سا ڪيون ڳليان ڳولي.

لونه لونه ڏي وچ جهوڪ جنهن ڏي،

سا مول نه ٿيو اولي.

مراد فقير پنهنجي المستيءَ ۾ اچي خود روحل فقير جا راز پٿرا  
ڪري ڇڏيا. روحل جيڪي ڳالهيون رمز ۾ چئي ويو مراد فقير اهي پٿري  
پٽ چئي ڏنيون. هن الستي عشق سان گڏ حب الوطني جو بيان به برملا  
ڪري ڏنو:

ڪيتيءَ يار ڏي نال جو وعيد ميان،

درد والي رک ديد ميان!

وحدت ڏي وٽجاري هوڪي ڏيندي،

در در هل من مزيد ميان!

سر ڏي سودي سورهيه ڪريندي،

سوري چڙه ٿيون شهيد ميان!

ماري مدد ڪون مل ڪر دور ڪرو

چوڙ وڃي يهودي يزيد ميان!

حب الوطن ايمان اسان ڏا،

مراد ڪرين اها عيد ميان!

شاعري انسان ۾ خودشناسي پيدا ڪري ان کي خداشناس بڻائي،  
سندس اخلاق جي اصلاح جو اپاءُ ڪري ٿي. ڪنهن ڏاهي چواڻي:  
جيڪڏهن انسان هڪٻئي کان نفرت ڪن ٿا ۽ هڪٻئي جي گلا غيبت

۾ پون ٿا، هڪٻئي کي ڏکڻين ٿا ۽ هڪٻئي کي غلام بڻائن ٿا، تنهن جو ڪارڻ اهو ناهي ته هنن جي هدايت لاءِ مٿاهين قسم جا قاعدا موجود نه آهن. اهي قاعدا ته برابر هلندا اچن ٿا، پر شاعري پنهنجي خاص طريقي کان ڪم وٺي انسان لاءِ هزارين فڪر ۽ ويچار پيدا ڪري سندس ذهن کي بيداري ۽ قلبي وسعت بخشي ٿي. شاعري حيات ۽ ڪائنات جي حسن جمال کي بي نقاب ڪري ڏنل وائيل شين کي نئين ندرت سان پيش ڪري ٿي. هي جيڪي چيزون تخليق ڪندي آهي اهي ماڻهن جي دلين ۾ بلند اصولن ۽ نيڪ سيرتن جون روشنيون اپائي ٿيون ڇڏين.

اخلاق جو اصلي سرچشمو محبت آهي، يعني پنهنجي حبدنڊيءَ کان ٻاهر نڪري پنهنجو پاڻ کي حسن جي مظاهر سان (پوءِ اهو حسن کي ڪٿي ڪهڙي به حالت يا صورت ۾ هجي) هڪ ڪرڻ کي ئي محبت چئي سگهجي ٿو. وڏي درجي واري نيڪي به اهو شخص ڪري سگهي ٿو جيڪو وڏي خيال جو مالڪ هوندو جنهن ۾ ٻين جي احساس ۽ جذبي کي سمجهڻ جي پوري صلاحيت هوندي، ۽ جيڪو سڄي انسانذات جي دک درد کي پنهنجو دک درد بڻائڻ وارو هوندو. حيات ۽ ڪائنات کي محبت کان محروم رکڻ ڪنهن به صورت ۾ درست نه آهي، ڇاڪاڻ ته اهي ٻئي حقيقي خالق جي فني ڪمال جو شاهڪار آهن، ان ڪري انهن سان محبت ڪرڻ گویا خدا سان محبت ڪرڻ آهي. انسان کي حيات ۽ ڪائنات جي هر انهي شيءِ بلڪ انسان جي فني تخليق سان محبت ڪرڻ گهرجي جيڪا حقيقت ۾ ڪائنات جي حسن جي ترجماني ڪري ٿي.

روح فقير ۽ سندس قبيلي جي شاعرن انهيءَ ئي اصول تي هلي پنهنجي شعر ۽ فڪر کي بني نوع انسان جي ڀلائي ۽ رهنمائي لاءِ اڳيان آندو آهي. هنن مان دريا خان، روح فقير کان پوءِ خاص ڪري ساراهڻ جوڳو آهي، جنهن جو ڪلام حيات ۽ ڪائنات جي حسن کي عشق جي نگاهه سان نهاريندو نقاب کان بي نقاب ڪندو سڌ پڙائي جي صورت ۾ اوري پري پکڙندو وڃي ٿو. دنيا جي بيراڳين مان دريا خان به هڪ وڏو

ويراڳي هو جنهن خلق ۽ خدا جي محبت ۾ پاڻ موڪيو بيرايڳن جا منشا  
بابت پاڻ چوي ٿو:

عام ڪان پاسي ٿا اورين،  
آهن بر ۾ مڙهيون تن بيرايڳن جون.  
سڪ تنهين کي سور برابر ڏيه ڏڪن جو ٿا ڏورين،  
درد وايون تن ويراڳين جون.  
وجهي منهن مونن ۾، ڏيل اندر ۾ ٿا ڌارين،  
هٿ سونهين سمرڻيون تن سامين جون.  
دونهين پاسي دادلا، پاڻ پريون سي ٿا پورين،  
ڪن جهد جفائون تن اوجاڳن جون.  
دريخان سامي سڪ مان، گهورڪيو سر ٿا گهورين،  
آهن طلبون سچيون تن تياڳين جون.  
انسان ۾ جيڪڏهن بيداريءَ جو مادو آهي ته هو ان جي آڌار تي سڀڪجهه  
ڪري سگهي ٿو. خطرن سان منهن ڏيڻ پنهنجو پاڻ بابت ڌيان ڪرڻ، ٻئي جي  
دڪ درد جو ويچار ڪرڻ اهي سڀ ڳالهيون تيستائين نه ٿيون نصيب ٿين  
جيستائين انسان بيدار نٿو ٿئي. دريا خان چوي ٿو:

اٿي جاڳ جاني پوئي ڪل ڪاٿي  
جاڳڻ ريءَ جاليندين، سون ۾ سدائي.  
درد دونس جن کي، مليو محب تن کي،  
هميشه هيڪاندي جن ننڊڙي ڦٽائي.  
سڪن ساريون راتيون، جهڏئون پائن جهاتيون،  
اصل عاشقن جي آهي آءِ اهائي.  
مچي مرد ٿي تون، پيالو درد بي تون،  
چڏي ساءِ سمهڻ جو ڪر وهڻ سان وفائي.  
دريخان دير چڏ، سگهو پاڻ گوندر گڏ،  
وڃي ٿي ويسر ۾ عمر سڀ اجائي.

دريا خان جي سنڌ تي شاعري فڪر جي گهرائي ۽ خيال جي سچائي جي ڪري سنڌي ٻولي ۽ ثقافت جي سونهن آهي. سندس سادي پر مٿاهين خيال واري ڪافي آءُ ڪانگا ڪر ڳالھ، جڏهن ڀڳت ڪنور جي سريلي آلاپ ۾ ٻڌجي ٿي ته سوچ جي اونھائي ۾ وڃي من پريان جي پار پهچي ٿو.

سنڌي سرائڪي ٻئي ٻوليون ٻارن ۾ جاڙيون پينر آهن، سنڌ ۾ جتي سنڌيءَ کي وڏي چاهه ساھ ڳالھايو پڙھيو ۽ لکيو وڃي ٿو اتي سرائڪي به مان محبت لائق سمجھي وڃي ٿي. خاص ڪري سرائڪي ڪلام ته ڄڻ سڀ جي ساھ سان سانڍيل ٿوري.

دريا خان سنڌيءَ سان گڏ سرائڪيءَ کي به پنهنجي شاعريءَ وسيلي نڀايو ۽ نوازيو آهي. مجلسي زندگي جنهن پيار محبت، علم عقيدت، عقل فضيلت ۽ فڪر هدايت جي راز نياز سان سينگاري وڃي ٿي، تنهن ۾ هتان جو غريب، امير ڀاڱي ڀاڱو رهي ٿو هر ڪنهن وٽ پنهنجي وٽ آهرا رنگيني ڏئي ويندي آهي. ڇاڪاڻ ته ان جي وسيلي دوستي ۽ وفاداري سان گڏ سماجي خير خواهي، شادي غمي، ڪسي پڪي وغيره جي چيڙي نيري ٿيندي رهي ٿي. هي ڄڻ هڪڙي قسم جي تهذيبي تربيت جو باعث بڻجي ٿي. هتي سنڌي سرائڪيءَ جي نه فقط شاعري بلڪ ٽوٽڪا، ٺوٺا ۽ ٻيا ٺاٺا به پيا هلندا آهن، جنهن ڪري مجلسي زندگي هيڪاري وڌيڪ دلچسپ ۽ ضروري لڳندي آهي.

دريا خان جنهن محبت سان سنڌي زبان کي پنهنجي فڪر ۽ خيال جو خزانو بڻايو آهي. اتي سرائڪيءَ کي به چڱو سرمايو عطا ڪيو اٿائين، هيٺين ڪافيءَ ۾ سندس سرمستي جو اظهار ڪيڏو نه اٿاهون پيو لڳي:

ميخاني وچ مليا يارا وڃڻ مستين ڪهڙا مقصد!

هٿتون هادي دي جام پيتوسي.

ڪهنا ڪيف ڪلال ڏٺوسي.

تنهن دي خاص خمار تالان ڪيتوسي تسبي تهجد!

مک محراب سڄڻ دي صورت،

ٻي رنگ موهيا موهن مورت.



بتخاني ڪنون ٿي بيزار من مڪان ٿيوسي مسجد!

ميخاني وچ مست ٿيوسي،

سجد، سجائڻ پل ڳيوسي.

آپ اتي آيا اعتبار ورد وظيفي ٿيوسي سڀ ردا

دريا خان آپ وچون نا آئين،

حق سڃاڻين غير نه تائين.

ڪول اڪيان ته هوئي، اظهار الله مرشد هڪائي هڪ خدا

اهڙيءَ طرح سرائڪيءَ ۾ هڪ ٻي ڪافي به لاجواب آهي:

دل خانہ هي خود خانہ، جي تون اپڻا آپ سڃاڻين

1- جوئي ظاهر سوئي باطن، بيشڪ يار يگانہ،

جي تون آپ وچون نا آئين.....

2- جوئي عاشق سوئي معشوق، اي، او سڀ بهانہ

جي تون ڄاڻ ائين ڪونه ڄاڻين.....

3. ڪل شيءِ محيط هم وچ، سڀ صورت هڪ معنيٰ

الا، جلوي جوت سماڻي.....

4. درياخان مڙڻ محال هوندا، هي صاحب دانا بيٺا

بدويندي هي دل وهائي.....

سنڌي سرائڪي جيان دريا خان جي هندي شاعري به وڏي ڪمال

واري آهي، ڪيترن شاعرن سنڌي سرائڪي کان علاوه هندي ۾ پڻ بهترين

شاعري ڪئي آهي، جهڙوڪ هن خاندان جا مڙئي شاعر ۽ سندن همعصر

صوفي جلال فقير ٽالپور وغيره جن جو پنهنجو پنهنجو انداز آهي، ان مان

پتو پوي ٿو ته هندي شاعري ۾ سنڌي شاعرن جو اهو ڪمال هندي شاعرن

جي انهي ذڪر ۽ فلسفي جي رتيءَ واري رهاڻ جي نتيجي ۾ اڀريو جيڪو

صدين کان برصغير جي ڪنڊ ڪڙڇ تائين وسعت پذير ٿيندو رهيو. هتي

نموني طور ڪجهه هندي ڪلام ڏجي ٿو:

پریم ٻارڪو ڪوئي نھین جو ڪري پریم پڇان  
دريا خان جس گھر پریم هی، وهان هی پر گھت گیان

پریم پریمی ڪھین نھین، جي ڪري پریم ڌيان  
”دريا خان“ جس گھر پریم بسی، اس گھر بسی پڳوان  
هن ٻاري ۾ دریا خان جي هندي سي حرفي انهي ڪماليت واري  
آهي جيڪا ڪماليت پڳت ڪبير ۽ تلسي داس جي هندي ڪلام ۾  
ملي ٿي، وڌيڪ تعريف اچائي ٿيندي، پڙهندڙ پاڻ ئي پڙهي فيصلو ڪري  
سگهن ٿا:

زار: رام ڪي نام سون، جن ڪي لاڳي ڀريت  
دريا خان اس سنسار مون؛ هاري ليوي جيت  
ل لا: لاڳي پریم ڪي، ڪڙڪ ڪليجي آءُ  
تجھ بن میرا ڪونھین، ڪون مٿاوي گھاءُ  
نه نا: نرڪي نرڪ سون، سرگي سرگ سماءُ  
جس ڪي جیسی چاڪري، ویسی کتي ڪماءُ.

سڄي سي حرفي نه رڳو پڙهي، ويڙهي رکڻ جي پرياد ڪري پرهم ڦٽيءَ جو  
جهونگارڻ جهڙي آهي، جنهن مان انسان ڪي اهو لاپ ملي ٿو جو زماني جي  
خفن کان آجوتي دل جو سڪون حاصل ڪري سگهي ٿو.

دريا خان جو سڄو ڪلام هونءَ ته سون آهي، پر هي ڪافيون ڄڻ  
سون تي سهاڳي جٿان پيون لڳن، جن مان هڪ ۾ انسان ڪي خودشناسي  
جي تلقين ڪيل آهي ته ٻيءَ ۾ زندگي لاءِ جدوجهد جو سبق ملي ٿو:  
(1) ٻاهريان تيرت چو پچائين،

منهن مڙهيءَ دل پنهنجي نه پائين.

سخت سفر چو ڪوشش ڪرين ٿو

پٿر پاڻيءَ ڌيان ڌرين ٿو

روح پنهنجي ۾ نه رام ريجهائين.

گيتا پارس پاڳ پڙهين ٿو  
 پنهنجو پاڻ ۾ ڪين ڪڙهين ٿو  
 ڪٿا ڪيو پيو لوڪ سٿائين.  
 پو ٿيو پستڪ بيد بتائين،  
 من پنهنجو پر ٻوڏ نه لائين،  
 ٿو ٿا گيان پيو ٻين کي ٻڌائين.  
 دريا خان در در رکج درياري،  
 عشق سهڻي بن ڪوڙي تازي،  
 پنهنجو پاڻ ۾ ڇو نه سمائين.  
 (2) مون کي ڏونگر ڏس ڏين ٿا،  
 ڙي آيل آديسين جو.  
 ٻڌي سندرو سچ جو  
 جي ڪهن سي لهن ٿا.  
 ووڏ ته لهن ور کي،  
 چاري هينءَ چون ٿا.  
 چڙهي جبل چوٽ تي،  
 مٿان روح رمڻ ٿا.  
 دريا خان عين عجيب ري،  
 روئڻان ڪين رهن ٿا.

پڇاڙيءَ ۾ دريا خان جو هڪ دوهو پيش ڪري هي مهاڳ پڇاڙيءَ  
 تي پهچائجي ٿو هن دوهي ۾ سچن صوفين بابت بلڪل صحيح حقيقت  
 پيش ڪئي وئي آهي:

ڏسي الڪ اکين سان، ٿيا سدا خوشحال،  
 ڪايا مايا ڪل جو چڏيائون سڀ خيال.

”درياهان“ دلبر سان، اهي سدا رهن ناهل،

ڌرم راءِ ۽ ڪال، ڏورئون تن ڏنڊوت ڪري.

هن ڪتاب جي ترتيب صرف دريا خان ڪنڊڙيءَ واري جي ڪلام تائين محدود هئي، پر وچ ۾ هن جي خاندان جي ٻين شاعرن، معتقدن ۽ همعصرن سان گڏ همنام دريا خان ڪلهوڙي جو ڪلام به ملي ويو جنهن کي مختصر نموني مناسب سمجهي قلمبند ڪرڻو پيو.

ڪتاب جي ترتيب ۾ جن دوستن ۽ بزرگن جون محنتون منهنجي ڪم آيون، تن مان خادم حسين عباسي خيرپور ميرس، مير مظفر ٽالپور، ٽالپور وڏا، تاج جويو، تنوير عباسي ۽ لعل بخش ٽالپور ۽ ڊاڪٽر نواز علي شوق جا دل سان ٿورا مڃيان ٿو. تنهن سان گڏ سنڌي علم ادب جي سينگار سائين عبدالڪريم سنديلي جا به لک احسان، جنهن نوازش جي نظر سان نيازمند ڪي نوازيو.

فقط

**نياز همايوني**

اردو سائنس بورڊ، حيدرآباد، سنڌ

11.12.1980ع



## سنتي ڪلام



## بيت سرجوڳ

ڏيئي جفا جند ڪي، ٿا لاهوتي لڇن  
سر ڏئي سرها ٿيا، سڄي سڪ سڄن  
اندر آڏوتين جي، ٿا دل ۾ دود دڪن  
اهي پروانا پڇن، دونهن جي ڌنڌڪار ۾.

جيئري جيءَ جدا ڪري، لالڻ لاءِ لڇن  
اورڻ آين پاڻ ۾ ڪنهن سان ڪين ڪڇن  
پاڻئون سي پري ٿيا، ڪسڪيو ڪين ڪهن  
اهي پورب ڪوه پڇن، جي نانگا نينهن نوازا.

جوڳي هن جهان جا، مايا پيا ميڙين  
پسي ڪاڻ پٽيل ٿا، جهت وجهي جهيڙين  
ٿوري بيڪ بڪيا رسي، ٿڪا ٿيا ڦيرين  
پاڻ ته بيائي ۾ ٻڏا، پر گر ڪي به ٿا ٻوڙين  
”دريا خان“ کيڙسائي کيڙين جنهن جو  
سلو سائو نه ٿئي.

جوڳي هن جهان جا، مايا ۾ موڙ ها  
ڪسي ڪرڪي ڪروڙ ۾، ٿا ڪنڌ وجهن ڪوڙا  
دغابازيءَ جا دل ۾، ٻڏن ٿا ٻوڙا  
چڙي لڙهه لباس جي، جتون ڪن جهوڙا  
”دريا خان“ ڪٽي خوار ٿيا، مٽي تي موڙا  
پوءِ ڪهڻيءَ جا ڪوڙا، چو ٿو ڪن  
چيرائين ڪاڀري!



الڪ سان الڪ ٿيا، صاف صفا سامي  
 پڇي پروانن جان، ڪيه ٿيا ڪامي  
 معنيٰ ۾ محيط ٿيا، اکر ڇڏي عامي  
 ويڙن وهم وهامي، ”دريا خان“ ڏوئي سندا.

سامي سورن سامهان، ٿا آديسي آڇن  
 گر سان گڏجي گودڙيا، اونهي رمز رچين  
 پاڻ ويڃائي پرليءَ جٺ جسي سان ڪن  
 موتو منجهه محيط ٿيا، سي موني ڪين ملن  
 ”دريا خان“ آگ عشق جي، ٻارڻ منجهه ٻرن  
 ٻيو سڀ ڏيئي ٻن، وڃي نانگا گڏيا ناٺ ڪي.

دونهين جي ڌنڌڪار تي، ٿامس سمرٿيون سورين  
 سنگيتون سامي سيل جون، ڇت اندر چورين  
 وجهي منهن مونن ۾، اونڌي ڪنڌ اورين  
 ”دريا خان“ خيال خوديءَ جا، قلب منجهان ڪورين  
 جي ڏيل اندر ڏورين، سي ويراڳي وصال ٿيا.

ويراڳي وصال ٿيا، وره منجهه ويا  
 بابو بديهي ٿيا، پاڻهون پري پيا  
 ”دريا خان“ خيال ڪنيا، تن خوديءَ جي خال کان.

نانگا گڏجي ناٺ ڪي، پاڻهون پري پيا  
 تن جوڳين جوڳ جُهار جا، سڀئي وهم ويا  
 خودي ڪاٿي ڪيه ٿيا، سي مڙن ڪين ميا  
 تن سدا سک ٿيا، جن جيئري جيءَ جدا ڪيو.

نانگا نينهن نوازا، ٿيا سنمڪ سناسي  
تن ۾ جن تيرت ڪيا، سي ڪوه پڇن ڪاسي  
تڪيا ڇڏي طمع جا، ٿيا وحدت جا واسي  
”دريا خان“ ننگ ناموس کان، پيا پري پياسي  
اهي عابد آباسي، وڃي الڪ سان الڪ ٿيا.

ڪن چيرائي ڪاڙهي، ٿئين پنڻ لعي پورو  
ڪڍيءَ ڪين قلوب مان، خوديءَ جو ڪورو  
جي سامي هئين سوڍو ته قريئون وڃ نه ڪاڙهي.

وحدت سندي ويڙهه ۾، ڪئي جوڳين جوءَ  
تتي ڪيائون تڪيا، جتي هان نه ڪا هوءَ  
وڃي ات پيا اوءِ، جت هڻڻ سڀ هجي ويو.

هڻڻ سڀ هجي ويو ٿيا حيرت ۾ حيران  
مازاغ البصر وما تغني، آڳي ڪيو احسان  
”دريا خان“ ري سبحان، ات ڪين ڏنائون ڪي پيو.

ڳل تمائون گودڙيون، سهڻي سونهن سندان  
”دريا خان“ آسڻ انهن جا، ڏوريان ڪين ڏسان  
ووڙيندي وتان، دل ته دلبر هٿ ۾.

جي پسڻ کان پاسي هيا، سي مون ٿيڙا سيڻ  
راتيون ڏينهان تن جا، ٿير ورونهان ويڻ  
بين جون خوشيون ڪيڻ، منهنجو جيءُ جڪي تن جوڳئين.

## سر سهڻي

سانپر جي ساهڙ جا، منجهه وجود وڃن  
چڻ چڻ تن چڙن جي، وڌو روح رڳن  
توڪل ترهو جن کي، سي سر جو سانگ نه ڪن  
”دريا خان“ دور درياهه ۾، گهڙو ڪين ڪئن  
جي ميهه ميهه ڪن، سي نه ٻڌنديون ٻار ۾.

سانپر جي ساهڙ جا، منجهه سرير سُرَن  
واڃت ڪيو وجود ۾، ٻاهر ڪين ٻُرَن  
اچو سور چرن، ته نڪو ساهڙ نه ڪا سهڻي.

هڪ چونگار چڙن جي، ٻيو سمهڻ نه ڏين سور  
”دريا خان“ مام ميهارجي، ڪئي چوڻي تائين چور  
دلو ڪيائين دور واڙ تنهن کي وڪ ٿيو.

نڪو تر هو تار ۾، نه ڪا سيٺه ساڻ  
ميهه جنهن کي من ۾، سا گهوريو گهوري پاڻ  
تن ڪنڌيءَ ڪانهي ڪاڻ، پٽن سي نه پڇنديون.

نه ڪو ترهو تار ۾، نه ڪو ڪپر ڪانهن  
جي مران ته مان ٿئي، من مرون ڪائن مانهن  
ڪهڙي ڪريان دانهن، ساهڙ ترهو ساڻ مون.

ڪي ٻيلاڪي ٻيٽ، ڪي واڙ ڪي ڪنڌيون  
نه ڪو در درياهه کي، لس وهي ٿو ليٽ  
ريءَ وسيلي ڏيٽ، ٿيندي مون ميهه سين.

سانڀر جي ساهڙ جا، ٻيلي پاس ٻُرن  
اچي ويهن ڪين وٿاڻ تي، نڪي گاهه گهرن  
اچيو سور چرن، مينهون تنهن ميهار جون.

نه ڪو ترهو تار ۾، گهيڙئون ڪين گهڙي  
”دريا خان“ دور درياه جو ڏسي ڪين ڏري  
ساو چئون ڪين وري، ميهار جنهن کي من ۾.

### سر سسئي

”دريا خان“ ڪنهن سان ڪانه ڪئي نمائيءَ نسبت  
پاڻان پاسي ٿي ڏسي، جوءَ مڙئي جت  
پنهنوءَ سان پهت، هيو انگ اڳيئي لکيو.

سوئي اکر سسئي، سوئي اکر سک  
”دريا خان“ ۾ جهان پاڻ ۾ ته آهي هڪوئي هڪ  
لوڪان ڪري لک، ٿيو پنهنجو اولي پڌرو.

پاڻ ويڃائي ۾ ڪي، سوجهج منجهه سرير  
هو جو پنهنجان منجهه پساه ٿي، سو باطن منجهه بصير  
”دريا خان“ سک سميع جي، ڪئي اندر منجهه اڪير  
هو جو ناظر منجهه نظير، تنهن کي ڏوريان ڏور چو؟

سائي صورت سسئي، سائي صورت ڏير  
هاريءَ هڻڻ چڏيو نه ڪو ويري وير  
پسج پنهنوءَ پير نائي ڪنڌ قلوب ۾.

سائي صورت سسئي، سائي صورت سور  
چڙي صورت صاف ٿي، مخفيءَ ۾ منظور  
”دريا خان“ ڏس نه ڏور پنهنون پسج پاڻ ۾.

سائي صورت سسئي، سائي صورت جت  
وس ويچاريءَ ڪونه ڪو ماري جا محبت  
”دريا خان“ پيٽس پرس سان، نمائيءَ نسبت  
هلي سان همت، وڃي ويجهي ٿي وٽڪار ڪي.

سوئي اکر سسئي، سوئي اکر سور  
مخفيءَ جو مذڪور ٿيو پنهنون اولي پٿرو.

سو ويري سو واهرو سو ڏونگر سو ڏک  
ڏکن منجهان سک، ٿيو پنهنون اولي پٿرو.

جيئن جيئن ڏسن اڪيون، تئن تئن پرين ڏور  
”دريا خان“ ارني آه، سين، سڙيو سينا طور  
صورت ۾ جو سور سو سڀني منجهه سمائيو.

”دريا خان“ پسان پاڻ ۾، جان پنهنونءَ جو پير  
تہ نہ ڪا صورت سسئي، نہ ڪو ڏونگر ڏير  
هن پوريءَ سندو پير نسروئي نينهن ٿيو.

### سر ليلان

آٿڻ سڀ اندوه ٿيو رنو ليلان رت  
”دريا خان“ ڪوڙيون ڪيتريون، هار هٿن ٿيون هٿ  
هن مٿي سنڌي مت، پير لک پلائيون.

آڻڻ سڀ اندوه ٿيو لڏيو ليلان هارڻ  
 ”دريا خان“ ڪوڙيون ڪيتريون موهيون مٽي مارڻ  
 ڄام چنيسر ساڻ، هاري هار نه مٽيان

آڻڻ سڀ اندوه ٿيو مڙيوئي ماتامُ  
 هاري انهيءَ هار تي، ڄاڻ وڃايو ڄام  
 ”دريا خان“ ڪوڙيون ڪيتريون، هارايون تنهن هار  
 هن مٽي سنڌي مام، لکن منجهان ڪو لهي.

نه هي اُهي اڪيون، جي ڏسن اُهي ڏيه  
 ڏسنديون سي ساڻيه، جت ناه بنا پيو ناه ڪي.

### متفرقه بيت

نالو سنڌءِ ناه ۾، وٿان جان ويهي  
 ته نڪو آدم آدمي، نڪي اسين ئي  
 اسين ڳولائو جن جا، سي پڻ اسين ئي  
 ”دريا خان“ ان عجيب جي، ڳالهه ڪريان ڪيهي  
 ڏنم سي ڏيهي، جي پسڻ کان پري هيا.

عاشق وڌجي اڌ ٿيا، سي وجودئون ويا  
 تهان پوءِ پيا، جت نهايت ناه ڪا.

رڪي سر سنداڻ تي، ڪوري منجهه ڪڇيج  
 واڄت وڏائڻ جا، مٽي سر سٽيج  
 ”دريا خان“ آڳ عشق جي، ٻارڻ منجهه ٻريج  
 تهان پوءِ پهيج، ڳالهه پريان جي ڳجهه جي.

ريءَ نڪتي ناهي، ڇها سپرينءَ جي  
وهي انگ وجود تان، لاسين ڇڏ لاهي  
”دريا خان“ اکر ڪٽ اهي، ته پسين منهن محبوب جو.

”دريا خان“ پٽلاءِ پر جو، جڏهن ڪن پيو  
اڪيون تنهن عجيب ۾، ٻجهن ڪين پيو  
هجي تن ويو هيئنڙو تنهن حيرت ۾.

نالو سندءِ ناه ۾، پسڻ پسارو  
امر اشارو هي پڻ آهي هن جو.

بنا نالي سپرين، آهي نالي ٺاهوڪو  
جيڪي اوهان ڏٺو سا تان صورت صفت جي.

صورت نانءُ صفت جو مورت مثل نه ڪو  
جيڪي اوهان ڏٺو سو سڀ سارو صفت جي.

ڏسڻ ريءَ ڏسن، صورت سپرينءَ جي  
اڪيون رت رڻن، اچيو تنهن عجيب ليءَ.

نڪو ماضي ميجان، نڪا صبح سار  
”دريا خان“ پر پچار نهي منجهه نئين ٿي.

پڌر پيئون جي، آهي ور تنين کي ويجهڙو  
ڪانڌ نه پاسي جي، سي هليون حجابن ۾.

دل تہ دلبر هٿ ۾، ٻئي ٿول ويا  
تهان پوءِ پيا، اولانبا تنهن عشق جا.

الله جي اڏاڻيا، مٺا سي مردود  
”دريا خان“ وسهي صفت لکي، واقع منجهه وجود  
بنا سر سجود، آڃا آگاهون ٿيو.

سو ويري سو واهرو سو ڏونگر سو ڏير  
ڪپيريءَ جو پير ٿيو پنهن اولي پڌرو.

جيئن جيئن وساريان، تيئن تيئن پرين پڌرا  
”دريا خان“ عهدون اڳي جي هيا سي سڀئي ساريان  
وڃي نهيان، آءُ نه ڄاڻان ڳڻ ڪي.

نالو سندن نانهن ۾، نانه به نمونو  
نفي ۽ اثبات کان، اڃا پنڌ اونهو  
”دريا خان“ آءُ عهد کان جوڳي پسن جهونو  
هي ڪات اهو ڪهنو جنهن عاشق اڏو اڌ ڪي.

نالو سندن ناه ۾، پسڻ ڪر پاسي  
وحدت کي واسي، رکج سر سنداڻ تي.

بنا صورت سوجهه، مورت جا محبوب جي  
چڏ نمونو نانه ۾، ڪاهوڙي ٿي ڪوڄ  
هي اکر چڏ آبهجهه، معنيٰ ۾ محيط ٿي.

جيڪي ڏنر ڪالهه، آڃ نه اهي وسهان  
نه ڪو استقبال، نه ڪو ماضي مڃيان.



نہ ڪا ذات صفات، نالو مٿس نانه ڪو  
 ”دريا خان“ پر جهان پاڻ ۾، نہ ڪا وائي وات  
 هڪ اڏي پيو ڪات، اڳيون آهي اُن جي.

بيجل ٻولي ڪينڪي، تندون تنوارين  
 مون کي ٿيون مارين، معمائون مڱڻهار جون.

اولانبا تنهن عشق جا، اندر ۾ آهين  
 ”دريا خان“ لوسي لوهي جي، ڪوريءَ ۾ کائين  
 آڱ نہ اُجهائين، ٻارن ٿا ٻيڻي ڪيون.

نہ ڪو ماڳ مٽيءَ جو نہ ڪو ديس نہ ويس  
 بنا ڏسڻ ڏيس، ڏسين جي ڏسڻ کي.

ڏسي الڪ اکين سان، ٿيا سدا خوشحال  
 ڪايا مايا ڪل جو چڏيائون سڀ خيال  
 ”دريا خان“ دلبر سان اهي سدا رهن نهال  
 ڌرم راءِ ۽ ڪال، ڏورئون تن ڏنڊوت ڪري.

دوستي ”دريا خان“ چوي، ڪوڙن سين ڪيهي  
 اسين پيا ريڙهيون ريج ڏي، هو سڪيءَ ڏي پيئي  
 چئي چڪاسون ڪيترو ڏهنائون ڏيئي  
 جن کي پاڻان ناپيئي، تنهن کي چئي چئبو ڪيترو.

دلبر تنهنجي ديس تي، جوڳي آءُ ٿيندياس  
 لاهي لتا لڱن تان، آلفي اوڍيندياس

پنڻ پنج ڪٿيون، وحدت سان ويندياس  
عرض عجيبن ڪي، قريئون آءُ ڪندياس  
”دريا خان“ جيسين جئندياس، در نه ڇڏيندس دوست جو.

عاشقن جي اندر ۾، اچي عشق ڏني اوڙ  
ويهي ويو وجود ۾، غازي ڏيئي گوڙ  
هنياڻين هئڻ ڪي ”لا“ جي ڪٿي لوڙ  
”دريا خان“ اميدن جا، هاڻ سڳا سڀيئي توڙ.



### ڪافي بلاولي

آء ڪانگا ڪر ڳالهه، مون کي تن ماروڙن جي،  
ماروڙن جي، سانگيڙن جي.

پن عمر تنهنجا ماڙيون بنگلا، ڳھ ڪنگڻ ڪنمال،  
مون کي تن ماروڙن جي.

پت پهرينديس ڪينڪي، عمر! لوڻي اباڻي لال،  
مون کي تن ماروڙن جي.

پاڻرن ۽ پينرن ريءَ هڙي، ساعت پانيان سال،  
مون کي تن ماروڙن جي.

آء ڏهاڳڻ تن ريءَ هڙي، خوش وسن اُهي شال،  
مون کي تن ماروڙن جي.

”دريا خان“ مارن ريءَ هڙي، هڻي هڻي هيڻا حال،  
مون کي تن ماروڙن جي.

## ڪافي پروو

ماري مارن جي مذڪور عمرا آءُ اُڪنڊي آهيان.  
وٺي ويڙهيچن مون کي ڏوٿين کان ڪيو ڏور عمرا  
ڪيئن ڪنڊون هت ڪاٿيان  
مرتين سنگهارن جا پلپل پوٺم پور عمرا  
پاند ڳچيءَ ڳل پايان  
جي ڏنا ٿئي جيءَ ۾ سوين مون کي سور عمرا  
سي ڪينءَ ساهه سهاڻيان  
سيئن سنڌي سرتيون مون کي چاڪن ڪيو چور عمرا  
گهماءُ هڻي پاڻ گهاٽيان  
وڌي وڃان ويڙهه ۾، مان لهن هي سور عمرا  
ڏوهن منجه ڏهاڻيان  
”دريا خان دلبر دل ۾، تنهن تان مت نه محبت مور عمرا  
ڳڻ ڳالهيون تو ڳاڻيان

## ڪافي جوڳ

پهچن منهنجون ماروڙن ڏي، دل درد جون دانهون  
درد جون دانهون ٻڌي من، اچن اوڏاهون  
ٿيس بندياڻي بند ۾، پيون سڀ ويون واهون،  
هڪ قيد ڪڙا پيون ڪوٺيون، ٻڌي هت ٻڌايم پانهون.  
هت وساري ويهي رهيا، ريءَ ڏوهه گناهون،  
مان ٻڌن سڏڙا هن، عاجز جون آهون.  
سرتيون سنگهارن کي، وڃي پسان پراهون،  
ايندا مارو جبڏيون، ڪاهه ڪري ڪاهون.  
ظلم ضعيفن تي عمرا چوهه ڪرين چاهون،  
سانگ اباڻن سومرا، الاهه ڪندو اوماهون.  
آديون اباڻن جا، ٿي رند پڇان راهون،  
”دريا خان“ ملڪ ملهیر ڏي، ٿيون وسنون واهون.

## ڪافي برو

آء مارن ريء هت ماندي، اهي ايندم شال ايندا.

آء پنهنجي سگهارن سان، هڪر ٿيان هيڪاندي،  
اهي نيندم شال نيندا.

سوين گوندر گڏ ٿيا، ويل نه آهيان واندي،  
اهي ويندم شال ويندا.

آئي عمرڪوٽ ۾، ڪيء بندياڻي باندي،  
هي جيئندم شال جيئندا.

”دريا خان“ خبر ڪيت جي، اُن آسان لاءِ آندي،  
اهي ڏيندم شال ڏيندا.

## ڪافي پهاري

ڏوري ڏسان شل ڏوٽيٽڙا، ڏوٽيٽڙا مٺا ماروٽڙا.

عمر انهن ريء آهيان آداسي، تن مارن ريء دلڙي پياسي،  
وري ويڃي شال وطن وسان.

قسمت قيد ڏاڍا بند باري، نيڻ نير وهن ٿا جاري،  
هن عمر! تنهنجون چاهون چسان.

اُڪنڊ آبائڻ هينئڙي هوري، سوين گوندر جهجڻ تن جهوري،  
عمر! انهن جي شل راڄ رسان.

”دريا خان“ مارن ريء دل ماندي، هڪر گڏ ٿيان هيڪاندي،  
سان سانگين لاهيان هيانو سکان.

## ڪافي جوڳ

منهنجي ماڙ مارن ڪوئن ٿيندي  
 ڪه ڏينهن ڏکيا پرڏيهه جا.  
 عمر اباڻن سان وڃي، پڇ پاڻي گڏ پئندي  
 ڪه ڏينهن ڏکيا پرڏيهه جا.  
 سرتيون سنگهارن سان وڃي، ڇاڪ سيني جا سيندي  
 ڪه ڏينهن ڏکيا پرڏيهه جا.  
 ٻن حلوا هن هنڌ جا، وڃي ڪيت ڪنيون گڏ ڪيندي  
 ڪه ڏينهن ڏکيا پرڏيهه جا.  
 ”دريا خان“ ماروڙن جي، جوءُ ڏسي دل جيئندي  
 ڪه ڏينهن ڏکيا پرڏيهه جا.

\*

ماروڙن کان شال، اچي خبر خوشيءَ جي.

مون جيڏيون ملهين ۾، اُودين لويون لال  
 اچي خبر خوشيءَ جي.  
 هڪ ٻهر پرڏيهه ۾، جالڻ آه جنجال  
 اچي خبر خوشيءَ جي.  
 اُنا مينهن ملير تي، پلر پاڻي جال  
 اچي خبر خوشيءَ جي.  
 ”دريا خان“ ماروڙا ملندا، لهندا قيد ڪشال  
 اچي خبر خوشيءَ جي.



وسئون ٿيڙم ووئي، سانگين پاسي اچ سانگ ٿيا.  
جنهن لٿي جيءُ جلي تو هئي هئي، ڇڏيان ڪين اهوي.  
ڪينءَ جيئان هت جيڏيون، پنهورن کان پوئي.  
پڪا پڪن سامهون، اوڏا تان اڏيوئي.  
محبت جي ميدان ۾، ڪامل ايندو ڪوئي.  
”دريا خان“ آهي دائر دل ۾، مون کي سانوڻ سوئي.

### ڪافي بروو

پڇ تون ڪٿا قيد ڪنجيون ڪلف قضا جا  
ته وڃي مارن سان گهاريان، ڏکيا ڏينهن نه ساريان.  
ٿيس ڏوئين کان ڏور پون پلپل پور  
انهي سوز سار جا، سي ويهي ڪينءَ وساريان  
سدا سک تن جا ساريان.  
پن هي باغ بهاران، راهون روز نهاريان  
سيئي خار خزان جا، وه ويڙهيچن چارن  
جتان وڃي پوءِ پڪاريان.  
لکيو لوح ۾ جو هو سو سڀوئي پاڙن مون پيو  
آهي رب جي رضا جا، سي ڳالهيون ڪنهن سان گهريان  
سي ونهيا ڪينءَ وساريان.  
”دريا خان“ گهران سدا دان تو، دم سبھاني روز جزاتو  
تنهنجو عشق اجاريان، تون هي تون تنواريان  
تون هي تون تنواريان.

## ڪافي اوڙائو

مارو ماڳ موٽي ملندا،

آءُ ڏکيا ڏينهن نه ساريان

سنگهارن ريءَ سرتيون، گوندر منجهه گذاريان.

رمان ان جي راڄ ۾، پت پنهورن پاريان.

سانگي ويڙم سانگ تي، ويڙهيچن کي راريان.

"دريا خان" ڏوٽي ڏور ٿيا، ڪه گهڙيون هت گهاريان.

## ڪافي ڪلياڻ

من ڪاڍو مارن ڏي، اڄ ڪو قاصد ايندم ڙي.

رهبر تنهنجا راتيون ڏينهان، رويون راهه نهاريان.

ماڙين ۾ مارن ريءَ ماندي، گوندر منجهه گذاريان.

ڏي ڪا خبر ڪري، ڪو نيئرن مان نيندم ڙي.

خاطي تنهنجي خاطران، هت پوڻيدار پڇايان.

سڏي ٻانڀڻ جوتشي جوڳي، وهيون روز واچايان.

جو مون مارن حال چوي، اڄ تنهن ٿورو ٿيندم ڙي.

مارن ماڳ ملير اُٺو هت گاهن لاتيون گلزاريون.

پسي پت پڪا ٿيا پيرون، واه ويڙهيچن جون واڙيون.

مان اچي هت ماندي ڪي، ڪو ڏس ڏوٽين جو ڏيندم ڙي.

"دريا خان" مارو مور نه ڇڏيندا، آئون انهن جي آهيان.

سور سختيون سر تي، آس نه انهن جي لاهيان.

شال وسان وڃي ويڙهيچن ۾، تان هي وهم سڀئي ويندم ڙي.



## ڪافي پهاري

ٻن عمر اهي ماڙيون، اسان جا پاڻ پٽن پرواڙيون،  
 ڪڍ بندياڻي بند مٿن، نون مان هي نمائي  
 ماڻيان ملڪ ملهيو وڃي، هت پيچ پيان گڏ پاڻي  
 رويون راه نهاريان تن جا، ڳوڙها ڳلن تان ڳاڙيون،  
 هوڏي مارن مينهن وسائيا، گاهن ڪيون گلزاريون  
 چيڙين ڌڻ ته ڌنارا، سي طرحين طرحين ڪن تنوارون  
 ڪاڻن ڪاڇ ڪنڀن جا خاصا، آڻيو ڏٺ ته ڏهاڙيون،  
 ڪينءَ جيڻان مان هت جڳ ڀر، جيڏيون مهڻن تان ماري  
 سانگي من سانگي اچن، هت تهدل ڪريان تياري  
 آڇ نه عمر اهي پٽ پٽولا، اهي پهرين ڪين پهناريون،  
 ڏي موڪل ميان سومرا، هي اجڙوال اماڻيون  
 ”درياهان“ آهن آيل انهن کي، انهن ڳالهين کان عاريون  
 اوڍين خوب ڪٽيون هت خاصيون، لال لوليون سي ڳاڙهيون.

## ڪافي بلاولي

عمر اهي شال ايندا، منهنجا ماروڙا

لا، منهنجا سانگيڙا،  
 ايندا اٿم آسرو منجهئون سڪ سڏيندا  
 لا، منهنجا ماروڙا،  
 آءُ انهن جي آهيان، چنيو ڪين ڇڏيندا  
 لا، منهنجا ماروڙا،  
 اچڻ انهن جا اڃ اسان تي، لک ٿورا ٿيندا  
 لا، منهنجا ماروڙا،  
 ”دريا خان“ خبر خوشيءَ جي، ڏوٿيڙا ڏيندا  
 لا، منهنجا سانگيڙا.

## ڪافي جوڳ

ڏسي ڏک ٿيو ڪي ڏيل، گُھ محل ماڙيون.  
 واه مارن جا ڪرڙ ڪٿيرون، لال لوليون ته ڪن ڪي پوريون،  
 ڏونرا ڏت سبيل، گهر گندين گهر واريون.  
 پاڻ پتن پکا پهنوارا، قوت مارن جو ڏت ۽ ڏونرا،  
 اصل انهن ڪي ايل، چانور ڏيو ڪينءَ ڪينءَ چاڙهيون.  
 ٻن زري زر طول وهاتا، گُھ ڪنڊن جا تنهنجا ڪاڻا،  
 سانگين سان ست سيل، لوح لکيو جن جاڙيون.  
 ”دريا خان“ مارن مينهن مانڊاڻا، خوش وسن شل ڏيه ڏاڏاڻا،  
 پسي پکا ٿيا پيله، ڳاڳيون سي ڳاڙهيون.

## ڪافي لوڙاڻو بهاري

ونهيا وس وري ايندم لوءِ لڏي،  
 پکا ساڻ پکن جي اوڏاڪن اڏي،  
 خواب خيال سدا ماروڙن من ۾،  
 پلپل پور پون طرحين طرحين تن ۾،  
 آيم خبر ڪري، نيندم سانگ سڏي،  
 ڏيه ڏورانهان ڏوٽي ڏور رهيا،  
 ڪي بندياڻي بند مان اجهڙوال اها،  
 پتن منجهه سڏي، ڪندا گڏ ته گڏي،  
 قيدئون ڪي ته وري عمر وطن وڃان،  
 ميڙائي جي مون ڪي آهي اميد اڃا،  
 وڃان وطن وري ماڙيون محل چڏي،  
 ”دريا خان“ ڏوري ڏسان آهي سانگ سڪا،  
 گُھ ڪنڊن جا ڪاڻ وڙسي پيرون پکا،  
 سوئي سگر سدا، ڪيان تن جي تڏي.

## ڪافي پهاڙي

جيءُ جنين ليءُ جوڳي ٿيڙو  
 ڏيه ويا اُٿر ڏيهي.  
 اُٿو ملڪ ماروڙن جو هت وره وڃايم ويهي.  
 ڳه ڪنڊن جا ڪاڻڻ خاصا، ور ڏونرا پرين جا ڏيهي.  
 صحيح غلام علي جو سڏايم، جنهن نينهن لايو مون کي ٺيهي  
 هادي حق حقاني ڳالهيون، رمز حقي سان ريهي.  
 ”دريا خان“ دلبر ديس پنهنجي کي پاڻ بسج بيهي،  
 مرشد وارو حال اسان تي، جيهي آهيان تيهي.

## ڪافي برو

آيو فرمانين فرمان، هاتف عشق آواز الستي.

عشق روايت راوي ڪري ٿو  
 سر عشاقان قدم ڌري ٿو  
 ٻڌ فرمودو فرقان،  
 موتو ٿي وڃاءُ هيءُ هستي.  
 اول جسم کان ڪر تون جدائي،  
 ڏي سر عاشق عشق ادائي،  
 وني اَنفسڪم قول قرآن،  
 مان محبت حق جي،  
 ظاهر ذات صفات سڃاڻي،  
 عاشق عشق جون موجان ماڻي،  
 هي گهر هستيءَ جو ڪر ويران،  
 ڏي سر سودو دست به دستي.  
 ”دريا خان“ گوءُ کڻي ڪي غازي،  
 هي جڳ سارو طلسم بازي،  
 عشق ڏچون يار نينهن نشان،  
 ڪوڙ تون عاشق وحدت وستي.

## ڪافي

پاڻ ويڃائي پاڻ سڃاتم، ٻيو ڄاتم سو ڄاڻ ويو.

فانما تولو فشر وجه الله.

ٻيائيءَ وارو پاڻ ويو.

جو ڳوليم ٿي ڳوٺ ڳليءَ ۾،

سو تان وڃون ٿي پاڻ ويو.

پنهنجو پاڻ ۾ پاتم جهاتي،

ٻيو ٻه پنڌ پرياڻ ويو.

”دريا خان“ بحر بيرنگيءَ ۾،

عقل سندو آهڃاڻ ويو.

## ڪافي سسئي

عام کان پاسي ٿا اوريڻ، بر ۾ مڙهيون بيراڳين جون.

سڪ تنين کي سور برابر ڏيه ڏڪن جا ٿا ڏورين،

ورم وايون تن ويراڳين جون.

دونھين پاسي دادلا، پاڻ پريون سي ٿا پورين،

ڪن جهد جفاڻون اوجاڳن جون.

وجهي منهن مونن ۾، ڏيل اندر ۾ ٿا ڏورين،

هت سونهن سمرڻيون سامين جون.

”دريا خان“ سامي سڪ مان، گهور ڪيو سر گهورين،

آهن طبون سچيون تن تياڳين جون.

### ڪافي بروو

اڏ ڪانگ خبر ڏي ڪري، مارن ريءَ هي حال ٿيو.

چئج سلام سنيها ساري،  
ڏوه ڪيهي هت وينا وساري،  
هئي هئي تن ريءَ ساعت نه سري،  
جيئن هتي جنجال ٿيو.

ٻيو پيغام چئج هي پانڌي،  
نيئي گڏيو گرهيڪرهيءَ مانڊي،  
توڙي کوٽي آهيان ڪري،  
ڪرم لکيو مون ڪشال ٿيو.

ٽيون پيغام چئج دل لائي،  
ريءَ اوهان منهنجو هت چاهي،  
اها ٿيڙم ڳالهه ڳري،  
راتيان ڏينهان اوهان جو خيال ٿيو.

”دريا خان“ ڄاڻ اهو ڄاتم،  
ٻاهر پير پکي نا پاتم،  
انهن مهڻن کان وڃان شال مري،  
صاحب کي هي سوال ٿيو.

## ڪافي بلاولي

آندائين عادت توڙ نپائي،  
 ڏاڍي عشق ڪئي اُچائي.  
 تير اکين جا آهن تڪيرا، ڦاڙيو وجهن ڦڦڙ ۽ جيرا،  
 وڌئون پئون ست يار لنگهائي.  
 عشق پٿاري آهي بازي، ملان هجي توڙي قاضي،  
 عشق آزيون الڳ ڪرائي.  
 ساڻ جنين جي رکي ياري، سر سلامت بهون خوري،  
 ترڪ وارا آئي سلهائي.  
 عشق جنهن سر ڪري ٿو مارو مرد هجي توڙي پنج هٿيارو  
 وجهي تنهن دم يار ستائي.  
 عشق ”دريا خان“ فوجان چاڙهيون، هٿين ڏئي سيف اُگهاڙيون،  
 ڏي مٿلن کي ٿو مارائي.

## ڪافي ڪلياڻ

هن سمي جي سهاڳ، نوريون سڀ نوازيون.

جن مان اچي ڇٽ مڇيءَ جي، اتي عطر ٿيو اُجهڳ،  
 جن ڪم ڪيا ٿي پوڻيون، تن جي ڀر ڏنو آ ڀاڳ،  
 هو محلن ۾ ويهي ڪري، ڪن رهائين راڳ.  
 ٿيا انعامي تن تي، ڪيئي باغيچا باغ،  
 مٿان تن معافي ٿيا، ويا ڏکيا ڏينهن ڏهاڳ.  
 ڄام تماچي تن جي، اچي منهن ويٺو ماڳ،  
 ”دريا خان“ تڏهن تن جا، سولا ٿيا سپاڳ.

## ڪافي جوڳ

عشق جي مڪتب ۾ ويهي، ڪر درد جو دل ۾ درڪ!  
ڪوڙيون ڪتابن جون پڙهين، هن هن وڏو آهي فرق!\*

اڪرن ۾ جيڪي اڙيا، عشق جي چاڙهي مور نه چڙهيا،\*\*  
ڪنهن جي مڃين ٿا ڪينڪي، آهن وڏا ساڙن سڙيا،  
هاديءَ ڏنو جنهن کي حرف، ويڙهي ڇڏيائون سڀ ورق!

جيڪي خدا فرمائيو روڳي انهيءَ تي نا رهن،  
رشوا وٺي رواز تي، ڪوڙا مسئلا ٿا ڪهن،  
ٿيا طمع جا طالبو اهي غرض پنهنجي ۾ غرق!

عشق کان آزاد ٿيا، ورد وظيفا ٿا پڙهن،  
منهن ڏڪيو ماڻهن اڳيان دعوتن تي ڊوڙ ڪن،  
نقطو پڙهن جي نيهن جو ڪن تال تسبي جو ترڪ!

”دريا خان“ دفتر درد جا، پڙهيا سي مست ٿيا،  
پاڙيائون سخن پانهنجا، جيڪي سڄا الست جا،  
فاني ٿيا في الله ۾، اهو پڙهن هر دم سبق!

---

\* رند روز شب آهن مدا، وحدت جي واديءَ ۾ غرق،

ڪوڙيون ڪتابن جون پڙهن، ته به آه هن هن ۾ فرق،

(خوش خير محمد فقير)

هي وڃي تان هو ٿئي ۽ ڳالهه ٻئي ساري پڌر

ڪوڙيون ڪتابن جون پڙهين، آهي زهد تقويٰ سڀ ضرر،

(غلام حيدر فقير)

\*\* اڪرن دي وچ جوئي اڙيا، عشق دي چاڙهي مول نه چڙهيا،

(بيدل فقير)

## ڪافي پيروي

منجهه جوش جبل ڪوه طور چلي،  
ڏاڍو تاب حسن جو ڪير جهلي.

رب ارني\* موسيٰ ٿي چيو  
لسن تراني\*\* الهام ٿيو  
ڪيئي وير وڏا انهي چل چلي.

سوين عاشق جيڪي درد مٺا،  
ڪيئي ناز نيٺن جي ڪات ڪٺا،  
پاتو شيخ صنعان زنار ڳلي.

عشق جنين تي قدم ڌري،  
اهي ڏوهه ثواب کان پيا ته پري،  
هت ٻي ته ڪنهن جي ڪانه هلي.

”دريا خان“ عاشق آه نه ڪن،  
اهي بن محبوبن ڪين مڙن،  
ڏسي پتنگ شمع کي ڪينءَ ولي\*\*\*

---

\* رب آرني، پنهنجو منهن ڏيکار.  
\*\* لن تراني، تون نه ڏسي سگهندين!  
\*\*\* لن تراني، تون نه ڏسي سگهندين!  
\* لن تراني، تون نه ڏسي سگهندين!  
\* لن تراني، تون نه ڏسي سگهندين!  
\* واپس اچي.



### ڪافي روپ ڪلياڻ

چڏو سارو ياد رک تون، ذات پنهنجي دم بدم،  
 سچ آهين سلطان تون، ڪل شيءِ تي آ تنهنجو قدم.  
 خلق ۾ خالق نه هو شيطان چو سجدو ڪيو  
 جڏهن پاڻ هن ۾ حق ٿيو تڏهن آمر کي ڪيائين عدم.  
 ڪير آن ڪنهن کي ٿو ڳولين، چو ٿو رب پنهنجي کي رولين،  
 خبر له ڪا حيال جي، هر حاج آه تو ۾ هضم.  
 قرآن ۾ ڪين تو چيو مون کان سواءِ ناهي ٻيو  
 ڌڻي ٻانهون ڪئن ٿيو موتوءَ وارو هي ماتم.  
 نانءُ ”دريا خان“ چو سڏائين، الف مان آدم ٿي آئين،  
 اهڙا لقب چو ٿو لائين، ڪر خيال خوف وارو ختم.

### ڪافي بروو

برهه نه پانيم جيڏيون، آهي عشق اڙانگو اديون.  
 رائي ۾ ٿي راهه نهاريان، هي هي ڪريو هنجون هاريان،  
 نيئن وهيم نديون.  
 روهن ۾ ٿي ڪريان راڙون، جت ڪري ويا مٽيءَ سان جاڙون،  
 وڙ وڃن ٿا وٺيون.  
 گورا گس هلن ٿا گامون، ڪر هن کي تن هنيون ڪامون،  
 بيله وڃن ٿا ٻڌيون.  
 ”دريا خان“ دلبر دل ۾ دائم، سگ غلام علي جو سڏايم،  
 معاف ٿيم سڀ مديون.

## ڪافي روپ شان

هوتن ريءَ هي حال جيڏيون، ڪنهن سان اوريان اور عجيبن!  
 غفلت بازي يار گنواڻي، هي هٿان ويسر هوت چڏائي،  
 ڪيچي هئي هئي ڪالهه.  
 سرتيون سڱ نه ٻيو ڪو ساهيان، دم دم پوڻيدار پڇاڻيان،  
 جوڳين جي اٿم جال.  
 ڪهندس ڪيچ ڪشال ڪاهي، لهندس لوڪ لاڳاپا لاهي،  
 چپر ڪنديس چال.  
 رهبر عشق اول کان آيم، صحيح غلام علي جو سڏايم،  
 ڪيڙم نظر نهال.  
 ”دريا خان“ عشق اندر جن آهي، چپر پنڌ تنين کي چاهي،  
 ڪونهي ڪيچ ڪشال.

## ڪافي سارنگ

اڱڻ اسان جي آءِ تون يار  
 اصل اسان جو آهي نينهن جو ناتو.  
 سرتيون سيئي مون کي ڏين واڏايون،  
 پير پريتئون پاءِ تون يار  
 سڪ سڄڻ تنهنجي اندر اُوراتو.  
 ڳالهيون ڏکن سورن جون سيئي،  
 دوست ٻڌي دل لاءِ تون يار  
 آهي اسان جو اهو خيال جو کاتو.  
 آءِ ته عيدون ٿين اسان گهر  
 پاڻ پنهنجو پلاءِ تون يار  
 عشق ته تنهنجو جو مون سر چاتو.  
 ”دريا خان“ درس تنهنجي جو پياسِي،  
 تنهن سان رمزون لاءِ تون يار  
 ڳوٺ ڳليءَ تنهنجو ڳڻ ڳاتو.

### ڪافي پهاڙي

وئي وري ڪن ڳالهين سان،  
 منهنجي دلڙي ڪنهن دستور ميان!  
 اڳي ڪان به اڳرو ڪو پرايم پور ميان،  
 منهنجي دلڙي ڪنهن دستور ميان!  
 ڪنهن سان اوريان آءٌ وڃي، ساهه پنهنجي جا سور ميان،  
 منهنجي دلڙي ڪنهن دستور ميان!  
 وڃي دست چڙهي دوستن جي، سا ڪيئن موٽي مور ميان،  
 منهنجي دلڙي ڪنهن دستور ميان!  
 ”درياهان“ وڃي ملنديس تن کي، جن جو آهي ذوق ضرور ميان،  
 منهنجي دلڙي ڪنهن دستور ميان!

### ڪافي بروو

ڪر عشق الهه اختيار يارا تو ڪينءَ غافل ڏينهن گذاريا.  
 ونحن اقرب پاڻ چيائين، اهو هو ڪو حق ڏنائين،  
 ٻڌ گوش ڏئي گفتار موتو ٿيا سي ڪنهن نه ماريا،  
 نينهن نهوڙيا ڪي ناميا نيهي، رمز غشاقن جيهي ڪيهي،  
 آيو منصور جي دار ڳالھ انهيءَ تان ڪيئي ڳاريا،  
 بات برهه جي بيحد باري، سر عشاقن آئي ساري،  
 وه عاشق مرد عطار جنهن ٻول بيائي جا سڀ ٻاريا،  
 ذڪريا سر ڪرت وجهائيءَ، ابراهيم آراهه اڙاييءَ،  
 پاتو ڳل صنعان زنار تنهن زاهد زهد جا ورق وساريا،  
 ”دريا خان“ دعوا عشق ڌري ٿو، نو نو باتيان برهه ڪري ٿو  
 ڏسو عشق سندن اسرار غلام علي گرو غير اتاريا.

### ڪافي لوڙائو پهاري

سهڻي يار جي ديدار جو اسرار اهو آھ.  
 صحيح پاڻ تون سڃاڻ، الستي اُهيڃاڻ ڪي،  
 و نحن اقرب نرواں سو هر وار اهو آھ.  
 منجهون ميم ٿي مختار آيو اوتار انهيءَ ۾،  
 سڄي عشق جي گفتار جو اعتبار اهو ئي آھ.  
 گل گلزار سوين يار ڪليا باغ بهاران،  
 چمن چمن چوڌار سو هٻڪار اهو آھ.  
 ”دريا خان“ ڌر ڌيان، ڇڏ گمان، گذر جو امڪان،  
 موتو ٿي مڙ نه يار جو اقرار اهو آھ.

### ڪافي ڪوهياري

تن آديسين جي اچڻ جا، اڄ ڪي اُجام ٿيا.  
 سنڀاسي مون سيڻ ڪيا.  
 جوڳي ڀوڳي ڪاپڙي، وڄائي وڃي واٽ ٿيا،  
 سنڀاسي مون سيڻ ڪيا.  
 سامين سنگتيون سيل جون، ويراڳي مون وٽان ويا،  
 سنڀاسي مون سيڻ ڪيا.  
 گرڇڻ گڏيل اٿن گودڙيون، هرڪو اچي سين نوا،  
 سنڀاسي مون سيڻ ڪيا.  
 ”دريا خان“ پاڙي پرين جي، جڳ جڳ پيئي شال جيٿان،  
 سنڀاسي مون سيڻ ڪيا.



آهين الله سر ساڳيو اچي آدم نانءُ سڏايو ٿي.

چو ٿو ڳولين چو ٿو ٿولين، چو ٿو پنهنجو پاڻ کي رولين،  
 اها صورت اٿئي ساڳي، جنهن جادو جاڳايو ٿي.  
 هوڏانهن آئين هلي هرڪي، سڄڻ سرڪي ڏني مرڪي،  
 پيالو جام جو ٻي پيالو پڄايو ٿي.

ڪاٿي پير ڪاٿي فقير، ڪاٿي بادشاهه ڪاٿي وزير،  
 هتان ويڙا لکين مهمير ”دريا خان“ نام سڏايو ٿي.

### ڪافي

برهه بيقراري ڪئي، آواز اناالحق ٿيو اظهار  
 سي سڀ ڏناسين پاڻ ۾، جيڪي الله جا اطوار  
 تون تون ڪندو هرڪو وٽي، خوفون ٻڌي پيو جي پلڪار  
 مان چوڻ مشڪل گهڻو کولي حجابن جا هزار  
 عشق آيو آر ۾، بيخود ڪري ٿي بي خبار  
 ڪوڙين منجهان ڪو اچي ٿو گوءُ ڪٿي غازي غبار  
 خيالن خيما کوڙيا، وحدت لايو وسڪار  
 ٻولي ٻانهپ جي وٽي، ٿيو خدائيءَ جو خمار  
 نانءُ ”دريا خان“ منهنجو ناهي، نشي ۾ نينهن جي ڪيو نروار  
 جي هٿا سي، سيئي ٿيا سي، دل ورتو آهي هاڻي قرار

## ڪافي آسا

منجهه وجود شهود شعاع ڪيو اوندھ جو اسباب ويو  
اُپريو سج حقيقت وارو تارن جو سڀ تاب ويو.

عشق زليخا يوسف کي، نئي مصر ۾ بي آب ڪيو  
عبدیت جو پول پڳو، جڏهن رخ اُتون نقاب ويو.  
شاه منصور معراج سوليءَ تي، شائق ڏس شتاب ويو  
ملن معنيٰ ڪين پروڙي هڻڻ سندو حجاب ويو.  
عاشق عشق ۾ شاه شهيد ٿيا، ڪهڙو ڏوه ثواب ڪيو  
صوفي صاف ٿيا سر ڏيئي، بحر ۾ رلجي حُباب ويو.  
عاشق ڪن تا الف مطالع، بـ ت وارو باب ويو  
”درياخان“ ٿي بيدار هڻئون، هي خوف ورجا جو خواب ويو.

## ڪافي جوڳ

آدم نانءُ الله جو ڪو سير ڪر ثابت سهي،  
عشق وارن کان سوا، هي ڪل نه ٻي ڪنهن کي پئي.  
هيءُ گججهارت جن پڳي، وٺي لڄ تنين تان سڀ لهي،  
موتو مري جيڪي جيئا، ٻي ڳالھ سڀ تن کان وٺي.  
ٿي محو موجودات ۾، ٻوٽي ته ڏس اکيون ٻئي،  
جن پاڻ سڃاتو پانهنجو سڀني سالڪن اها لات لٽي،  
فانينما تولو فشر وجه الله\*، قادر قرآن ۾ ڳالھ ڪئي،  
مان الله اثبات آهيان، جاڏي ڪاڏي صورت سڀئي.  
”دريا خان“ سڀ ڪا دل جاءِ ٿي، وسواس واري ڳالھ وٺي،  
هاڻ ماڻ موجدان عشق جون، ٻين کي ٻڌائين ڇا چئي.

\* جيڏانهن ڪريان نهار تيڏانهن سڄڻ سامهون.

## ڪافي ڪاريهر

- ڪنهن ڳڻ ڪيچين جي ڳاري،  
ويچاري ٿي ڏونگر ڏوري.
- هيڏي شهر پنيور ۾، آيس عشق اُماڙي،  
ويچاري ٿي ڏونگر ڏوري.
- چڙهي جبل چوئڻين، ڏکن ڪئي ساڌ ڪاري،  
ويچاري ٿي ڏونگر ڏوري.
- چُلي بيٺي چپرين، مونجهه جتن جي ماري،  
ويچاري ٿي ڏونگر ڏوري.
- پينر هن پنيور ۾، ڪيڙي عشق آواڙي،  
ويچاري ٿي ڏونگر ڏوري.
- ”درياخان“ ٻول ٻروچ سان، ثابت سڪ سچاري،  
ويچاري ٿي ڏونگر ڏوري.

## ڪافي ٻهاڙي

- پون ٿا پور پرين جا، هينڙي ڪي سَو هزار.
- اُچوڙي سرتيون سچ چئو، ڪيچي لنگهيا ڪالهه قطار.
- موتي آهن ملڪ ۾، ڪن وڻجارا وهنوار.
- اُنا مينهن ملهين ٿي، سانگين هليا سير سينگار.
- چوي ڪينءَ پُڄان، آهي محبن هٿ مُهار.

## ڪافي ڪوهياري

جوڳي جڙ لائي ويا،  
تن جا مارن ٿا هنڌ ماڳ مڙهيون.

سامي سفر سنڀريا، پورب پنڌ پچائي ويا،  
ٻڌي ڪمر ڪُلاڻا، ڪش ڪڙيون.

لاڳاپا هن لوڪ جا، لاهوتي سڀ لاهي ويا،  
ڏٺي ترڪ طمع کي ويا تڙيون.

تن تنبورا سر ڪري، روح ۾ رام ريجهائي ويا،  
مون کي گهارڻ آيون هڙي گهڙيون.

”درياخان“ سنگتيون سيل جون، ڪيئي وير وڃائي ويا،  
من ڪا باجهه پوي تن ڪاڙيون.

## ڪافي

اهڙي ڪنهن سان ڪوئي نه ڪري،  
جهڙي جاڙ ڪري، مون سان جت ويا.

وينديس رهنديس ڪينڪي، توڙي رت رила ڪري پير پري،  
ڏٺي ڏير مُئيءَ کي ڏت ويا.

وڀريءَ ورنديس ڪينڪي، ساعت ان ريءَ سندر ڪانه سري،  
اهي ڪين پاڙي پنهنجي پت ويا.

ڄام آرياڻي پاهنجا، شال هيڻيءَ تي هت ڌري،  
اهي ڏٺي ته موڙهيءَ کي مت ويا.

وڏا طالع تنهن جا جو ”درياخان“ اڳيان هوت مري،  
جيڪي ساڻ وٺي پنهنجو ست ويا.



## ڪافي

ڪنهن سانگي ٿيڙم سانگ،

جي جان تن جتن سان.

ننڊ نهوڙيس ويڙم نڪري، ٿيس ويراڳين وانگ،

جي جان تن جتن سان.

سورن ساهه سڪايو آهي نينهن نسورو نانگ،

جي جان تن جتن سان.

بي ڪنهن ڪيچن سور سٿيان، ڏکن واري ڪانگ،

جي جان تن جتن سان.

”دريا خان“ لوچي لهنديس لڪيون، مون تن اها تانگه،

جي جان تن جتن سان.

## ڪافي سر ڪاريهر

مون کي ڏونگر ڏس ڏين ٿا، ڙي آيل ٻاروچن جا.

ٻڌي سندرو سچ جو ڪهن سي لهن ٿا... آيل!

ووڙ ته لهن ورڪي، چاري هينءَ چون ٿا... آيل!

چڙهي جبل چوئئين، مٿي روهه رڙن ٿا... آيل!

”دريا خان“ عين عجيب ريءَ،

رئڻا ڪين رهن ٿا... آيل!

## ڪافي سسئي

مون کي ڏونگر ڏورڻ آه اديون،  
 گهٽ گهير جبل جا پنڌ پُٽيون\*  
 ووڙي ورندي ڪينڪي، مَن ڪا پوي سڌ سماءِ اديون،  
 اهي ڪينءَ ورن جيڪي سوز ستيون.  
 چُلي ويئي چپرين، جا ويئي وه وه واه اديون،  
 ڌاريون ڌار ڪري ويا منهنڙو مَتيون.  
 سرتيون ساهيڙيون سڀيئي، هلي هاڙهي ٿيون همراه اديون،  
 ڪوڙيون ڪيچ وڃڻ کان سڀ نتيون.  
 ”دريا خان!“ حامي هوت ٿيو ٻيو شامل ٿيڙو شاه اديون،  
 جنهن پريت پياريون وه وٽيون.

## ڪافي ”جوڳ“

عشق جي بازيءَ ۾ عاشق، سر ڏئي منصور ٿي،  
 پاڻ کي پاسي ڪري، پوءِ محبتي مذڪور ٿي.  
 لاهي لاڳاپا لوڪ جا، تون وره ۾ وهلور ٿي،  
 جا ٿي ڪسن ٿا ڪاڙهي، تنهن ملڪ ۾ مشهور ٿي.  
 ساقيءَ اڳيان سر پانهنجو نائي نسورو نور ٿي،  
 سرڪي چڪين تنهن سور جي، موڪڻ ۾ ئي مخمور ٿي.  
 ڪُچ ڪنهن سان ڪينڪي، تون سڪ ۾ صابور ٿي،  
 ونحن اقرب ويجهو وسي، پَس پاڻ ۾ ناڏور ٿي.  
 ”دريا خان!“ دامن عشق جي، محڪم وٺي منظور ٿي،  
 پُر نه ٻي ڪنهن پار ڏي، مرشد مٿان من مور ٿي.

\* مون کي ڏونگر ڏورڻ آيو ڪيچي ڪيچ وڃن.

## ڪافي

هر طرفين حق آهي آهي، ناهي آدم نڪي آل آدم جي.  
 ٿي فنا، بقا ڏٺوسي، پيالو آب حيات پيتوسي،  
 مرڻ ته مورئون ناهي ناهي.  
 ٿيڙو شمس\* رضا ۾ راضي، ڪري ڪرامت گون ٿيو غازي،  
 ڪلي ڏنائين ڪل لاهي لاهي.  
 سوريءَ تي منصور\*\* چڙهايو وڏي ٺڪي سورهيه ساڙايو.  
 ٿو انا الحق الائي الائي.  
 نام ”دريا خان“ دلبر ڌاريو بي مثل مون مثل ٿي آيو.  
 ڏانءُ ڪيو ڏس ڏاهي ڏاهي.

\* شمس تبريز۔ مولانا جلال الدين روميءَ جو مرشد جيڪو 645ھ ڌاري غائب ٿيو.  
 \*\* ۔ ابوالمغيث حسين حلاج بن منصور بن محمد بيضاوي ولادت 244ھ طور لڳ بيضا۔ ايران.  
 24 ذوالقعد اڱاري ڏينهن 309ھ مطابق 26 مارچ 922ع کيس بغداد جي باب الطاق وٽ قاسي ڏئي  
 تنهن کان پوءِ سندس لاش ٽڪر ڳيا ڪري باهر ۾ ساڙيو ويو.

مختصر انسائيڪلوپيڊيا آف اسلام آباد

## ڪافي ”جوڳ“

ٿي پتنگ تون پاڻ پئو هن عشق جي آڙاه ۾.  
 منجهه محبت جي مڇي، ڪوپا اچن ٿا ڪاه ۾،  
 اهي پون پروانا پڇي، تنهن بره واري باه ۾.  
 سي وتن ويڳاڻا سدا، عاشق الستي آه ۾،  
 ڪا جا نظر پين نينهن جي، ديدن سندي درياه ۾.  
 پري نه پانئج پاڻ کان، ساجن وسي ٿو ساه ۾،  
 انهيءَ رمز ريڌا روح ۾، ٺهريا نه ڪنهن به ٺاه ۾.  
 ”دريا خان“ ڏئي ڪر دفعي، نيئن سندي نگاه ۾،  
 ڪين پسيائون پاڻ ۾، ٿيا فنا في الله ۾.

## ڪافي

تزاڪت ناز نيئن جي، ڪئي دل يار ديواني،  
 موهي ڪيو مست من مورت، لائي تنهنجي حسن حيراني.  
 ڪيو ديدار جنهن تنهنجو ڪفر اسلام ويو تنهن جو  
 سوريءَ تي سر ڏئي سَنهنجو اها عاشقن کي آساني.  
 اڳيئي آهيون تون سُهڻو ويتر ٿو پاڻ سينگارين،  
 انهن ڳالھين سان ٿو ڳارين، ڪوڙين قدمن تان قرباني.  
 لکين مظهر تنهنجا مولا، ڪروڙين چمڪندا چولا،  
 بره سارا پڳا پولا، اُتم صورت انساني.  
 راتيان ڏينهان سڄڻ سائين! اڪيون دل طرف ايڏانهين،  
 ”دريا خان“ در سندءِ دانهين، ڪيو ميلو مهرباني.

## ڪافي

مُرڪن ملامت ۾ اُهي، جن برهه کي برسر ڪنيون،  
 صورت سڃاڻي يار جي، نت نت ڪرن سجدا نيون.  
 چُٽا مرڻ واري خون کون، قبر قيامت جي زوف ڪئون\*،  
 ڪفر ۽ اسلام جون، وايون وٽائن سڀ ويون.  
 رت ڪٽ عقل جي ڪانه ڪن، بيوس حسن سان حل ٿين،  
 سرتيون سندن سر تي سدا، آهن درد جا ڏوڙيا زيون.  
 ”دريا خان“ آهي الله اهو ننڊ جاڳ ۾ سڀ سوجهرو  
 ريءَ سالڪن پيو ڪير سمجهي، ڳالهيون اهي جي تو چيون.

---

\* زوف = ضعف = هيٺائي.

نوٽ: مصرع نمبر 1 ۽ 2 ۾ ڪٿي هيئن لکيل آهي:

چُٽا مرڻ واري حوق ڪئون، قيامت قبر جي خوف ڪئون،  
 هر طرف بي رنگ بحر ۾، ديئون خيال جون رُلجي ويون.

رت ڪٽ عقل جي ڪانه ڪن، هرگز حسن سان حل ٿين،  
 ڪفر ۽ اسلام جون، وايون وٽائن سڀ ويون.

## کافي کلياڻ

ٻاهريان تيرت چو پڇائين،  
منهن مڙهيءَ دل پنهنجي نه پائين!

سخت سفر، ڪشت چو ڪرين،  
تو پٿر پاڻيءَ ڏيان ڌرين؟  
چو روح پنهنجي ۾ نه رام ريجهائين.

گيتا، گيارس، گيان پڙهين تو  
پنهنجو پاڻ ۾ ڪين ڪڙهين تو  
ڪٽ ڪريو تو لوڪ سڻائين.

پوڻيون پُستڪ، ويد بتائين،  
من پنهنجو پر ٻوڏ نه لائين،  
گيان پيو ٻين کي ٻڌائين.

”دريا خان“ درد رکج دم ياري،  
عشق سهڻي بن ڪوڙي تاري،  
پنهنجو پاڻ ۾ چو نه سڻائين.

### ڪافي ڪنڀات

آيو عشق جڏهن، وايون عقل ويون،  
ڀڳو تاب تنهن جي ڪڙن، ڏسي روت ريون.

علم عقل کي چيو حسن هلاڻ ڪئي،  
هل ته هليون پڇي، ٻي ڪنهن ملڪ ٻئي،  
هل ته هلي ڪيون ڪاڻي بٺ بنيون.

عقل چوي وڃان ڪاڏي لڏي،  
عشق ٻڪڻ ڪاڻي ڪين ٿو ڇڏي،  
رويون درد ٻڌائي اهڙا حال ڪيون.

عقل چوي ملڪ اهو منهنجو  
ٻيو دعويٰ دخل مٿس ناهي ڪنهن جو  
پرڀت وٽيس بره رند ڪنڀون.

”دريا خان“ درد جهڙو مايا مال نه ڪو  
جنهن جي ڪاڻ جيئي ٿو هي مَن مَن  
ڳالهون سانڍ سورن جون سڀئي سنيون.

## ڪافي پيروي

آيو عشق اڱڻ لايون درد ڏچون،  
تڏهن عقل چيو اُٿي پڇ ته پڇون.

عشق اچڻ جاهل هنگاما، نينهن جي نوبت دهل ڏما،  
اتي عاشق اچن ٿا سرڙو سنجيون.  
سوين ساز آواز اچن ٿا، عاشق انهيءَ رمز رچن ٿا،  
اتي انحد واڄت ڪن وڃيون.  
عشق پاڻ اکين جا لايا، شرم حيا، عقل وٽ آيا،  
ڏي ڏس ته اسان کي ڪاڏي وڃون.  
”دريا خان“ جن کي عشق اندر ڀر، ڪين مڙن سي پون پٿر ڀر،  
تن لاهي ڇڏيون سڀ لوڪ لڄيون.

## ڪافي سارنگ

هڪ اسان جو تون ئي تون، تو بن ٻيو نا گهرجي مون،  
لا لنگهي وڃي محو ٿيا سي، الله چيو لون لون.  
پاڻ پنهنجي ۾ گم ٿيا سي، بيرنگيءَ ناهي بون.  
وڃي پيا سي ملڪ امن ۾، ڏيهه انهيءَ ۾ ناهن ڏون.  
”دريا خان“ ديس انهيءَ ۾ ويا سي، جت هان رهي نڪا هون.



### ڪافي وهڳ

ڪر امداد اچڻ جو اسان تي،  
سو ڳڻ تنهنجا ڳائيندس.  
جانب جاليندس ساڻ جُتي جي،  
چمي چمي سرچائيندس.  
پيا به گهڻا آهن ٻانهان تنهنجا،  
مان به سگ سڏائيندس.  
ڪڍي پڻي تنهنجي پيرن جي،  
ڪري ڪجل اکين ۾ پائيندس.  
دم دم ”دريا خان“ اڳيان عجيب،  
نياز وڏي سر نائيندس.

### ڪافي روپ شان

پاڻ پانيم منجهه ٿو ڳولي،  
ڳولي هٿئون پاڻ ڪي.  
پاڻ وڃائي پاڻ سُڃاڻم،  
يار گڏيو منجهه اولي.  
لاسين لنگهي ثابت ڪيو سي،  
فڪر انهيءَ سان ٿولي.  
هر گهر هستيءَ جو جيئري جلائي،  
چٽنگ پئي منجهه چولي.  
”دريا خان“ سگر سبڌ سڻايو،  
ڏور متان ڪو ڏولي.

## ڪافي پهاڙي

حسن وارن کي نه گهرجي حجاب،  
 گهونگهٽ لائق ناهي.  
 نيهن هاديءَ جي وڌو آ نهوڙي، برهه ڪيو بي تاب،  
 ميخن محبت جي وڌو گهاٽي.  
 سوا سڪ سڄڻ جي وڻي ڪين ٻيو عشق ڏئي ٿو عتاب،  
 جيئن گهڻو تيئن ساهه سيبائي.  
 منهن ڏسڻ محبوب اوهان جو آهي عين ثواب،  
 ڇڏ حجاب دلين جا لاهي.  
 سڻ ”دريا خان“ درد پُڪارن، ڪسي ٿيءَ ڪباب،  
 ڏي سر اڳتون ننگ نوائي.

## ڪافي پهاڙي

عاشق اڳيان محبوب جي، سڪ سمجھ مٿن سجدا ڪرين،  
 رمز ۾ ره روبرو جيئن پير پنتي نا ڌرين.  
 ره حسن حيرت فوج ۾، ڪاءُ چرخ محبت موج ۾،  
 ايندين عشق پوءِ اوج ۾، ڏک کي ڏسي جي نا ڌرين.  
 پهرين ڏاڍا ڏک ڏجهڙا ڏيندڙ، پرکي پرين پوءِ پنهنجو ڪندڙ،  
 پوءِ سارا ٿيندا تو سندن، اعتبار ڪج اهڙو پرين.  
 ڏس مسلسل حسن زيب ڏي، مائن معشوقن ريب ڏي،  
 سگهو وڌي سرڌيب ٿي، هٿ سان جيسين هنج ڌرين.  
 ”دريا خان“ دلبر کي ڏٺو الله اُٻارين چٽو  
 محبوب موچارو مٺو گهوٽ آهي سڀ گهرين.

## ڪافي ڪلياڻ

هيءَ عمر سنڌءِ افراد، وڻي وهامي راتڙي.  
 جي مرڻو اٿئي تان مَر اڳي، آهي امر اهو ارشاد.  
 ڪر لا سنڌي هٿ ڪاٽڙي.  
 فاڌڪروني اڌڪر ڪم، جي رکين دل ۾ ياد،  
 بي نه ٻولج ٻاٽڙي.  
 حيف حياتيءَ ڏينھڙا، يار بنا برباد،  
 ڏس پاڻي دروني جهاتڙي.  
 ”دريا خان“ دل جي ديس کي، ڪر عشق سان آباد،  
 لنو بنا ڪوڙي لاتڙي.

## ڪافي ڪوهياري

منهنجو ور ته وڻي ويا دلبنڊ ٿي اديون،  
 اهي ڏير ته مٽيءَ کي ماري ويا.  
 هاجو ڪري ويا، هوت وڻي ويا،  
 ڪري ته مٽي سان ٿند ٿي اديون،  
 گهڙي نه هٽڙي گهاري ويا.  
 مون پانيو مهمان مٽي جا،  
 هو چراڻا ڪري ويا چنڊ ٿي اديون،  
 اهي ننگ ڏي ڪين نهاري ويا.  
 ڏونگر ڏي ڪو ڏس ڏيرن جو،  
 جن جا راه نهاريان ٿي رند ٿي اديون،  
 سي روهن ۾ ته رٿاري ويا.  
 مون ۾ ڪانهي همت هلڻ جي،  
 ڪيچ اٿاوا پنڌ ٿي اديون،  
 اهي وڻ هيٺ ويهاري ويا.  
 ”دريا خان“ جت ڪري ويا جاڻون،  
 پير پڇان پئي پنڌ ٿي اديون،  
 پلا مٽيءَ کي ڪوه وساري ويا.

## ڪافي تلنگ

تنهنجي ديد ڪيو ته خريد، ڏسڻ ساڻ اسان کي،  
 هنج ۾ هج هميشه، مليل يار مان سان،  
 ڏي ڪا راز جي رسيد،  
 ڄاڻين ٻيا نه ڄاڻين، توکي سڪ وارا ٿا سڃاڻن،  
 جيڪي تنهنجي شوق ڪيا شهيد،  
 تنهنجي صورت ۾ سدائين، تنهنجي ذڪر ڪيو فنائي،  
 ڪرائي عشق سندي عيد،  
 تنهنجي بره ڪيو بيحال، محبت مست ڪيو خيال،  
 ”دريا خان“ دريد.

## ڪافي بروو

تون پاءِ دروني جهاتي،  
 ڏس پنهنجو پاڻ نظارو،  
 مونجه ڏسي نا مڙجان عاشق،  
 اٿئي منجه ظلمات حياتي،  
 اهو سير سڪندر وارو.

پير مغان جو امر اهو ٿي،  
 ڪر لا سندي هٿ ڪاتي،  
 چئو طرف حسن هٻڪارو.

”دريا خان“ ڄاڻ تو ڄاڻ انهيءَ کي،  
 پاڻ عشق ڪندو اثباتي،  
 ٿي وحدت جو وڻجارو.

## ڪافي ڪلياڻ

تنهنجا عجب تماشا يار ڪبيءَ طرحين طرحين يار نوان!  
ڪاٿي شاهه ته ڪاٿي ٽئين گداگر جوڙ ڪبيءَ هڪ جهڙا يار.  
مجنون مست ڪيو ناز ليلي جي، واه وارين جا ويڙها يار.  
جي مرن مرن کان اڳي، ڏسن پنهنجا ڏيهڙا يار.  
شيخ صنعان\* ڳل جڻيو جڙاييءَ، تنهن کي ڪفر بتاييءَ ڪهڙا يار.  
”دريا خان“ ڪين مڙن سي عاشق، سورن سان گڏ سهڙيا يار.

## ڪافي بروو

پير مغان جو وٺ تون پاسو اٿئي عشق خمار خمري خاصو.

ڪاهه ڪلالن وچ تون ڪاهي، حق مستي بي هستي ناهي،  
منجهه وصال ورهه ٿيو واسو.

ميخاني ڪئين مست اچن ٿا، سر جي سوي مرد مچن ٿا،  
رمز رندي آهي راند نه رهسو.

ورهه اٿئي اهو برهه بقائي، عشق الله بن ڪوڙي ڪمائي،  
آس هڪاهه ٻيو ڪوڙو واسو.

”دريا خان“ درد رکيج دم سازي، عشق الله بن بي ڪوڙي بازي،  
هن هنڌ هوش حظ ناهي هاسو.

\* شيخ صنعان:

مشهور بزرگ، جنهن جا ست سو مريد هئا، انهن مان شيخ عطار به هڪ هو. هيءُ بزرگ وچ ۾ گمراه ٿي هڪ نصاري جي چوڪريءَ جي عشق ۾ اڙجي سوئر چارن لڳو ليڪن آخرڪار غنبي هدايت ٿيس ۽ وري سنئين راهه تي اچي ويو. - مرتب

## ڪافي جهنگلو

جهام ڏيئي جهت پت، چايو عشق چنبن ۾!  
 سودو ڪيڙم سر جو وڃي حبيبائي هت،  
 چايو عشق چنبن ۾!  
 پيرون چونڊينديس پاند ۾، ڪانبو ڪانبي وٽ،  
 چايو عشق چنبن ۾!  
 پرين پاڻ هٿن سان، وهايو ڪات ڪرت،  
 چايو عشق چنبن ۾!  
 مرڪڻ واري محبوب جو گهمي لڏو سي گهٽ،  
 چايو عشق چنبن ۾!  
 ”دريا خان“ جي دل تي اچي، آلتيا بار آلت،  
 چايو عشق چنبن ۾!

## ڪافي جوڳ

ايڏاءِ ڏاڍو عشق جو ڏک ٿو ڏئي ڏاڍو ڏکيو.

تنهنجي حسن هلاڻ ڪئي، عرشين اڏامي جا وئي،  
 اُت بات بيهڻ جي نه هئي، جندجان جيري ۾ جُڪيو.

ڪست مان ڪڙڪي جنهن، نت باهه جان پڙڪي  
 جنهن،

روز شب رڙڪي تنهن، ته به دود دل اندر ڏکيو.

چوهه مان جنهن تي چٽي، پاڻ سان تنهن کي ٻڌي،  
 هڏ ماس کائي ٿو ڪٽي، ته به باز وانگر آهي بکيو.

”دريا خان“ درد جي دوا نه ڪا، برهه آهي باري بلا،  
 سر ساهه کي سختي سدا، ڪڏهين نه ٿيندو سو سڪيو.

## ڪافي جهنگلو

تنهنجي فلڪ فراق ۾، وينديس يار مري مري.  
جيڪا اڳ وڌ وئي، ڊولڻ ڪج سا ڏري ڏري،  
وينديس يار مري مري  
اٽئي پهر اُٻاڻڪي، چارئي پهر چري چري،  
وينديس يار مري مري  
ياد هجان شل يار کي، وچان سڪ ۾ سري سري،  
وينديس يار مري مري  
دلبر ”دريا خان“ سان، ڪج وصال وري وري.

## ڪافي ڏناسري

سي ڪنل ڪينءَ ماڻ ڪن، جن کي عشق جو آزار آه.  
رت رڻ راتو ڏينهان، ٻيو بي قراري بار آه.  
ريءَ ملڻ ماندا مرن، ڏاڍي طلب تڪ تار آه.  
جن کي لڳي سيئي ڄاڻن، ٻي ڪنهن ڪهڙو اختيار آه.  
عاشقن کي هر هميشه، درد جو ڏنڌڪار آه.  
جي پون ٿا گهور ۾، تن ليءَ صبر لاچار آه.  
چڏ اها زوروري، هاڻي ملڻ منار آه.  
جي هجين مون سان جاني، ”دريا خان“ کي درڪار آه.  
جوڙي ڏيانءَ جايون اکين ۾، سر ساهه صدقو يار آه.

### ڪافي وهڳ

مڃ صدا سواليءَ جي، اچي يار تون مان وٽ گذارا  
 آءُ اڳڻ محبوب جاني، سهڻا ڪري سينگارا  
 هيءُ ڦر سڄڻ توکي ڦهي،  
 نئين زور سان تو دل ڏهي،  
 ايڏا ظلم ظالم ڪرين ٿو ڪيءُ برهه ۾ بيمارا  
 جئن ٿو وڻي تئن ٿو ڪرين،  
 ڏاڍا بار بيحد ٿو ڌرين،  
 هن جدائيءَ جي جيئڻ ڪڙن، مرڻ آ موچارا  
 پهرين ڏک پرين ڏاڍا ڏيندءِ،  
 پرڪي پرين پنهنجو ڪندءِ،  
 پوءِ سڄا ٿيندا سنڌ، ڪر اهڙي پارين اعتبارا  
 ”دريا خان“ آهي اوهان جو  
 پرچي پرين ڪريو پنهنجو  
 انهيءَ مستي واري ميخاني مڙن، ڪو پُر پيالو يار پيارا

### ڪافي تلنگ

تنهنجي چشمن جا چهچڪار اُوڻر\* سڪ جا ٿا اُٿارن.  
 عشق لذت مون سوئي ڄاڻي، جيڪو هجي سدائي ساڻن،  
 اهڙا جن جا اعتبار ڳاٺ پريو ٿا ڳوڙها ڳاڻن.  
 پنيا پرون، ڪنڊيون پنڀيون، چين وڃن ٿيون چوهيون چني،  
 چئن ڏندن جا چمڪار چوڪان ڏئي جڏهن نهارن.  
 ”دريا خان“ اهي ديوانا ڦرن ٿا، ڏسي ملامت مور نه مڙن ٿا،  
 وڃي سوريءَ ٿين سوار خيال پنهنجو ڪو يار نٿا ڪن.



## ڪافي ڪاريهر

سرتيون ڏيو ڪا صلاح ٿي،

باب بنديءَ جي ٻئي آبي.

ماءُ دعا ڪر دل ڪوڻ مون کي، نانگن سان اٿم نڪاح،

ماتتي انهن جي وٺي آ وٺي.

اڳتون گڏيا هيءُ ڳيڙن وارا، تن جي نور پري آ نگاه،

سڪ انهن جي گهڻي آ گهڻي.

دانهون ”دريا خان“ ڪنهن کي ڏيان، ٻڌندو پاڻ الله،

ننگ نٻاهيندو ڌڻي آ ڌڻي.

## ڪافي سرپهاڙي

هي راز حسن جو اسرار آهي اکين ۾،

سبحان صورت ساري، مولا وسي مڙين ۾.

سامان سڀ لٽائي،

دلبر سنڌي درشن ۾.

اهڙو ته عشق آهي،

پنهنجو ٿو پاڻ وڃائي،

صورت سڀو سڃاڻي،

چانڊاڻ آهي چمن ۾.

پاڻي دروني جهاتي،

ذاتي ڇا صفاتي،

واسطي ملڻ مشتاقان،

سردار جي سمن ۾.

پهري لڪ پوشاڪان،

لڪ لاهوتي ڪن ٿا لڪان،

سالڪن کي سبق آھ،

معرفت جنين من ۾.

”دريا خان“ هي سڀ حق آھ،

محبت تئين مرڪ آھي.

هن ڪافيءَ ۾ هڪ هنڌ هيءُ مصرع زياده آهي:

مرڪڻ انهيءَ جو منڊ آھ،

بجليون ٻرن بدن ۾.

ڪلڻ ماهيءَ جو ڪنڊ آھ،

مون ڀانيو چوڏهينءَ چنڊ آھ.

### ڪافي

اسين هر دم عشق ۾ آهيون،  
 نه پڙهون نه قضا ڪريون.  
 جوئي هجي اسين سوئي ڪريون،  
 سائين! پاڻ ڪڏن پلو ڪري پانيون!  
 محمد مير مڪي ۾ آهي،  
 الا، اسين آڌار انهيءَ جي آهيون!  
 آڪي ”دريا خان“ عشق اوهان جو  
 بيلي ٻئي کي ڪين ٻڌايون!

### ڪافي تلنگ

ناهي آدم نڪي آل آدم جي،  
 هر طرف حق آهي آهي.  
 ٿي فنا ۾ باقي ڏسو سي،  
 پيالو آب حيات پيتوسي،  
 مرڻ منڍئون سو ناهي ناهي،  
 شاه منصور کي سولي چاڙهيائون،  
 وڃي ٽڪي وڃي وڃي باهه ۾ ساڙيائون،  
 ته به ٿو انا الحق الائي الائي.  
 ٿيو شمس رضا ۾ راضي،  
 ڪري ڪرامت گهڻون ٿيو غازي،  
 پوءِ ڪلي ڏنائين ڪل لاهي لاهي.  
 نام ”دريا خان!“ دلبر ڌرايو  
 بي مثل معون مثل ٿي آيو  
 ڏانءُ ڪيو آهي ڏاهي ڏاهي.

### ڪافي گجري

اُٿي جاڳ ڄاڻي، پوئي ڪل ڪاڻي،  
 جاڳڻ ري جاليندين، سورن ۾ سدائي.  
 درد دؤنس جن کي، مليو محب تن کي،  
 هميشه هيڪاندي جن ننڊڙي ڦٽائي.  
 سڪن ساريون راتيون، جهنڊئون پائن جهاتيون،  
 اصل عاشقن جي آهي آڍ اهائي.  
 مڇي مرد ٿي تون، پيالو درد پي تون،  
 ڇڏي ساءِ سمهڻ جو ڪر ويهڻ سان وفائي.  
 ”درياهان“ دير ڇڏ، سگهو پاڻ گوندر گڏ،  
 وڃي ٿي ويسر ۾ عمر سڀ اجائي.

### ڪافي

بيهي ڪنڊيس برداري ويار ساري سڀ خمار.  
 هٿ چميو سائين بير چمينديس، پنبئين سان پيزارا  
 صدق ٿينديس سو واري ويارا  
 پلپل تنهنجا پور پون ٿا، نيڻ نماڻا روز رئن ٿا،  
 طلب لايو تڪراري ويارا  
 جانب هڻي ٿو جنهن کي جوڙي، خوب اکين جا خنجر کوڙي،  
 سڌ تنين کي آ ساري ويارا  
 دوست ”درياهان“ جو سور نه سهڻ جوڙج ڪو دلا سو گڏ رهڻ جو  
 ڏکن منهنجي دل ڌاري ويارا

## ڪافي

بي چون منجهان آواز اچي ٿو  
 ڪري عاشق ٻاجهون ڪير سهي!  
 انهيءَ منجهاران اچڻ ويڻ جو  
 ڪي سالڪ ڪندا سير سهي!  
 ديد انهيءَ درياه جي ڪيڙا،  
 لڪ انهيءَ ۾ ويا لڙهي!  
 انهيءَ نابود منجهان نابود جي ٿيڙا،  
 سوين انهيءَ ۾ ويا پهري!  
 ”درياهان“ چوي سائين اتي وڃي بيٺا،  
 تان تي ويندا ڪير ڪهي!

## ڪافي پهاڙي

هميشه يار هج مون وٽ، ويڻ جي ڪانه ڪروائي.  
 ڪڏهن ڪڏهن منهن ڏيکارين ٿو  
 مائٽن سان يار مارين ٿو  
 انهن ڳالهين سان ڳارين ٿو هجي شل هوت هيڪڙائي.  
 ڏٺيءَ ڪلندي اڪيون ڪوڙي،  
 لکيو قسمت پئي لوڙي،  
 وڏو تنهنجي نينهن نهوڙي، جاڪون تو لٽو سڄڻ لائي.  
 ڪيا سر گهور هيءُ گهوري،  
 پڄان تنهنجي نه هڪ ٿوري،  
 ڪيان توکي ساه اندر سوري، ملو لهي من جي ماندائي.  
 ”درياهان“ درد جو دارون،  
 هٿين پيرين ڪيان ڪارون،  
 فراقن دل ڪئي قارون، اچي ڏيو دوست دلجائي.

## ڪافي

منجهان ذاتي صفاتي ٿي،  
هُتان هت ڪينءَ هليو آئين!

ڪڏان ڪهوڙن سندو گاهي،	ڪڏان شملا ٻڏي شاهي،
اهي لذتان وٺڻ آئين!	وٺئي ٿي ڳالهه هر ڪائي،
ڪڏان معشوق من مُهڻو!	ڪڏان عاشق سدا سهڻو
ڪڏان ٿو روح ريجھائين!	ڪڏان قاتل قتل ڪُهوڻو
ڪڏان خود ڪين ڄاتو ٿي،	ڪڏان پنهنجو پاڻ سڃاتو ٿي،
اڃا ڪمبي ڏي ٿو ڪاهين!	انهن رمزن ريجهايو ٿي،
ڪنهن جو به نه آه ڪاٺيارو	”درياخان“ سمجھ سر سارو
متان ٻيو پوئل ڪو پائئين!	ڪڍي ڇڏ خيال خوديءَ وارو

## ڪافي

سُهڻا ڪين سڪاءِ، صدقو پنهنجي سر جو.

نالي نانءُ ڌڻيءَ جي، ويندڙ وري واجهءِ،

چوري پوري چپڙا، صدقو پنهنجي سر جو!

ٻاجهارين ٻانهن سين، ڳڻڻ پريو ڳالهءِ،

ڀولل پاڪر پاءِ، صدقو پنهنجي سر جو!

دلبر ”دريا خان“ سان، صدقو پنهنجي سر جو!

پاسو پلنگن لاءِ، صدقو پنهنجي سر جو!

صدقو پنهنجي سر جو!

## ڪافي روپ بلاولي

عاشق آيو ڪري هل هنگام،  
 جيءَ اندر جنهن جوش جاڳايا،  
 جهاتيءَ ۾ جيئن پاتم جهاتي،  
 عشق اچي ڪئي اُت اثباتي،  
 اڳيون محبوبن جي ڪنڌ ۽ ڪاتي،  
 موتو واري پُرجهي نام،  
 لاسي لوڙيا سڀ لهايا،  
 ناز وارن جي نازن ماريا،  
 عاشق ووءَ ووءَ ڪن ويچارا،  
 بيشڪ تن جا سخن سچارا،  
 اتي اڙايا درس جي دام،  
 ڏاڍي فڪل ڪنهن ڦند ڦاسايا،  
 عشق وارن کي پيو ڇا ڄاڻي،  
 بن محبوبان ڪير سڃاڻي،  
 ملهه خريد ٿيا بي زر ناڻي،  
 سڀ ڇڏيائون ننگ ۽ نام،  
 سخن سچن جا ٿيا سجايا،  
 ”درياخان“ عشق اندر جن آهي،  
 لهندا لوڪ لاڳاپا لاهي،  
 ڇا مجال ڪنهن ٻئي جي آهي،  
 حسن اڳيون جو هڻندو هام،  
 عشقبازن اُتي سر اگهايا.

## ڪافي

سڪ ۾ ڏيان ٿي ساه، منهنجا ڍولڻ سائين،  
ڪج ڪا هاڻي محب ملڻ جي.

اڪڙيون اڙائي وڌءِ ڦاسائي،  
برھ مچائي تنهنجي باھ.

تو جهڙو جڳ ۾، ڏسان ڪونه پيو.  
ويتر آھين بي پرواھ،

چڏ تون بي نيازي مچ تون آري،  
”دريا خان“ سندي دانھ.

### مداح (مدح)

سارھ ڪيان سبحان جي، تنهن تون محمد شان جي،  
 سولي ڪريو ايمان جي، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 جنهن دين جو پهريو دل، فرمان ۾ ٿيو سڀ فلڪ،  
 ديو و پري آدم ملڪ، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 دائر و سو دارالبقا، تنهن لوڪ ۾ تنهنجو لقا،  
 تو در ڪمي آ ڪانه ڪا، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 تون در آهين دارين جو، صاحب تون ئي ثقلين جو،  
 ڪعبو به تون ڪونين جو، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 ها طالبن مطلوب تون، پڻ ڪاشف القلوب تون،  
 عاشق خدا محبوب تون، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 تنهنجي صفت جو ڪونه آ، بي حد باري بي بيان!  
 جيڪي چوايو سو چوان، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 صاحب سندم سرتاج تون، مالڪ آهين معراج تون،  
 ٻانهي مٿي ڪر ٻاجه تون، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 هي آرزو آهي سدان، تو پيشاني پاڪ پسان،  
 ويران ويڙهو ٿي وسان، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 پنجن تنن جي پاس مون، هر دم حسين آس مون،  
 ڪر دل جو خانو خاص مون، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 مان يار تو چارئي ميان، ٻي در ڪنهن جي نا وڃان،  
 منجهه سڪ جي سڀني سڃان، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 توکان منافق جي مڙيا، ابلڀس سان اوهي اڙيا،  
 سي رافضي توڙون تڙيا، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 مرسل مديني جا ڌڻي، تون بار گهين جا ڪڻين،  
 ڪر دور دشمن کي هڻي، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 جڏهن نفس ناقص ٿي چيو، سو مون سيوئي ٿي ڪيو،  
 تو در اچي پينار پيو، يا مير مرسل مصطفيٰ.  
 حاصل ڪريان سڀ حاجتون، ڪوڙين پڄاڻين ڪاج تون،



ڪر نا ڪهين محتاج تون، ڪوڙن سندو مون ۾ وکر،  
 تون ميت عيبن جا اکر، سڪرات دم سهنجو ڪرين،  
 تون ئي پرين پنهنجو ڪرين، بيشڪ بدعتي هي بندو  
 هي سڳ سوالي تو سندو، دل ديد جي ڪوليو دري،  
 ساري عيان ٿي سروري، آيو آهيان آڙ اوت ۾،  
 ڪر تون گهيرو هن گهوٽ ۾، ڏي دل صفائي دين تون،  
 ڏي حُب پنهنجي مسڪين تون، هي ڪر نه دل عيبن پري،  
 ڪي ڪوٽ مان ڪرتون ڪري، ڪر تون سواليءَ کي سچو  
 ڪر ٻاجه پنهنجيءَ سان ٻچو، ڏاٽر سچا تون ڏاٽ ڏي،  
 ڪلمي جي وائي وات ڏي، ”درياخان“ جي دل شاد ڪر،  
 مدعي مڙئي ماد<sup>(2)</sup> ڪر

يا مير مرسل مصطفيٰ، ڪوڙين ڪيم ڪيئي مکر،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، سو وقت اهنجو نا ڪرين،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، آهيان گناهن ۾ گندو  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، ٿي حج حاصل اڪبري،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، ڪر نا ڪچي هن ڪوٽ ۾،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، هڪ طاعت ٻي تلقين تون،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، واهر ڪريو وارث وري،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، توڙي آهيان ڪرتئون ڪچو  
 يا مير مرسل مصطفيٰ، ڏينهن رات پنهنجي تات ڏي،  
 يا مير مرسل مصطفيٰ<sup>(1)</sup>، تون عشق سان آباد ڪر  
 يا مير مرسل مصطفيٰ،

(1) مداحون ۽ مناجاتون - جناب ڊاڪٽر نبي بخش خان بلوچ ص 431 کان 433، سنڌي ادبي بورڊ

(2) ماد = مانڊ.

## سرائڪي ڪلام



## بيت

## سرهي رانجهو

مئين ماهي دي بيلي ويسان، جهل نه رهسان جهلي،  
ڪُت نه ميندي مائيو ميڏي، مئين تل نه رهسان تلي.

رنگپور شهر سيالين سائين، ميل سياهي ملي،  
ويسان چير چناب دي چالي، چاڪ ڏهون مئين چلي،  
”درياخان!“ روح رهيا شه رانجهن، مئين ڀل نه ٻي ڪنهن ڀلي.

مئين ماهي دي بيلي ويسان، تر تر نديان نالي،  
گهڙ دي گهڙ نه ڏرسان، توڙي ڪڙڪن ماه مه پالي،  
رنگپور شهر سيالي ساري، ڪل ڪريسان ڪالي،  
روز ميثاقون انگ اساڏا، لڪيا لڪڻ والي،  
”درياخان!“ محبت نال ماهي دي، پالي پالڻ والي.

من ماهي آ تخت هزارون، اٿان چاڪر سڏايا،  
آله آپ اساڏا چا، پينگهي وچ نڪاح پڙهايا،  
چٽس جهنگ دي جهيڙي ڪنون، ماهي آله ملايا،  
ٻاٻل والا ٻيلا مئين تان، چاڪ اڪين چھ لايا،  
”دريا خان!“ روح رهيا شه رانجهن، سيني وچ سمايا.

صاف ماهي دي بيلي ويسان، چيز چناب دي چاري،  
رنگپور شهر سيالين دي وچ، نينهن مريندا نعري،  
ماهي نال مهاري رهسان، خوش ٿي چڙهسان ڪاري،  
روح رهيا شه رانجهن، اي جند وار نه واري.

مئين ماهي دي بيلي ويسان، تر تر نديان نئين،  
 پيڻيان پاڻي، سڪي مائي، مارڻ آون ميان،  
 هڪا هيرتا مئين پي نسي، ڪيون ڪر لوڪان لئين،  
 ڪيڙيان پاس مئين پاس نه ڏيسان، پاس ماهي دي پڻيان،  
 ماهي نال مھاري وڙسان، رنگپور ڪنون رهڻيان،  
 جس نگري ماهي يار نه وسندا، سانگري سچ سڻيان،  
 ”درياخان“ روح اندر وچ رهيان، شه رانجهن ديان بره  
 براتيان رهيان.

عشق ماهي دي اي ڪم ڪيتا، بره برساتيان لائين،  
 برسن بوندان نين ڦوهاري، هر دم منجه سيالين،  
 سانوڻ ماه ديان وڻيان بدليان، بيلي ٿڌيان چائين،  
 ڪڻڪن گهنڊيان، رنگن منجهيان، لون لون دي وچ آهين،  
 ”درياخان“ ميڪون ميل شه رانجهن ته ڪوله ٻلها گل لائين.

مئين ماهي دي بيلي ويسان، سچي سڪ جهيندي،  
 مئين وچ مئين نه ره ڳڻي، آس پياس آهيندي،  
 لون لون وچ لقاء ٿيوسي، طلب تار تنهيندي،  
 ”درياخان“ روح رهيا شه رانجهن، پڇين ڪيهي عرض ڪنهندي.

مئين ماهي دي بيلي ويسان، ٻاٻل گهر نا بهسان،  
 مهڻي ماهي يار والي مئين، سڀئي سر تي سهسان،  
 چاڪ ڪيتي دل چاڪ ميڙي، مئين ٺاه نه ٻي ڪنهن ٺهسان،  
 و نحن اقرب عشق ٿيوسي، آپ وچ آپ سميسان،  
 ”درياخان“ روح رهيا شه رانجهن، لون لون وچ لهيسان.

مٿين ٻيلي ميڏا يار ٻيلي، ڪيوين جوڙ اُسي دي هووان،  
اوڳڻ هاري بار بديان ٻڌ، ٻيئي ٻي ڀر روٿان،  
پٽڻ سڌ ملاح ڪريندي، مٿين نال ڪنهندي سووان،  
”درياخان“ اٿاوي بار ميڏي، ته مٿين پور پھلي لنگھ پووان.

پار تنواران يار منجهين ديان، بيدار ڪيتا ڀڙڪي،  
ڀڙڪي باھ برھ دي اندر جيوين دوزخ ڀڙڪي،  
ڦڙڪي دل ڪيتوئي قابو نال زلف دي ڦڙڪي،  
”درياخان“ ڦڙڪي دل ميڏا، سڻ ڪرڪيان دي ڪڙڪي.

ڪيڙي مھڻي ڏيندي، هڪو رانجهن ٿيم ڇٽا،  
جو رنگ ڪيڙيان نو لڳي مٺا، سو رنگ اسانون ڦڪا،  
لا مقصود في الدارين، هڪ رانجهن سڌا ڪٺا،  
جهنگ سارا مدعي ميان ”درياخان“، پر سانون ويندي نه  
ڪنھن ڏٺا.

### متفرقه

برھ باز تي مٿين مرغابي، مينون ڇا چنبيان وچ ستي،  
تڙقان تڙقان تڙف نه سگهان، وچ ڦٽان دي ڦٽي،  
نت نت ڪاوي تازي طعاما، ماس هڏان تون پَٽي،  
”دريا خان“ عشق عقاب ماهي دا، جو منهن پوي سو پَٽي.

عشق ايمان اسان ڪون آيا، ڇٽي جند جوابون،  
ڪفر وچون اسلام ٿيا، بيدار ٿيو سي خوابون،

صورت مرشد صفي الله، ڪليا گھنڊ نقابون،  
 ”درياخان“ آپ ڪون آپ سهي ڪر ٻئي ڦمي چوڙ ڪتابون.

جي وحدت چوڙ عادت وچ آوندي، قلب تنهان دي ڪالي،  
 اصل چوڙ نقل وچ پوندي، راهنون رد ريزالي،  
 دنيا دلئين برابر ڄاتي، خام خودي دي خيالي،  
 ”درياخان“ دم دم دي وچ عاشق، سمهن ڪاف ڪشالي.

جي دل تي هوڊا حرف لکين، تان هوڊا ٿيوڻي نظارا،  
 اول هو تي آخر هو هو دا زور پسارا،  
 هوڊي پاڻي نال هميشه، ڪليا گل هزارا،  
 ”درياخان“ هوڊي وچ گم هوڊا، هن آپ ڪون ڪر وسارا.

چوڙ مسيت ڳئين ميخاني، ڪفر قبول ڪيتو سي،  
 ڪاءُ حرام حلالئون توبه، ساقِي ڏس ڏتو سي،  
 شرڪ شيطان ٿيو سي نيڙا، مٿين ڪون سمجه سٿيو سي،  
 ”درياخان“ ظاهر باطن آڪئين، هڪوڻي حق ڏٺو سي.

جي ظاهر ويڪين باطن ڪون، تان باطن ظاهر ٿيوڻي،  
 جيوين آهيري ويڪين اڪيان نال، ته اُلٽا آپ ويڪيوڻي،  
 ايوين طالب وچ طلب دي، مٿين ڪون گم ڪريوي،  
 ايوين ”درياخان“ وچ اله دي، موتو اٿي ڦر جيوي.

جي مٿي دل جيئنڊي ڄاڻي، ته هوڊا حرف ڪماوي،  
 اي دم حياتي هر دم هو وچ، هو وچ هو سماوي.

اندر هُو تي ٻاهر هُو. دم هُو دي نال جيئاي،  
هُو دي نال محبت جنهن دي، مئين ڪون مار هتاي،  
”درياخان“ ڏونهان جهانان دي وچ، هُودا حرف ڪماوي.

جدا ٿيوان تان جند وڃي، جي ملان ته ملڻ نه ڏيندا،  
پنڌ پوان تان اڳون سونهان، اُوجهڙ راه ڏسيندا،  
سُج پوان ته وسطي دي وچ، وچ وسطي گم هوندا،  
”درياخان“ عشق استاد اسانون، وٽ ڪيهي سبق سڪيندا.

شوق شراب پراڻا سانون، جام ڏٽاير ساقِي،  
پيوڻ نال شراب طهورا، فرق پيا وچ فاقِي،  
آگي انگ اتاريا اکر منهن محراب ملاقي،  
”دريا خان“ دم دم درد رکين، جيسين روز حياتِي.

دلبر نال ميڏي دلڙي پئي، عشق جهراڻي جهڙدي،  
ڪنڍي سخت محبت والي، هينانءِ ڪلي وچ ڪري،  
ڏور ڏڪاندي هٿ دلبر دي، جيڏي ساهي تيڏي سُري،  
”درياخان“ اسان ڏي اصلئون آهي، ڪا اها نصيب ڌري.

ڪونجان ڪنون فراق پڇيجي، جو ڪرينديان روه قطاران،  
ڪنڀ جنهاندي تنبوري وڄدي، تن جنهان ديان تاران،  
ڪرن درد فراق واليان، طرحين طرحين تنواران،  
ٻڇي ميل ڪونجان نون مولا، ته وچ يار ملن گڏ ياران.



عادت چوڙ وحدت وچ پوندي، ڳاله تنهان دي ڪيهي،  
 ڪن فيڪون اصل دا عاشق، ڏيه سڃاڻن ڏيهي،  
 رهن آزاد هميشه عاشق، نانگي ڦرن سي نيهي،  
 ”دريا خان“ ڏي سر سهندي عاشق، جيهي آوي تيهي.

جي اي دل جئيندي ڄاڻين، ته ذاتي اسم سڃاڻين،  
 پاس انفاس دي نال هميشه، ڪلن گل ڪوماڻي،  
 وچ ظلمات آب حياتي، خيال خمر ڪر ڄاڻي،  
 ”دريا خان“ ظاهر باطن عاشق، ڏي سر عشق اڳهاڻي.



## ڪافي تلنگ

عاشقان ادا آلتا راه، راه ميان!

آلت سماون مشڪل بازي،

آلت اوياري عاشق تردي،

هن غواصي رنگ بحري،

دهشت نال درياه، درياه ميان! پيرتڪاوڻ مشڪل بازي.

باه بره وچ عاشق بلدي،

ويڪ شمع ڪون پتنگ نه ولدي،

پوندي وچ آڙاه، آڙاه ميان! جان جلاوڻ مشڪل بازي.

جنگ فرنگي عاشق جوڙين،

ڏي سر سورهيه منهن نا موڙين،

ويندي ني ڪاه وڪاه، قدم اُناوڻ مشڪل بازي.

”درياهان“ ڪوچ نغارا وچ دا،

گذري ڪون چوڙنڪرڪ اڃ دا،

جيڪا وڻي سا واه، نينهن نياوڻ مشڪل بازي.

## ڪافي آسا

لڳي عاشق اڳن تن چولي،  
 انگ انگ وچ بيرنگ ٻولي.  
 ونحن اقرب رب فرمايا،  
 اندر ٻاهر رب سمايا،  
 ڏورنهي ٺهين اولي،  
 فانما تولو عشق اشارا،  
 هر جا هي نور نظارا،  
 جيڪو اڪيان اندر ديان کولي،  
 و في انفسڪم قول قرآنا،  
 هي فرمودا هي فرقانا،  
 ڀن عبديت دا يولي،  
 ”درياهان“ آپ وچون نا آئي،  
 ”غ ل م الف“ جاڻي،  
 آهي عين علي دل قولي.

## ڪافي بلاولي

آپ ڪون ويڪڻ آيا آپ، آدم دا ڪر جوڙ آئينا،  
 بيرنگي دا ڪر بهانا، صورت وچ سمايا آپ،  
 آدم دا ڪر جوڙ آئينا،  
 ڪٿان باطن دي وچ بنيا، ڪٿان هل هلايا آپ،  
 آدم دا ڪر جوڙ آئينا،  
 ملين هٿئون منصور مرائي، انا الحق آلايا آپ،  
 آدم دا ڪر جوڙ آئينا،  
 ڪٿان هوندا هوش هنر وچ، ڪٿان پل پلايا آپ،  
 آدم دا ڪر جوڙ آئينا،  
 ”درياهان“ عاشق غلام علي دا، وحدت وچ ولایا آپ،  
 آدم دا ڪر جوڙ آئينا.

## ڪافي جوڳ

سانوڻِ رَمزان لائين وُل يارا  
ڪٽڻ آڻڻ مول نه ويسان!  
چرخا چا ست ڪريا سي، ڏي عشق اُڏار  
چاهئون تان مئين ول نه چڪيسان!

اڄ اسانون آ مليا هي، صورت دا سردار  
طلب تنهين نال توڙ نپيسان!

نال سهڻي دي، سٽوڙي سهيليان، نينهن لڳا نروار  
نال تنهين دي وره ونديسان!

روز ازل ڪنون مئين ته هان، جنهن جاني دي پٺار  
پير پڇوتي مول نه پئيسان!

اله ڏيڪڻ نال اڪيان دي، دلبر دا ديدار  
ديدان دي وچ ديرا لئيسان!

”دريا خان“ دلبر دل وچالي، دم دم دل ديدار  
نينهن تنهين مئين نيجه نيسان!

## ڪافي پيرم

ڪيون ڪران مئين نال ڪيڙياندي،  
رانجهون نال ساڏيان لاوان.  
پار درياهان جهوڪ رانجهن دي، مئين ٻانهڙي ترتر جاوان.  
مڱ ڪيڙياندي مول نه ٿيسان، ميڙيان رانجهن نال نڪاحان.  
دوست ”درياهان“ محبت جو مليا، چولي اندر نهين ميان.

## ڪافي

ڪيا ڪڇ ويڪين ڪنهن نون ڪنهن نون،  
 'ڪيان دي وچ تون هي وسدا.  
 صورت دي وچ مورت ساڳي،  
 نقطا ويڪڙ نينون نينون.  
 ديد سڄڻ دي عيد برابر،  
 چشم وڪاڻ چينون چينون.  
 گل ڦل دي وچ رانجهن ميڏا،  
 پنوري پڻڪن بينون بينون.  
 "دريا خان" غير نه ڄاڻي ڪوئي،  
 عينا سڃاڻين عيون عيون.

## ڪافي روپ آسا

هر وچ هرڪون، سهي ڪيتو سي يار  
 هر وچ تجلا هر دا يار.  
 هر رنگ دي وچ سير ڪيتوسي،  
 بيرنگ ارت اڱر، ڪر ٿيوسي،  
 ڪيها پڇڻ وٽ تنهن دا يار.  
 انسان سري سمجهيوسي،  
 دانا سره راز ٻجهيوسي،  
 ڪيها ڪرڻ ڦول ڏوجها يار.  
 رنگ وچون بي رنگ بڻايس،  
 جيون گل وچ بانس چٻايس،  
 جنهن دا شرح نه ڪو شمار يار.  
 "دريا خان" هر صورت سبحاني،  
 جت ڪت نور ڪوه طوراني،  
 بت ڪنن ڪنن ٿيوسي بيزار يار.

## ڪافي روپ قصور

مشڪل يار دي ياري هي،

لانوڻ، نينهن نپاوڻ اوکا!

لانوڻ عشق ڪيها پڇتاوڻ، جڳ ملامت خواري هي.

عاشق نام سڏاوڻ سوکا، زور نہ هاسي زاري هي.

عشق ملامت جنهن تي آوي، ڏي سر چاوڻ ساري هي.

”درياخان“ برهه دي اوکي بازي،

بار چاوڻ سرباري هي.

## ڪافي سر سارنگ

عشق رنگي رنگ دي وڃ، بيرنگ چارنگ لاي هي،  
 سڀ دي رنگ دي وڃ سائين، سهجون آبي آپ سمايا هي،  
 اي جڳ بازيگر دي بازي، سانگ سرير چا ٺاهيا هي،  
 آپ ڪيڏي، آبي ڪيڏاوي، آبي پل پلايا هي،  
 بحر اسرار بهار بڻايس، ببلل شور مچايا هي،  
 ڪيئي ڀڻڪار پنور پئي ڀڻڪن، بانس اتي پرمايا هي،  
 ڪيئي بحر بيا بان بيحد، ڪيئي جهنگل چايا هي،  
 گهٽ گهٽ دي وڃ سوئي ٻولي، انت ڪسي نهين پايا هي،  
 ڪٿان قاضي کولي ڪتابان، وڃ مصلي منهن پايا هي،  
 ڪٿان ڏٺا ريدار بڻيا هي، ڪتي سنت سڏايا هي،  
 چوڙ غافل غفلت بازي، اي ڪل ڪوڙي ڪايا هي،  
 ڪل شيء پريا پر پورڻ، انڌ يا پنڌ اجايا هي،  
 دلبر ”دريا خان“ دا، وڃ وسدا، هر شيء دي وڃ آيا هي،  
 آبي اڀي ٻول ٻوليندا، آبي آپ گڻ گايا هي.

## ڪافي بلاولي

نام تيڏي جڳ موهيا يارا

بيوس لڳيان وچ لڄ پالين.

عشق جڏان به حڪم هلايا، آوڻ نال ڪيها ننگ لايا،  
بيوس ٿيسان هر لاچار نت نت ماس هڏان تون ڳالين.  
جي تون آوڻ اسان ڏي ويڙهي، گهول گهٽان مٿين سڀئي ڪيڙي،  
ويڪا تئير ڪون مٿين ڪر سينگار هيڪر اسان ڏي اڪڙيان پالين.  
ڪٿان رائجهن دا ڪيتيءَ راي، ويڪڻ سير سيالين آيا،  
هيري ڪارڻ حال گنوايا، چوڙڪي آيا تخت هزار  
ڪرڪي چاڪ چناب دي چالين.  
”دريا خان“ عشق عقل ڪون نيتا، باه بره دي آنا ڪيتا،  
پڙڪي پڙڪي بي شمار نت نت جو شان وچ پيا جالين!

## ڪافي پهاري

عشق دي آلتِي چال، لوڪان نون خبر نه ڪائي.

آلتِي ٻولي، آلتِي چالي، آلتِ سماون مست مولي،  
اهو فقر دا حال، رهندي صاف صفائي.

عشق امام حسين سائين چايا، جنهن سر نيزي نينهن جهلایا،  
بي دي ڪيا هي مجال، ڏيندي ملڪ اوگاهي.

عاشق چاڙهي اوهين وچ چڙهي، موتوا ٿي، انا الحق پڙهي،  
مرڻ جيوڻ دا نه خيال، ڏي سر ڪرڻ ادائي.

عاشق نام سڏاوڻ سوڪا، ”دريا خان“ نينهن نپاوڻ اوکا،  
دم دم ڪرڻ وصال، رکدي خيال خدائي.

## ڪافي بهاري

عشق ديان اُتيان بازيان، ڪوئي اُلت بازيگرو ڪي.

علم حقيقي عاشق پڙهي، ڪل نهين ملا قاضيان.

عشق دي منزل اوڪي اٿانگي، گوء چاتي ڪنهن غازيان.

عشق اله دي باجهون يارو بي حيلي سڀ سازيان.

”دريا خان“ دم دم هادي دي،

سوجانان لڪ آزيان.

## ڪافي بلاولي

رانجهون سانون رمزان لايان،

چاڪ چڪڻ سانون رمزان لايان،

رات انڌاري چڪڻ چاڙهي، رم جهم مينهن وسن ڦوهاري،

عشق اري وچ آڻيان!

مل سياليان ڏينديان طعني، اٿنديان بهنديان نال بهاني،

ڪيها ڏوهه پرايان!

گهول گهتان سڀ ڪيڙيائي ويڙهي، جنهان وت ساڏي دوست نڪيڙي،

بن چون تنهان ديان ڄاڻيان!

”دريخان“ راه رانجهو ٿي ويسان، هڪ پل پير پڇي ناپيڻيان،

توڙي هوون مايان پرائيان پائيان!



## ڪافي سر آسا

مُڪڙا اسان نون وڪاڪي،

وت ڪيون هُنَ آپ چُڻندين!

سائين مُڪڙا وڪاڪي.

ونحن اقرب دا ڏس ڏتوئي، اهوئي سبق سڪاڪي،

سائين سبق سڪاڪي.

فانما تولو فشر وجهه الله، جت ڪت رهيون سماڪي،

سائين رهيون سماڪي.

انا احمد بلا ميمي، اهو حرف الاڪي،

سائين حرف الاڪي.

”دريا خان“ ڪنون باقي ڪيون، وتندائين آپ چپاڪي،

سائين آپ چپاڪي.

## ڪافي جوڳ

بیرنگ بن ڪر آيا يار

سڀ رنگ دي وچ سهڻا سائين.

سڀ رنگ دي وچ سير ڪريندا، انت ڪهين دي وچ نهين اُوندا،

ناه عجب اهو ٺاهيا يار.

آدمر اولي آپ چپايس، سانگ سرير دا بيڪ بڻايس،

صورت وچ سمايا يار.

رنگپور آڪر ڪيتس راياءِ، آپ ڪون آهي ويڪڻ آيا،

ڪهڙا بازيگر بيڪ بڻايا يار.

”دريا خان“ آپ وچون نا آئين، حق سڃاڻين غير نه آئين،

جيون منصورا نا الحق الايا يار.

## ڪافي جهنگلو

عشق سوداگر سردا آيا،  
 ڏي سر سودا سنگيني وي يار.  
 سر سر راهه سپوڻي سوي دي وچ، آپ سودا چا انگيني وي يار.  
 غير گمان، خيال خودي دا، وچ وحدت ونگيني وي يار.  
 عشق دي راهه سڃاڻن عاشق، ڪڍ پياڻي چا تنگيسي وي يار.  
 آءُ عشق وچ راهه عشق دي، نيڪي بدي دونون ڏنگيني وي يار.

”دريا خان سودا پي سوي دا،  
 موڙي محبت منگيني وي يار.

## ڪافي جوڳ

مُرلي ڏم مچائي يار  
 رنگپوردي وچ رانجهن والي.  
 تخت هزاري دا رانجهن سائين، آيا ويس مٿائي يار  
 ڪر چاڪ چناب ديان چالي.  
 و نخفت فيه من روجي، ساڳي ڦوڪ سٿائي يار  
 ڳالھه اهين تان مٿين وت ڳالي.  
 اصلئون اهو سر اهڙاڻا، ڪل ڪهين ڪون نه ڪائي يار  
 پريت اسين نال آبي پالي.  
 ”دريا خان“ ساڏي اصلئون آهي، نال ماهي دي سچائي يار  
 خام خيال ڪيڙياندي خالي.

## ڪافي بلاولي

واهه بازیگر تیڏي بازی،

سڀ اولي آدم سازي.

یونس پیٽ مڇي دي پسيءَ، نوح نبي طوفان چڙهاييءَ،  
 مُلین هٿتون منصور مرابيءَ، ٿي قضا تي قاضي.  
 ڪٽ حاڪم ٿي حڪم هليندا، ڪٽ گداگر ٿي گذريندا،  
 ڪٽ سورهيءَ ٿي ملڪ مريندا، ڪٽ تیغ بهادر غازي،  
 ڪٽ سناسي نام سڏيندا، تلڪ مٿي ڳل جٿيا پئیندا،  
 ڪٽ مصلي مسیت وچیندا، ڪٽ وعظ ڪریندا وعظي،  
 سهسین مذهب سیر ڪریندا، انت ڪنھن وچ نہین آوندا،  
 ڪٽ شيعا ڪٽ سني سڏيندا، ڪٽ روزیدار نمازي،  
 ”درياخان“ دعوا دور ڪیتوسي، امر علي ارشاد ڏتوسي،  
 دل وچ ٻيا ڪوئي پھ نہ پيوسي، رمز اھين دي وچ راضي.

## ڪافي بروو

ميخاني وچ مليا يار

ويڙ مسیت اسانڌا ڪھڙا مقصد!

بتخاني ڪنون بيزار ٿيوسي، سجدي سڄاڻد، سڀ پُل ڳيوسي،  
 جڏان آپ تي آيا اعتبار ورد وظائف ڏوهين ٿئي رڌا

مڪ محراب سڄڻ دي صورت، بيرنگي موھيا، موھڻي مورت،  
 جڏان عشق ٿيا اظهار تڏان اندر اپڻا ٿي ڳيا مسجدا

هٿتون هادي دي جام پيتوسي، ڪھنا ڪيف ڪلال ڏتوسي،  
 تنهن دي خاص خمار تالان ڪيتي تسبيح تهجد!

”دريا خان“ آپ وچون نا آئين، حق سڃاڻين، غير نہ ڄاڻين،  
 ڪول اڪيون تان ٿيوي نروار الله مرشد هڪائي هي خدا

## ڪافي جهنگلو

عشق نه پڇدا ذات صفات،

جنهان نولڳدا، سي پروان!

جنهان وت لڳڙا، سي وتن ديواني، ڪڏان وڃ مسجد ڪڏان ميخاني،

ڪڏان وڃ مستي ڪڏان حيران!

وڃ ڪفر اسلام دي قائل، خير شر ڏونهان وڃ مائل،

ڪڏان وڃ وستي ڪڏان ويران!

نا وڃ دين، مذهب نا آندي، ڏک سک ڏيک نه ٿيون ماندي،

رهن هميشه اپڻي وڃ پئي غلطان!

”دريخان“ عاشق عشق ڪماون، دم دم خون جگر دا کاون،

ڏي سر ساه ڪرن قربان!

## ڪافي بلاولي

پڇ درد ونديان دا حال،

اورهندي اپڻي خيال.

درد واليان ڪون عام ڪيا ڄاڻن، بن محبوبان ڪيون سڃاڻن،

گجهي تنهادي ڳال.

ڏٺڙي ٻاجهون نه عاشق رهندي، هن غواصي رنگ بحر دي،

ڪيتي نينهن نهال.

عاشق مست رهن ميخاني، ڪڏان وڃ مسجد ڪڏان ميخاني،

ڪڏان چلدي عجائب چال.

”دريا خان“ عاشق مرڪي جيون، وحدت جام وصالئون پيون،

هٿئون ڪيف ڪلال.

## ڪافي جوڳ

عشق ماهي دي سانون نديان تاريان،  
بيوس ٿي هان سئيار توبه زاريان.

تيڙي ڪيتي مين ڪڙي ڏيڪان، نيئين وهن رم جهم ناريان.  
درد بنا دم ڪوئي نهين دانه، بار آيا سر برهه ديان باريان.  
پچديان ٻاڻيڻ جوتشي، ڪانگ سدا پئي اڏاريان.  
سهڻا ويڙهي آوسي، مئين تان وارڻ واريان.

”دريا خان“ درد تهاڙي ڪيتي، بهون مانديان،  
مُڪڙا وڪاوين سانون، محبت ماريان.

## ڪافي بلاولي

لڳڙيان دا پيندا دور،  
نال خوشي ڪل سرتي سهاون!

جنهان وت لڳڙي سي وت ڄاڻن، محبت دا مذڪور.  
جنت دوست نباهي دوزخ، ڪيا وت حور قصور.  
هڪواري مل يار پيارا، دو جڳ ٿيوان سرور.  
طعني تهمت سڀ لوڪان دي، سانون سڀئي منظور.  
”دريا خان“ عشق دي اها نشاني، ڏي سر ٿي مشهور.

### ڪافي جهنگلو

جٽ ويڪان تڻ تون هي وسدا، ساڳي صورت يار دي،  
 ڏٺي دل تون ڪر پاسي، ٻيائي ٻي پار دي.  
 اندر ٻاهر تون ئي وسدا، اک پٽ اهنڪار دي،  
 فائينا تولو فٽر اشارا، سوجه سرجڻهار دي.  
 ڪٽ عاشق عشق دي بازي، چو طرف چوڌار دي،  
 سر جدا تن تيغ تلي، دل جهلڻ ڪادار دي.  
 ڳالهه آڪڻ وچ نهن آوندي، عشق دي اطوار دي،  
 سڏ ڪنهن ڪون آبي هوسي، بيخودي دي بار دي.  
 ”دريا خان“ قابو ڪش قمر تون، آڻي آپ اعتبار دي،  
 ونحن اقرب، ويجهه وسدا، مام تنهن مختيار دي.

### ڪافي تلنگ

تيڏي ويندي هي عمر وهاڻي،  
 تون تان سمجهه يار سياڻا.  
 اڄ ڪلهه تيڏا ساڻ لڏاڻا، ڄاڻ اي توڙ نياڻي،  
 ڪيون تون ٿيندائين آياڻا يارا  
 ميڏي ميڏي ڪر مايا ميڙبيءَ، ڪوڏي نه تيڏي ڪماڻي،  
 اُٿان نال نه جُلسيءَ ناڻا يارا  
 اِٿان ڏيسين، اُٿان ڪم آئسيءَ، اڳون اُن نه پاڻي،  
 ڪجهه پوک ڌرم دا، داڻا يارا  
 ”دريا خان“ تون ڪر ڪا آڻي، آپ وچون نا آئين،  
 پڇين جيون رب دا پاڻا يارا

## ڪافي برو

تخت هزاري دي جوڳي، جادو لایا مٿين نون!

بيخودي دا باب پڙهايس، هویا حال وهالي دا،  
سائين سمجهايا مٿين نون.

تن من اندر هويا بهاريان، کليا گل هزاري دا،  
آله چا وکايا مٿين نون.

ڪنين ڪُنڍل، مُک وچ مُرلي، لڳڙا نينهن نظاري دا،  
اهين جوڳي ڪُهايا مٿين نون.

”دريخان“ دم دم نال اساڏي لڳڙا پريم پياري دا،  
سڀني آ سمايا مٿين نون.

## ڪافي بلاولي

سانون ريزان رانجهن يارديان، هر وقت هميشه لڳ رهيان،  
هر وقت هميشه لڳ رهيان.

ويسان نه ره سان ماهي دي ٻيلي،  
ڪڻڪن ڪنڍيان، ڪانهن ڪهيلي،

لنگه ويسان سبزيان پارديان، مٿين مشهور ٿي وڃ جڳ رهيان.

پيٿان پاڻي، هٽڪي مائي،  
ڪرن ڪاڻي ٻي همسائي،

سانون مهڻيان نال ڪيو مارديان، مٿين تان طلب سڄي نال تڳ رهيان.

”دريا خان“ ماهي اله ملايا،  
جنهندي آهي، سو شاه پايا،

هن ڪيا ڏوه سنسار دا، مٿين تان نال ماهي لڳ رهيان.

## ڪافي جوڳ

دل خانہ هي خود خانہ،  
جي تون آڀا آپ سُڃاڻين!

جوئي ظاهر سوئي باطن، بيشڪ يار يگانہ،  
جي تون آپ وچون نا آڻين!

جوئي عاشق، سوئي معشوق، اي او سڀ بهانا،  
جي تون ڄاڻ ائين ڪون ڄاڻين!

\* ڪل شي محيط هم وچ، سڀ صورت هڪ معنيٰ،  
الا، جلوي جوت سماڻي!

”درياهان“ مڙڻ محال هويا، هڻ هي صاحب دانا بيٺا،  
پر ويندي هي دل وهائي!

---

\* إن الله عليٰ كل شيء محيط.  
خدا هر شيء تي حاوي آهي. (قرآن)



## ڪافي

عشق دا رنگ نه روپ نشاني،  
بي رنگ باهه دي وچ جلڻا اي.

عشق جتان وچ پاندا جهاتي،  
تنهن ڪون ڏيندا فيض حياتي،  
موتو قبل مرڻا اي، مار\* زغار خيال شهاني.

عشق زليخا نال ڪيها ڪم ڪيٿا،  
يوسف ڪون گهن مصر وچ نيٿا،  
دل پڇون تي نه ولڻا اي، زر خريد ٿيا شاهه ڪنعاني.

”دريا خان“ عشق دي اها نشاني،  
ڳول مريندا ڪيئي اخواني\*\*،  
جل نه بي ڪنهن ڄلڻا اي، ڏي سر عاشق ٿي قرباني.

عشق ملامت جنهن سر سرچائي،  
لاڪي دست عدو ڪر ڪاني،  
قدم عشاقان نٿي ڌرتا هي ويار پڻ چوڙيندا هي ڪل جسماني.

\* زغار = شور۔ مھيلوڙ، نمر۔ فريلو.

\*\* اخوان صفا: چوٿين صدي هجري (ڏهين صدي عيسوي) ڌاري جڏهن بغداد جي خليفن دين کي سياسي مقصد لاءِ استعمال ڪري انتشار پيدا ڪيو ته فلسفين جي هڪ طبقي نروار ٿي دين کي فلسفي جو رنگ ڏئي انسان ذات جي نجات جي لاءِ نيون راهون کوليون. اڳتي هلي هن طبقي خلاف ڪفر جون فتواون جاري ٿيون ۽ هن کي قتل جو سزاوار قرار ڏنو ويو. - مرتب

## ڪافي روپ ڪسوري

هر مظهر دي وچ عاشق يارو

سارا سير ڪريندي وه واها

الانسان، لباس ائين وچ،

طرحين پوش پهريندي وه واها

ڪڏان وچ مسجد، ڪڏان بتخاني،

جڻيا، تلڪ لڳئيندي وه واها

هوڪا مار انا الحق والا،

سولي قدم ڌريندي وه واها

ڪٿان ويراڳي پسمي لئيندي،

انگ پپوت رهيندي وه واها

ڪڏان مست رهن وچ ميخاني،

سر سبحان ڌريندي وه واها

ڳل وچ ڪفني دست پهوڙي،

دونھين درد ڏڪيندي وه واها

ڪڏان وچ بازار ڪڏان وچ پري،

گوشي ٻھ گذريندي وه واها

”دريا خان“ عاشق ڳاله ائين وچ،

موتو ٿي مر جيئندي وه واها

لٽي هول حساب حشر دي،

ڪيهي قرض پريندي وه واها

### کافي روپ بروو

عشق هويا فرهاد، مٿن دا ٽڪر ٽڪيندا.

طلب دا تيشا هٿ ڪريندا،  
 اول ماري ڪل مار چويندا،  
 پڇي ڪريندا شاد، هستي هوڻ مار هٿيندا.

جوڙ جسم دي سڀ ڊهيندا،  
 هستي دي ننڍڙي زور بڻيندا،  
 بره ڪيتي برباد، پاڙون پهاڙ پٽيندا.

اڄ اسان نو سٿو ڙي سيان،  
 بره برادن ڀاڱي پٺيان،  
 عشق ڪيتا امداد، عامي انگ مٽيندا.

”دريا خان“ اپڻا آپ نه ڄاڻين،  
 ظاهر باطن ذات سڃاڻين،  
 آپ رکين آزاد، اي سر غازي گوءِ سٿيندا.

## ڪافي روپ بلاولي

هر مظهر وچ وسدي هو آپ،  
رنگپور دي وچ مار ڪي نارا.

ڪُن وچون فيڪون ٿي آيا،  
آوڻ نال ڪيها رنگ لاي،  
بار برهه دا مئين سر چايا،  
ڏيئي رمزان ڪسدي هو آپ،  
عشق دا پسيوئي پاڻ پَسارا.

منصور معراج سولي تي ڪيٽا،  
وحدت جامر شهادت پيٽا،  
بيشڪ عشق اُهين ڪون نيٽا،  
ڏس انا الحق ڏسدي هو آپ،  
ملا هو ڦر ڪيتوئي مارا.

سر عشاقان حڪم هلايي،  
شيخ عطار دا ڪنڌ ڪپايي،  
شمس الحق دي ڪل ڪلايي،  
پرت انهندي پسدي هو آپ،  
قمر باذني دا ڪر ڪي اشارا.

”دريا خان“ عشق اسان ول آيا،  
سو مئين چُر اڪئين سر چايا،  
آيا ولدا نهين ولايا،  
رمز انهين ڪون وسدي هو آپ،  
لاشڪ آيا اسانڏا وارا.

## ڪافي روپ آسا

پڇو پڇو حال ٿي، سامي دا سٿيان،  
جهنگ پڇيندا آندا، ميري من پاوندا.

تخت هزاري دا جوڳي آيا،  
تين وت ڪيها ڪيها بيڪ بڻايا،  
ويڪو عجب خيال ٿي، سامي دا سٿيان،  
ونجهلي وڄاندا، ڳاندا چيٽڪ لاوندا.

عجب عجائب ويس ڪريندا،  
موهن مُرلي دي نال مريندا،  
سڻ ڌڻ ٿيان سچال ٿي سٿيان،  
چشمان چاندا، ڪيهان رمان رلاوندا.

اهين جوڳي دي نال مٿين جوڳڻ ٿيسان،  
ڳل وچ خرقا خاڪي مٿين پيسان،  
بره تنهيندا بدحال ٿي، سامي دا سٿيان،  
لنو جو لاندا، جاندا پيچڙا پاوندا.

”دريا خان“ دلبر دل وچ وسدا،  
ماهي مليا ڪيڙا سندا،  
ڪيتا نينهن نهال ٿي سٿيان،  
پو پو پاندا چاندا اڱڻ سُهاوندا.

## ڪافي

پار درياھون وڌڙي ويلي،  
ماھي منجهيان ڇيڙي.

ڌم پئي راج سياليان، ونجهلي دي ڌنڌ ڪالي،  
ڇيٽڪ لاوندڙي ني، ميڪون پاوند ڙي ني.

وڃ پڇو جوڳيان ڪنون، ڪيها رنگ بڻايا،  
تخت هزارا چوڙڪي، رانجهو جهنگ پڇندا آيا،  
ڇاڪ سڏاوند ڙي ني.

ڪن وڃ ڪنڍل مُڪ وڃ مُرلي، انگ پيوت لاوندا،  
ڳل وڃ ڪفني دست پھوڙا، دونھان درد دڪاوند،  
بين بجاوند ڙي ني.

”درياخان“ درد فراق ماھي دي، ڏونڊ يا جهنگل بيلي،  
راج سياليان ڳول لڌا، ميڪون وڇڙيا مرشد ميلي،  
اڱڻ سو آوند ڙي ني.

## ڪافي ڪوهياري

چم چم چيرين دا چمڪار  
تيڏي عشق نچايا يار.

مئن گهر آو ني ٿيوان گهولي،  
قنڊي مول نه ماوان چولي،  
لهن رقيباني دي رڳڙي رولي،  
آء ته ڳالهيان ڪرون ڏون چار.

هردم بيئي ڪانگ اڏاوان،  
دم دم بيئي ڦالان پاوان،  
بانڀڻ جوتشي روز پڇاوان،  
سجڻا آوسي ڪهڙي وار.

عشق تيڏا مئن پايا جهولي،  
ڳل پشوازان نڪ وچ ٻولي،  
ڳلي ڳلي وچ ڇٽيسان ڳولي،  
ڦيريدار ٿي ڦرسان

”دريا خان“ يار ٿيا هڻ ياتي،  
ڪا جا لهڻي آهس باقي،  
ڊني پئي ول هان عشاقني،  
ڏي ڪو دارون ديدار.

## ڪافي سر بلاولي

عشق الانبا سرتي چايم،

مهڻا ماهي يار دا، دلدار دا.

رات انڌاري مٿن آڻ تاري،

تُرها توڪل تار دا، دلدار دا.

روڪ رهيسان جهوڪ رانجهن دي،

پنڌ پچيسان پار دا، دلدار دا.

برم گهمائيم بابو گهٽيان،

لاه ڪڙا بازار دا، دلدار دا.

سسئي ويچاري سورن ماري،

پنهل ڪيچ ڪوهيار دا، دلدار دا.

دل ميڙي ڪون درمل ڏيسي،

محرم مٿن بيمار دا، دلدار دا.

چُر ”دريا خان“ اکين چاتم،

طعنا لڪ هزار دا، دلدار دا.



## ڪافي

سانوريتي سٺيو مٿين مست ديوانيان،  
مست ديوانيان، ته دل ٻانهيان.

شمس قمر يار ميڏي ڏي، صورت يوسف ثانيا،  
مٿين مست ديوانيان.

جٺ ڪٺ دي وچ تون هي وسندڙين، لاشڪ لا ته مڪانين،  
مٿين مست ديوانيان.

جلو ڏي ڪي دل ڪس ڳڏوڻي، ڏونهين نين لتاين،  
مٿين مست ديوانيان.

”درياهان“ دم دم در هادي دي، حيرت وچ حيرانين،  
مٿين مست ديوانيان.

## ڪافي جوڳ

وقت اهوئي ڦل نه آئسئي، ڪر ڳهن وڻج واپار.  
دنيا دولت، مال خزان، ساڻ نه هلندا بات بيان،  
تي فقير وجهه ڳل وچ ڳانا، اپڻا اندر اُچار.

وڻج وهائج چڱا تون خاصا، تول وڪامن رتيون ماسا،  
ڪني وکر دا چڱا به نه ڪاسا، اهو ظاهر ٿي اظهار.

”درياهان“ دل دا ڌيان ڌريجي، وطن وچن دا خيال ڪريجي،  
پاڻ ڏاڍي ڪنون آپ ڌريجي، پڙهجي استغفار.

## ڪافي ڏناسري

تيري نٿا مجھ ڪون ماريا ٻاهيڙا.

عشق ’تساڙا‘ سر اسانڌي، بار برهه دا ٻارا،  
 تيڙي راهه تي اُن پيوسي، پل ڳيوسي هرچارا،  
 گهايل ڪي گت گهايل ڄاڻي، ڪيا ڄاڻي ويڄ وچارا،  
 ”درياخان“ اي جڳ جوڻا سارا، چوڙ چڪڻ دا چارا.

## ڪافي

هي حيران سهڻي يار ڪيتا،  
 گهر ٻار اسانون پُل ڳئي.

سانون يار دي حسن حيران ڪيتا،  
 ڪم ڪار اسانڌي رُل ڳئي.

جيڪي ڦٽ فراق والي هئي،  
 سي ته چُلدي چُلدي چُل ڳئي.

جيڪي عاشقان دي نٿا ڪرن،  
 اهي راج رقيب دي رُل ڳئي.

هادي يار مايا مطلب ٿئي،  
 تاڙيان تاڪ اندر دي ڪل ڳئي.

”درياخان“ پُڪي هڙ يار دي پيوسي،  
 اهي هو ڪي اسانڌي هل ڳئي.



هندي ڪلام



## دُها

پريم پارکو ڪوئي نھين، جو ڪري پريم ڀڄان،  
 ”دريا خان“ جس گهٽ پريم هي، اس گهٽ پر هي ڳيان.  
 پريم پريمي ڪهين نھين، جو ڪري پريم دھيان،  
 ”دريا خان“ جس گھر پريم بستي، اُس گھر بستي بھگوان.  
 پريم تو ميري بس مين نھين، پريم نہ ميري هات،  
 هان ستگر ساو ڌيان، جو ڪھ سمجھايو بات.  
 پريم ڀڳت هي، پريم هي ڀڳتي، پريم هي مندر من ڪا،  
 پريم ڪي دھرتي ڪي جو باسي، سورج چندر سب ان ڪا.  
 پريم هي پارس جگ هي پاڻر پارس پاڻر جو مل جائين،  
 ساري روگ دفع هو جائين، دکھ هي سک مين بدل جائين.  
 جوگي روگ سرير ڪي، سنگت نام سون جون جل پاني،  
 ”دريا خان“ آس نراس برابر، جو ديڪا سو فاني!

## ڀڄن

شيام سندر آيو ري، سڪهي ري ميرو کان!

بند رابن ۾ ڪيلي هوري، سنمڪ صاحب شيام ڪشوري،  
 راڏا روپ بنايو ري، سڪهي ري ميرو کان.

پانچ سڪهي مل منگل چنگ، مردنگ ڪي چوٽ چلايو  
 رنگ رس تال بجايو ري، سڪهي ري ميرو کان.

”دريا خان“ پوتب هي ڀايا، ستگر سبد ۾ سهج سمايا،  
 آپ آبي گن گايو ري، سڪهي ري ميرو کان.

## شبد

مَت پُولو! مَت پُولو!  
هر نام سمرن مَت پُولو!

ستگر سبد سين اُلت سمايو  
ڪايا ڪاشي تيرت تايو  
من ڪي پانچ سوامي منايو  
گيان هندولي مين جهولو!

مَت پُولو! مَت پُولو!  
هر نام سمر من مَت پُولو!

## واڻي

سيئي مايا ۾ اُنڪي ساذو وِلا گورڪ هَتڪي.  
پانچ پچيس وڌر مُٺ ڌاري، جو آگي سڀ لَتڪي.  
ڪوئي چوٽا ڪوئي آن ٻڌيا، ننڍيا جيسي نئي سواُنڪي.  
گهر ڪي ناري ڪري چترائي، ته آن ڪجهه ڪتڪي.  
من ٻه رنگي، بهرتيان گُئي، ناٺ ڪري سڀ نَتڪي.  
سئي سانيري بات نه پايو، گهاٽ گهڙي سڀ گهتڪي.  
لڪ گيان ڪري سڀ ڪوڙا، سب سي جهيڙي جهتڪي.  
گهر ڪي مايا مول گنوايا، پوندو در در پتڪي.  
”درياخان“ موه مايا ڪي، ڦاسي چڙهاوي ڪتڪي\*.

\* ميري نثنا نپت بَنڪٽ چهوي اُنڪي، ميران پاڻي پريم واني مرتب سردار جعفري، هندستاني  
بڪ نرسٽ بمبئي، ص 132.

## واڻي

بن رهڻي نهين پاوي گا، ساڌوا الٽ بيڪ لجايو گا.  
 قاضي 'پنڊت' بيد ڪتيان،  
 پڙه پڙه ملڪ ڀلاوي گا.  
 اوران ڪون اُپدش ڪريلا،  
 من پر ٻڌنا لايو گا.  
 ڪاهيون تپسي تپسر هوڪر،  
 ڀولا، ڀڄا سڪايو گا.  
 پاڙن اونچا ڪرسي تلي ڪر،  
 لوڪان نون لتڪ دکايو گا.  
 ڪاهي سون بيرافي پسمي لايو،  
 انگ ڀيوت رمايو گا.  
 پوڄ پٿر ني ڪلس چڙهايو،  
 آگي سيس نمايو گا.  
 ڪاهي سون مورڪ منڊ منڊايو،  
 ڪاهي سون جوگي جوگ ڪمايو گا.  
 پوري گرنڊ پار نه پاوي،  
 سر پر ٻوجه اٿايو گا.  
 ڪٽني بڪني، مان وڏائي،  
 نوين نوين گيان سٿايو گا.  
 "دريا خان" اوڀر سوئي پاوي،  
 جو جيتائي مرجايو گا.



### واڻي

گرنڊ ڪونہ سڌاري، گرڻ ڪونہ سڌاري،  
ڊو ٻٽ ڊو ٻٽ ٻهو ساگر مين، ٻانه پڪڙ گرتاري،

بالاڻن هٿس ڪيل گمايو هي هي ڪرتي هاڻ نه آيو  
ڪوڙي جوڀن لاري.

توڻي ڪرتا ميري ميري، ناڪجه تون هين ناڪجه تيري،  
هي هي ڪرتي هاري.

ڪام ڪروڙ موھ، اهنڪارا، پانچ پڇيس مل ڪيا پسارا،  
ايڪ ايڪ لڙڪت نياري.

”درياخان“ گرڻ ڪسون نه پايا، سترگر مليا جدڪال متايا،  
ٻهون ويد پراڻ بچاري.

## واڻي

اَڪل ڪَلا ڪيل، ڪيل ڪيلارا،

ڪنڊ برهمڻ مايا سونيوارا،

جوڳي جوڳ، جون نهنين پاڻي،

بن چپيا ڪي اُلتِي پاڻي،

چندر سور گگن نهنين تارا.

تيرت ورت گنگا نهنين ڪاشي،

ناهين پاڻر پوجا واسي،

ناري ناڻرش نهنين اوتارا.

هندو ناترڪ\* نهنين اُوڌوتا،

ناوه مات پتا نهنين پوتا،

آپ سون آپ پيا نردارا.

روپ نه وڌن لکيو نهنين جاي،

جون ڪوپ ڪي چايا ڪوپ سهاوي،

حد بي حد پياهي پسارا.

”درياخان“ به پڌ جونر بوجهي،

جو راسي تان ڪو نهنين سوجهي،

آواگون جيت نهنين هارا.

\* ترڪ = مسلمان. سلجوقي دور (1077-1307ع) ۾ مسلمانن تي هندن اهو نالو رکيو.

## واڻي

ساس آساس صاحب تيري سنگ هي!  
پول پٽڪ مت بندا ري!

غافل غوطا دم دم ڪاوي،  
آپان پولا اورانون ڀلاوي،  
آتم چوڙ پتر نون ڌياوي،  
اس ڪا وارون مئين ڪندا ري!

تيرت برت ۾ ڪسون نه نايا،  
گريا ڏالا، مول گمايا،  
ستگر سين سمجه نه لايا،  
رام ڀڄن بن گندا ري!

سڀڻ نفارا رڻ جُهڻ باجي،  
انحد گهور گگن ڌن گاجي،  
پلپل سندر سٺ اواجي،  
بادل آمين بر سندا ري!

اڀڻي آپ ڪون جانت ناهين،  
در در دوڙي پٽڪي واهين،  
دوڙ پڙي انڌا ڪونپ ڪي مانهين،  
سونر نرڏن انڌا ري!

”درياخان“ رام نام ڌن لاڳي،  
ڏڀ ڌيا ڏوپ ڀرمنڻا ڀاڳي،  
غلام علي گرو صاحب ساڳي،  
ڪات ڌياجم فندا ري!

## ڪافي بلاولي

حسن ڪي گلي مين آڪر، جس ني ليا پايا،  
 رورو هوش گنوايا، مرجي محبوب منايا.

ديوار سي جهاتي، جس ني آڪي پاتي،  
 دل اسي ڪي ڦاڻي، عشق ڪا هي رُويا هس هس سيس  
 ڪتايا.

صورت سمجه آئينا ذاتي، راڪي دست محبوبان ڪاتي،  
 اٿان عاشق سين نوايا، جيسي آيا، قدم اُنايا.

اصل محبوبان اها چالي، سرڪش سيف، هٿ رڪن خالي،  
 روڻا عاشق سر آڪايا، اپڻا قرب وڌايا.

”دريا خان“ عشق اوقات اولي، جو ’سرگيان‘ پريم ڪا جهلي،  
 هٿ ڪاڻ اسان ول آيا، ول ولدا نهين ولايا.

### هرڪا سمرڻ

ڪوئي ڳياني، ڪوئي ڌياني، ڪوئي پٿر پوڄي پاني،  
ڪوئي برما، بيد بڪاني، هرڪا سمرڻ يون پي نانهين!

ڪوئي جڳ تڳ سمجھ سار، ڪوئي پوڄل ٻوڏي گينوار،  
ڪوئي ڪواڪ اتر پاري، ڪوئي نيم ورت ڪي مانهين،  
هرڪا سمرڻ يون پي نانهين!

ڪوئي انگ پيوتي جوڳي، ڪوئي ڪرم ڪانت مهاروڳي،  
ڪوئي ڪامي ڪريا پوڳي، ڪوئي رَمتا مونڊ مندائي،  
هرڪا سمرڻ يون پي نانهين!

ڪوئي ڏيس و ستر تياڳي، ڪوئي هر سمري وڏ ڀاڳي،  
ڪوئي موھ مايا سون لائي، ڪوئي ڍونڍهي ڀٽڪي جائي،  
هرڪا سمرڻ يون پي نانهين!

”دريخان“ سمري سو هي سورا، اوهي سنت صاحب ڪا پُورا،  
انحد ناد بجايي تورا، مئين ڪا اب مول گمائي،  
هرڪا سمرڻ تڀين ٻائي.

## اُلت بيد

ڪاءِ حرام حلال بچاءِ ناهين،  
اڌ ڪاڏا ڪر چوڙي ناهين،

جو ڪاوي تو امرپور جاوي،  
”دريا خان“ اي ڪوئي پيد بتاوي!

اونچا سر اور نيچي باڙي،  
پسري بيل اُگي ارماڙي،

اس مٿڙي ڪا ڪوئي پار نه چاوي،  
”دريا خان“ اي ڪوئي پيد بتاوي!

ايڪ ترور ڏيڪا بنان پاڙ  
بن ڦولان ڦڙ لاڳا جهڙاڙ

آپ اُناوي سو ڦل ڪاوي،  
”دريا خان“ اي ڪوئي پيد بتاوي!

ايڪ پنچي ڏيڪا پاڻن نه پڪ،  
ڏيرا گگن مين رهت الڪ،

بُهت پچري سرب سماوي،  
”دريا خان“ اي ڪوئي پيد بتاوي!

ايڪ پنچي ڏيڪا هاڏ نه ماس،  
ڏيرا گگن مين رهت اُدياس،

سوهون سين آڪاس چڏاوي،  
”دريا خان“ اي ڪوئي پيد بتاوي!

ايڪ ڪلچڻ ڏيڪي نار  
ڦري ڪناري ڪري سنگاه

چونا مونا انگ لگاوي،  
”دريا خان“ اي ڪوئي پيد بتاوي!

اس ناري ڪي پانچ حواس،  
چوراسي مين رهن مواس،  
ڪواڪ سورا مار مناي،  
”دريخان“ اي ڪوئي پيد بتاي!

جون آنلي مانهين سوئا لٽڪي،  
آپي ٻاجهي آپي اٽڪي،  
ايسا ٻانڌا ڪون چڙاي،  
”دريخان“ اي ڪوئي پيد بتاي!

ميندي ڪهي ڪهي لائي،  
هي سو لال اور لال لڳائي،  
درد ڦري ڪو لالي لاري،  
”دريخان“ اي ڪوئي پيد بتاي!

جل ڪهي جا تيرت نائون،  
بنا تيرت مڪت نه پاڻون،  
ميل اسي ڪا ڪون مٽاي،  
”دريخان“ اي ڪوئي پيد بتاي!

ڪهان پٿر پاني پوجي،  
اپڻا آتم ڏيو نه سوجهي،  
پوجا ناهيا، ڏيو نه ڏاي،  
”دريخان“ اي ڪوئي پيد بتاي!

ڏيو ڏاياتو اپجي ايمان،  
سوهون سونسا چوڙ گمان،  
اي پد ڪوئي ورلا پاي،  
”دريخان“ اي ڪوئي پيد بتاي!

### سي حُرفي

س۔ صفت سبحان ڪي، مُڪ سون ڪهي نه جاءِ،  
اي عقل ڪلاڪو ڪيل هي، ناسر هات نه پاءِ.  
(ڌڻيءَ جي واکاڻ زبان سان ڪري نٿي سگهجي چو ته اها عقل جي باري  
آهي، هٿ پير يا مٿي هڻڻ جي هتي جاءِ ئي ڪانهي.)

م۔ مارڳ برم ڪي، بن پاءِ چلڻا هوءَ،  
او گهٽ بگين بات هي، سورھ پوجي ڪوءِ.  
(سچ جي راهه تي هلڻ لاءِ پيرن بنا پنڌ ڏور ٿو پوي ٿو انهيءَ اُٺائي وات مان  
ورلي ئي ڪو سورھيه پار پئي سگهي ٿو.)

ر۔ رام ڪي نام سون، جن ڪي لاڳي ڀريت،  
”درياخان“ اس سنسار مون، هاري ليوي جيت،  
(سچي سائين جي نالي سان جن جي دل ريجهي ٿي، دريا خان! آهي هن  
جڳ ۾ ڄڻ هاراييل راند کڻي وٺن ٿا.)

گ۔ گيان ڪي نرت سون، دل درين ماهين ديك،  
هون مين رنجڪ نا رهي، من ممتا ڪي ريك،  
(مرشد جي هدايت موجب پنهنجي اندر ۾ جهاتي پائي ڏسندين ته: تو ۾  
دنياداريءَ جي هٿ ۽ هوس جي رتي به رهي نه سگهندي.)

ه۔ هرڪي نام بن، جنم اڪارت جاءِ،  
گر پارس ڪي چرن سون، اپڻا لئون لڳاءِ،  
(مرشد جي مڃتا کان سواءِ حياتيءَ ۾ ڪوبه حظ ناهي، جيڪڏهن سون  
ٿيڻ جي آس اٿئي ته ان پارس جي پوئواري ڪندورها.)

ڪ۔ ڪارج تب سري، جب سترگر لاڳي سنگ،  
ڪام ڪروڙاهنڪار ڪون، ڪپهون لاڳي ڏنگ.



(سڄار جي سنگ ۾ ٿي پنهنجو ٻيڙو پار ٿي سگهي ٿو ائين ڪرڻ سان انسان جون مڙهي اُٿايون نابود ٿي وڃن ٿيون.)

پ۔ ڀڳتي نام ڪي، مُڪتي هو تنهن مانھ،  
 ٻھو ساگر ڪي سيرمون، پڪڙ اُتاري بانھ.  
 (. يڪو دل سان چڱا ڪم ڪندو تنهن ڪي ٿي چوڻڪارو ملندو اهاڻي  
 سڄي عبادت آهي جيڪا ٻڌندي ٻيڙي سیر سان اُڪاري ٿي.)

جھ جھ: جو پي جنميا، جَم ڪي آذر ٿيڪ،  
 ڦوتي پيچر گم پڙي، ماني ڪوڙا بيڪ.  
 (دنيا ۾ جو به ڄميو آهي، سوانت هي جهان چڙي ويندو جيڪي پسجي  
 پيو سوا جايو مٽيءَ جو ماڻ آهي.)

ڏ۔ ڏوري پريم ڪي، سترگر صاحب هاڻ،  
 جب چاهي تب ڪينج لي، ميري وس نابات.  
 (پريم جي ڏورتا پرينءَ جي ٿي هٿن ۾ آهي جڏهن وٽندس، چڪي وٽندو  
 منهنجو وس به ڪهڙو؟)

ل۔ لاڳي پريم ڪي، کڙڪ ڪليجي آءِ،  
 تجھ بن ميرا ڪونهين، ڪون مٿاوي گهاٽ.  
 (نينهن ڇا لڳو جن هيانو ۾ ڪٿاريءَ جا وڍ پيا تو بن ڀلا ٻيو ڪير آهي  
 جواهي گهاٽ مٿائيندو؟)

چ۔ چڪوري رين ڪي، بچڙ ملين پريات،  
 پيا تو ميري وسي نھين، ڪيسي بولون بات.  
 (رات جا رولا ڪي به پرھ جواچي پاڻ ۾ من ٿا پر منهنجو پرين پروس  
 آهي، آءُ ڇا ڪريان!)

ڌ- ڌني ڌن هي، تھان ساڌو جن ڪو نام،  
 بن ساڌو سنسار مين، ڪارج ڪوڙو ڪام.  
 (ڌن وارو پنهنجي ڌن ۾ ته ساڌو ڌڻيءَ سان مڱن آهي اهڙي ساڌوءَ کان سواءِ  
 سنسار ۾ ڪي به ناهي.)

ڍ- ڍارا سُڌري، ڀانسا ڀي ڪي هات،  
 هاري جيتي ايڪ سون، باري باتون بات.  
 (ڍاري جنهن جي هٿ ۾ سوئي پرين پان پيو ڍاري اوداري، ان حالت ۾ کڻڻ،  
 هارائڻ مڙئي ساڳي ڳالهه آهي.)

ڦ- ڦيري اُلت ڪي، وِلا بوجهي ڪوءِ،  
 سِگر سري جو پڙي، اُلت سماوي سوءِ.  
 (ان اُبتي رمز کي ورلي ڪو سياڻو سمجهي سگهي ٿو ته: جيڪو ڪامل  
 مرشد جي هاريءَ تي هاريءَ تي هليو تنهن ئي پاڻ موڪيو.)

ن- نرڪي نرڪ سون، سُرگي سُرگ سماءِ،  
 جس ڪي جيسي چاڪري، ويسِي ڪتي ڪماءِ.  
 (دوزخي دوزخ ۾ ته بهشتي بهشت ۾ سونهين ٿو جنهن جي جهڙي ڪرت  
 هوندي، تهڙي ڪمائي ڪندو.)

پ- پارس گر هي، چيلا لوه سري لوه،  
 سِگر سري جو پڙي، لوها ڪنچن هوءِ.  
 (مرشد پارس سمان ته مريد نسورو لوه آهي، جيڪو پنهنجي مرشد جي  
 سام پيو سونلو پلو سون ٿي پيو.)

ڪ- پنجره خاڪ ڪا، پانچ تنت ڪا ميل،  
 رم رم ماهين رم رهيا، عقل ڪلاڪا ڪيل.  
 (هي خاڪي پنچرو (بدن) پنجن تنن (عنصرن) جو جُڙيل آهي اهو چرخو  
 ڪيئن پيو چلي؟ تنهن جي سڌ مالڪ کي ئي آهي.)

ت۔ ٿر نه ڪو رهيا، جو ديڪون سو ڏوڙ  
 اي اوسر دن جا رهي، سمجھ چيت من موڙها!  
 (هٿ ٿر نه ڪو ٿاڪ، چئنين پاسين ڏوڙ ٿي ڏوڙ پئي وسي هر موقعو هٿان  
 پيو وڃي، مت جا موڙها ڪو ڏيان به ڪر.)

ي۔ ياري نام سون، جن ڪي هي دن رين،  
 سي سارو پاتشاهه هين، سدا آند سڪ چين.  
 (جيڪي رات ڏينهن سڪ مان سائين ڪي پيا سارين، سيئي دل جا بادشاهه  
 ٿي سدا سڪ ۽ سانت ۾ پيا گهارين.)

س۔ سنگت ساڌڪي، ڏر لپ بچن جان!  
 ساڌو صاحب جون وسي، جون گوپين ماهين ڪان.  
 (ساڌن جي سنگت جا ڀول، املھ ڪري ڄاڻ، ڇاڪاڻ ته ساڌو جي من ۾  
 سائين ائين پيو وسي جيئن گوپين وچ ۾ ڪرشن.)

ڌ۔ ڌڙن آڪاش هي، نه نه روپ اٺيڪ،  
 سرپ ويا پي آتما، ٻولي، ٻولي ايڪ.  
 (ڌرتي آسمان جي وچ تي ڌڙيءَ جا ڪيئي روپ پيا نروار ٿين جن ڪي  
 هرڪو پنهنجي سمجھ سارو پيو پسي، پر ڳالهه مڙئي هڪ آهي.)

ب۔ برسي پريم ڪا، بادل اُمرت ڌار  
 گنگن منڊل آسڻ ڪيا، انهد گهور ملار.  
 (ڏس ته الاهي محبت جا مينهن پيا وسن، آسمان مٿان ڪڪرن آسڻ  
 ڪيا آهن، جن مان اُمرت پيو اوڻجي.)

و۔ وست امول هي، ڪايا ڪوئي ڳوجھ،  
 هر هيرون ڪي ڳڙي، هنسلا هرڪو سوڳھ.  
 (اها قيمتي شيءِ پنهنجي اندر مان ڳولي هٿ ڪر! ڌڻي موتين جي ڳڙي  
 اٿئي، هنجھ جٿان ان جي لاءِ هٿ پير هن!)

ت۔ تاري پريم ڪي، جن لڙه لاڳي هات،  
جن ساڌو سي سورما، صاحب تان ڪي ساٿ،  
(پريم جي تاري جنهن جي هٿ ۾ آئي، تنهن جي سڀ سٿائي ٿي، جن  
جتن ڪيا، سائينءَ انهن ئي سورمن جو ساٿ ڏنو.)

ڻ۔ آٿا اندر ڪوڄ ڪر، جن جائيو نج نام،  
وٽڪنٽ واسي سي، سدا جنم بسرا م،  
(پنهنجي اندر جي سوجهري سان جن سڄوانت لڏو اهيئي جنت ماڻي  
سدائين سڪيا ستابا ۽ سانتيڪا ٿي ويا.)

ڙ۔ اوڙا، اڙڪا هر نهين، هي صاحب سندان پاس،  
ساڌو صاحب جون وسي، جون گل مانهين آڪاس،  
(ڌڻيءَ تائين رسڻ ۾ ڪابه رنڊڪ نه آهي، هو سدائين ساڌن سان آهي،  
هنن وٽ ائين پيو وسي رسي جيئن گل آڪاس جو مثال.)

ت۔ تتا طلب نه ڇا ڌڻي، جب تڪ پنجر ساس،  
ڪايا مايا مال ڌن، روپ ورڻ سڀ تاس،  
(تيسٿائين طلب نه ڇڏجي جيستائين ساهه ڪوڙي ۾ آهي، هي تن، من ۽  
ڌن سڀڪي طلب جي واٽ ۾ واري ڇڏ ته ڪجهه لهين.)

ر۔ راڻو رونڪ سڀ، هون هون ڪرڪي هار  
دريا خان ايسي بوجه سون، ڪوءِ نه اتريا پار،  
(راجا توڙي پرڄا، سڀ ڪنهن کي هٿ ڇڏڻ گهرجي، اي دريا خان! نه ته  
ماڳ تي رسڻ مشڪل ٿي پوندو.)

ج۔ اي جڳ جوڻ هي، پسريا ڪوڙ پَسار  
مانگيا جنميا مول هي، مورش چيت گنوار،  
(ماڻهونءَ جي حياتيءَ جو مقصد اهوئي آهي ته سچ کي پرکي، هن ڪوڙي  
جڳ ۾ پکڙيل ڪوڙ کان هر حالت ۾ پاسو ڪري.)

۱۔ آرٽ سنت ڪي، سيس لگاؤ پاؤ،  
ڪام ڪروڙ آهنڪار ڪو ڪپهون لاڳو گهاؤ.  
(سنتن جو ستوهه آهي ته پنهنجي مرشد (رهبر) اڳيان ڪنڌ نماء،  
جيڪڏهن نه ته ڪنهن به وقت گمراهي ۾ گهائجي ويندين!)

ن۔ نويت نام ڪي، لاڳي نه پون چوٽ،  
هون مين سگل پڪار ڪي، سهجي لوئي پوٽ.  
(جڏهن الاهي نانوَ جو نعرو لڳو ته تنهي لوڪن ۾ پڙلاءِ پڪڙجي ويو جنهن  
اهو نعرو نه ٻڌو سو پنهنجي هٿ جي ڪري پوئتي ٿي رهجي ويو.)

گه۔ گيان سمندر ماهين، موتي آگر اُپار  
ڪومر جيووا جوهرِي، وڻجي وڻجڻهار.  
(اونهي ويچار واري سمند ۾ اڪيچار موتي موجود آهن. اهي موتي اهوئي  
ميڙيندو جيڪو مري جيئي ٿو.)

ٿا۔ ناٿا نام ڪا، ڪرچيان ڪو ٿنت ناه،  
تجهه مايا سنگ جوٺ هي، جيسي بڙچ ڪي چانهه.  
(الاهي نالي وارو ڌن، ڪيترو به خرچ ڪيو وڃي ڳٽڻ جو ناه، مايا سان  
ڪوڙي دوستي وٺڻ جي چانو وانگي وڙت آهي.)

ي۔ صاحب يون وسي، جون سوربه وسي آڪاش،  
جهان ويڪون تهان ايڪ برم، چوڪونٽ پيوبرڪاش.  
(ڌڻي هر هنڌ ائين وسي پيو جيئن آسمان ۾ سج آهي، جيڏانهن نهار ته  
اهوئي چوڌاري پنهنجا تجلا پيو پسائي.)

## صوفي روحل فقير جو ڪلام

ولادت 1734-1804ع

## بيت سنڌي

اول ڪعبو عرش عظيم آھ،  
جت فرشتا فرمان ۾ راتو ڏينھن رھن.

ٻيو ڪعبو بيت المقدس آھ،  
جنھن کي سيئي نبي ٿا نمن.

ٽيون ڪعبو بيت المعمور آھ،  
جت ملڪ مڙئي ٿا سجدا ڪن.

چوٿون ڪعبو بيت الله آھ،  
جت حاجي وڃي ٿا حج پڙھن.

پنجون ڪعبو قلوب المؤمنين،  
عرش الله تعاليٰ چيو پاڻ ڏٺين.

مسلمان جيڪي پنھنجو قلب ھٿ ڪن،  
تہ آھن ڪعبا بہ ڪو ڏيائن جا.

روحل فقير جو ڪلام ھتي نموني طور ڏنل آھي. سڄي ڪلام ۽ سوانح لاءِ ڏسو ڪنڊڙيءَ وارن جو ڪلام مرحوم لطف الله بدوي.

### بيت سرائڪي

من چيت سچيت سنڀال چلين،  
اوڪا عشق اڙانگي داراه سائين.

تلڪي تل، جتلي ڦر ٺوڙ نھين،  
اُٿا پير ٽڪاوڻ دي جاءِ سائين.

ڪوڙي ڪايا ڏتي جي لال لھين،  
ڏيندي ساه ڪرين متان آھ سائين.

روحل رھ رضا تي دم قدم،  
هي يار ڏاڍا بي پرواه سائين.

ڪايا ڪر مسيت، پريت پڙئي،  
مصلي منهن چڙھائين.

من محراب سدا رک قبلي،  
جي تون شاھ ريجھائين.

پنج جماعتي پڙھن نمازان،  
ھردم سنجھ صباحين.

روحل روح ڪيتا جت سجدا،  
ھوندا حج حضور اُٿاھين.

## هندي دوها

صفت ڪرو سبحان ڪي، جو آدانت مدهوءَ،  
سو ايڪو ايڪ اڪنڊ هي، اور نه دوجها ڪوءَ.

ايڪ هي اڪر ارث لي، نهين ڪوئي اڪر اُنِيڪ،  
ڪو انت جوڳي جنوهري، اُلت سماوي ايڪ.

سنمڪ هو درسن ڪيا، ڪيني ديا ديال،  
روحل رتارام سون، متيا آل جنجال.

ستگر پرس، پرس سدا بي پرواه،  
روحل اور راج پئي ارجن ڪي شاه.

اننگ اڪثر ناملي، نين نين پريور،  
روحل بچن بولتي، ڪُرچگي هنساسور.

## آنتر بلاس

آنتر بلاس جس ڪو جاگي، ڪرم پرم ڪاسئنسا پاگي.

پوري ڪر ڪون سين چڙهاوي، چرڻ ڪنول مين اُلت سماوي.

ڪرار پڻ سرڪايا ساري، جي تر هوو سو بچاري.

گر اور پرڏن مال نوار گرڪو راک تجو سنسار.

گر صاحب ڪا نام لي، ڪر ڪوٽ ڪوٽ پرنام.

روحل گر پرتاب سون، ڪوئي پاوي پوري ڌام.

مرشد وٺڻ ۽ ان جي بيروي ڪرڻ جي باري ۾ مريد کي هدايتون.



## من پربوڌ

ڪاسي ڪنڊڙي ايڪ هي، روجل روپ ڪبير،  
جوجل آوي تو دڪ مٽي، مٽي جنم جنم ڪي پيڙ.

هون مٿن سڪل سڪل سون نيالا، مٿين داس ڪبير ڪهايا،  
ڪهت روجل هم روجل ناهين، روپ ڪبير همارا.

ڪنڊڙي تو ڪنڇن پوري، پرسو ليو اوتار،  
روجل رنگ لاڳار هي، آٺ پهر آڪسار.

ڪنڊڙي پورو ڌام هي، جي ڪوئي ليوي نام،  
جيٽ دولهه ”دريا خان“ بستي، سڀي ساري ڪام.

ستگر پاڻ پڙت هون، جن سنگ اُڇي گيان،  
ديا پئي ديال ڪي، جيتو ڳڙهه اُپمان.

ڳڙهه جيتڙ آسان هي، مشڪل پيسڻ مانهن،  
بنا جوت جگديش ڪي، انڌيا نهرت نانهن.

جي چاهو پريو آڀڻو اهنس ڪايا سوت،  
روجل رچت اتي ڪهت هين من ڪو من پربوڌ.

## مراد فقير جو ڪلام

ولادت 1743 - 1796ع

## سنڌي بيت

اُهي واسينگ ئي ويا، جنين مڻ مٽي ۾،  
 مڇي خور مراد چوي، آهن گهڻائي پيا،  
 وڃي هاڻ رهيا، سانڍن جهڙا سڀڙا.

ٺوڙھ مٺائي ٺوڻ ڪييءَ، مٺاييءَ نہ مَن،  
 اولو ڪري عام کان، ٿو پنين اُٺا اَن،  
 ڪاپڙي تو ڪن، چسَن لاءِ چيرائيا.

پهرين مارڇ پاڻ، پوءِ ٺھارج پرينءَ کي،  
 هوت تنھنجو ھنج ۾، ”موتو“ ٿي تون ماڻ،  
 اصل عاشق جو اٿئي اهوئي اُھڃاڻ،  
 سامھون اوڏو ساڻ، اٿئي، مُحب، مراد چوي.

مراد فقير جو بہ سنڌيءَ ۾ ڪلام ڇپيل آهي. ڏسو ”ڪنڊڙيءَ وارن جو ڪلام“. مرحوم لطف الله بدوي، سنڌي ادبي بورڊ.

### سرائڪي بيت

رتين ماڻ نه ڪريئي، ڪٽڻ مول نه چوڙين،  
 ويڪ سهاڳ ڪرين ناحجت، متان هوند ڪنون منهن موڙين،  
 چيتي نال ڦراوين چرخا، هيڪا تند نه ٽوڙين،  
 ٿي حلیم ”مراد“ هميشه، نال ادب هٿ جوڙين،  
 جو ڪجهه ڪٽڻ والين ڪتيا، سو مٿن ڪت نه ڄاڻان،  
 ڪامل ڪانڌ ڪچي ڏي ڪچي، هيرئين تي حرصاڻان،  
 هڪ ڪرين ٻي ڪولون لاهين، ٻيئي ٻاجهه ٻجهائان،  
 ”مراد“ ڪهڙا سيءُ تنهن ڪون، جنهن صنم هٿ جيءُ وڪاڻان.

### ڪافي سرتوڙي

سڻيان ڙي مٿن ڪنهن ڪون آڪان،  
 اس ڍولڻ ديان ڳلان،  
 مٿن غريب نمائي اُتي،  
 نت برهه ڪريندا هَلاَن،  
 ماهي ڪيتي راتيان ڏينهان،  
 ڍونڍ رهيان جهنگ جهلان،  
 ويسان جهوڪ ”مراد“ ماهي ڏي،  
 ڏنڙي ٻاجهه نه ولان.

### ڪافي سربسنت

سائين ميڙي! مٿن تيڙي درسڻ پيا سيان،  
 جنهن تن لڳڙي، سو تن ڄاڻي، اور نه ڄاڻن نسيان،  
 مهر پوئي من فال اسانڌي، قدامن ڏي مٿن داسيان،  
 پُٺيان مرادن تو ڏنڙي سڀ، هويان سڀئي آسانيان.

## شاهو فقير

ولادت: 1748ع وفات: 1815ع

هي روحل فقير جو وڏو فرزند هو جنهن تي پاڻ پنهنجي والد جو نالو (شاهو) رکي آبائي ريت پوري ڪيائين، جيڪا هر خاندان ۾ هلندي اچي ٿي.

شاهو فقير پنهنجي والد بزرگوار روحل فقير جي هٿ تي بيعت ڪئي هئي، تصوف جي راه اختيار ڪرڻ کان پوءِ پاڻ شاعري ڏانهن مائل ٿيو. سندس ڪلام ڪافي انداز ۾ هو پر سنڀال نه هئڻ ڪري هيٺ مٿي ٿي ويو. ڪن جو چوڻ آهي ته سڄو ڪلام پنهنجي جيئري درياهه ۾ لوڙهائي ڇڏيو هئائين. واللہ اعلم، سندس ٿورو گهڻو ڪلام فقيرن ۽ سگهڙن وٽان هٿ ڪري منظر عام تي آندو ويو آهي.

شاهو فقير ڏاڍو حليم طبع، صابر ۽ شاکر هو. سندس رهڻي ڪهڻي سادي سودي هوندي هئي. حڪمران مير هن جي گهڻي عزت ڪندا هئا جن وٽان کيس وظيفا ۽ لوازمات ملندا ٿي رهيا، هي اڪثر جهنگ ۾ رهي راتيون جاڳي ذکر فڪر ۾ گذاريندو هو. تصوف جي موضوع تي هن جو پنهنجي مرشد روحل فقير سان گرو ۽ چيلي جي عنوان تي سوال جواب نظم ٿيل آهي جيڪو وڏي اهميت رکي ٿو. هن درويش جي مزار به ڪنڊڙيءَ ۾ آهي.

### بيت سنڌي

پنهنجي اکئين پاڻ ۾، ليئو پاتو جن،  
وهڻ تن کي وه ٿيو نڪي سڪ سمهن،  
انئي پهر عجيب سان، اهي وينا اورڻ ڪن،  
شاهو منجهان تن، اچي بوءِ بهار جي.

اچي بوءِ بهار جي، جڏهن پرين پاڻ پسايو  
ويئي وچوڙي راتڙي، اڱڻ سو جئن آيو  
سو لڏو لامڪان مان، گر روجل بتايو  
شاهو اچي سمايو پاڻ پنهنجو پاڻ ۾.

ڏهن ويرين وچ ۾، آيو آه انسان،  
پهريون ويري هن جو نفس نجس نادان،  
ٻيو ويري تنهن جو شامل آه شيطان،  
ٽيون ويري وٽرو آه صحبت زال زبان،  
چوٿون ويري ٿا چون، بيتو بي فرمان،  
پنجون ويري بيت آه، جو نت نت گهري نان،  
ڇهون ويري اُچ آه، جو بن پاڻي پريشان،  
ستون ويري شهوت آه، جنهن ڪيا هزارين حيران،  
اٺون ويري آڪرو تڪبر جو طومان،  
نائون ويري ننڊ آه، جو غفلت جو گذران،  
ڏهون ويري ڏمر آه، جو جهل وڏو جولان،  
ڏهن ويرين وچ مان، جو ڪتي جنگ جوان،  
هي سر ڪريان قربان، تنهن سورهي تان شاهو چوي.

## بيت سرائڪي

بيت جوڙي سلطان،  
بيت هٿيار ٻڌ آوي.

منگي ماني بيت،  
بيت ٻه آپ پڪاوي.

ڪري مزوري بيت،  
بيت سو بار چڙهاوي.

## هندي رنگ

پاڇايو جا بيت ڪي،  
اي سڀ بيت ڪي ڪاڇ.  
شاهو بيت نا هووي،  
تو ڪون جيي مهراج.

## سنڌي رنگ

اُڙل کان انسان ڪي، بيت پتر جي پوڄا،  
بيت مجاور پتر خدا، روليو جن نادان ڪي،  
اڃا به هن خفقان ڪي، ڇڏي نتو شاهو چوي.

## ڪافي

تن جو چُٽڻ ڪينءَ ٿي ميان، جي پيا عشق جي دام ۾.

تن جو مرڻ ڪينءَ ٿي ميان، جي سر ڏئي ڪنهن پر پيا،  
اُتي پڪي تان بچڻ ڪينڪي، شهبازن جي جهام ۾.

عاشق اجل سامهان ميان، ري سسي ڪاهين ٿا،  
اُتي ڏسي شمع پروانه ٿيا، ڪين گڏيجن عام ۾.

جن سڃاتو پاڻ کي ميان، تن جو ڪينو آهي ڪين،  
اهي وتن ويڳاڻا سدا ميان، پي اها رس جام ۾.

عشق جي آزار جي ميان، ڪل کاڌن ڪوڻ ٿي پوي،  
اها ڳالهه ڳرھج ڪين ڪنهن سان، شاهو پروڙج مام ۾.

## ڪافي روپ آسا

سائين دي سنهن اسان مسافر،

ڏوردي آندي قسمت چاءِ.

ڪل ڪلان وچ تيڏي،

ڏٺڙي نهين آدم نه حواءِ.

اسان آوڻ اسي طرف ڪنون،

جتي ملڪ نه لهندي جاءِ.

تيڏي ڪارڻ در در ڏونديان،

سر جهولي وچ پاءِ.

شاهو فقير دا سڻ ڪر آيس،

مئن هان شاهن دا شاه.

## ڪافي

تيري هاٿ حيات نبي ري، دو جڳ ڪي سرداري هي،  
تيري شوق تبارڪ تعاليٰ، خلقي خلقت ساري هي.

عرش مجيد مڪان تمھارا، دنيا ڪون بيچاري هي،  
دنيا ڪيا بازار بنياءِ، هر نون نت سينگاري هي.

سودا عشق محبت والا، سو تان عجب واپاري هي،  
برھ تيري ڪي بڙچي لاڳي، ساڳي ڪمچي قهاري هي.

اوئن بينن تن من اندر، شب دن طلب توهاري هي،  
گهڙي دل ڪڙي پڪاري، نيئن ننڊ وساري هي.

جس ديدار تمھارا پايا، هو يا بخت اسي ڪا باري هي،  
غم ڪي گھر ۾ سوء رهي هي، دل به فراق ساماري هي.

اس ڪا اور علاج نه ڪوئي، تيري درس ڪي بيڪياري هي،  
نفس ڪميني عمر به عصيان، مان غفلت وچ گذاري هي.

ڪهي شاهو سنئون سرور

تجھه پر لاج هماري هي.



## سوال جواب (هندي)

شاهو: پوري ڳرڪون ڪيونڪر لکئي، ڪٻڌ پڙي پهچان!  
 شاهو اب عرض ڪري، ڏيوو سرب گيان!  
 گيان بنان گم نا پڙي، جب سترگر ڪه سمجها!  
 شاهو پر ڪريا ڪرو ڏيوو تررت لڪاء!

روحل: سترگر پورڻ پرس هي، سدا رهي بي پرواه!  
 روحل او راجا پيو راجن ڪو پتشاف!  
 رنگ اوچو اوچلو نشان مانهين نورا  
 روحل وچن ٻولئي موتي پڙي، ڪوئي ڇڳي هنسا سورا  
 نانھين ڪام نانھين ڪروڙ، نانھين لوپ نہ موها  
 آشا نا ترشنا وانڪي، دغا باج نانھين ڊوها

شاهو: اوتو سترگر آپ هو ڪنچل نر آ ڌارا  
 سرب ستي ڪي ناٿ هو صاحب سر جٿهرا  
 ميري تو رب آپ هو ڏوجها نانھين ڪوءِ!  
 ايڪ چيلا ڏوجها سترگو تيجا صاحب هوءِ!  
 ان تي نا ڪا نرٿا ڪرو ايڪ ايڪ بيچارا  
 ڪرو سيوڙا هم سون، ڪ سٻڌ ڪي پرڪارا

روحل: جيون سورج آڪاس مانھين، ڏيسنت هي ڪاشي!  
 اس ڪاشي ڪو چلتو پيو پهونت هي واشي!  
 تيون سترگر چيلي ڪو بيچار تيان مانھين ايڪ!  
 ايڪوئي ايهو ايڪ هي، جس مون سرب انيڪ!  
 ڏيڪنت چولي دنيا پئي، ڪري ڪو سنت برول!  
 ڪوچ بتاون ابوجه ڪون، پرم متاون پول!

شاهو: آپ تي اٿ پت ڪم ڪري پئي، ڪم ڪر منڊيو مانڊان!  
 شاهو ڪهي صاحب! اسڪو ڪي جي چان!  
 پهلي ڪيا هتا، پيچي ڪا پيا، ڪيا ڪيا رچيا ڪيل!  
 شاهو سرڻي آپ ڪي، آپ ڪهو ڪوئي اڪيل!

روحل: غمجي هتا غيب ۾، آپ اڪيلا ايڪ!  
 ميري اڻي آپ مڙن، پيا انت انيڪ!  
 پهلي پريم مجھ ڪو پيا، ڪينا آء ڪلڻ!  
 اس پريم سون سمجھ اُئي، جيون برم دريا ڪي چول!  
 ميري نچ سروپ مون پيو سورهن ڪلان ڪو پرڪاس!  
 گپتي گهور انڌارئون، او نچت پيو اجاس!  
 جڳ مڳ جڳ مڳ چوڏس چانڊڻو ڌرتي ٿاپي ڌام!  
 اها جهڳ مڳي هنسان ڪي، پڳتان ڪو وسرام!  
 پيچي ڌام دوجهي پئي، اڪنڊي اُ جوال!  
 هنس اجوالي اُن ۾، سدا رهي متوال!  
 دوجي سون تيجي پئي، ڌام ڪو نام اجاس!  
 اُئي اجاسي هنس هي، پيو آه نواس!  
 تيجي سون چوڻي پئي، ڌام پرڻ ٻني پريوش!  
 جيهان پرڻ ٻني هنس ڪو استان ڪهي جي ديس!  
 روحل ڪهي شاهو سنو جمر جو راور هو!  
 ميري نام امل بنا، ڪهون نه چوتي ڪو!  
 ميري جمر ڪي مڪ وسي، جاڙان آڪاس پاتال!  
 چوڏهن لوڪ ايڪويس برهمند، جن پرچم سپاريو جال!

## غلام علي فقير

ولادت: 1755ع - وفات: 1839ع

روحل فقير جو ٻيو نمبر فرزند غلام علي فقير پنهنجي پاءُ شاهو فقير جي وفات بعد فقيريءَ جي گاديءَ تي ويٺو ۽ وڏن جي نقش قدم تي هلندو رهيو. هي به دل وارو درويش ۽ شاعر ٿي گذريو آهي. ڪافي جي فن ۾ چڱو ڪمال ڏيکاريو اٿائين، هن جي هر ڪافي تصوف جي رنگ ۾ رتل آهي جنهن ۾ جوش ۽ روانيءَ سان گڏ سڄي سڪ وارو سوز شامل محسوس ٿئي ٿو. پاڻ فقيري جي سلسلي ۾ پنهنجي والد بزرگوار روحل فقير جو مريد هو. پر پنهنجي وڏي پاءُ شاهو فقير جو به مرشد جيترو ادب ۽ مان ٿي ڪيائين. اهڙو اظهار پنهنجي ڪلام ۾ ڪيترن هنڌن تي ڪري ٿو:

”شاهو شاه“ ۾ شاهه سمايو هر طرح هر شان ۾،

”غلام علي“ سر ڏنو دلبر هليو تنهن جي دان ۾.

هن جي وفات کان پوءِ سندس پٽ روحل ثاني فقيريءَ جي گاديءَ تي ويٺو. غلام علي فقير جيئن پنهنجي وڏي پاءُ شاهو فقير جو عقيدتمند هو. تيئن فقير دريا خان سندس (غلام علي فقير جو طالب ٿي رهيو. غلام علي فقير 1839ع ڌاري فوت ٿيو سندس تربت ڪنڊڙي جي روضي اندر آهي.

## بيت

اندر آگ عشق جي، ٿا جوڳي جاڳائين،  
 سامي سدا سک ۾، ٿا خوديءَ کي ڪائين،  
 پاڻ پليو پاڻ کان، ڀانئن نا پائين،  
 ”غلام علي“ عشق ۾، عاشق سي آهين،  
 ڪي لاهوتي لاهين، لاڳاپا هن لوڪ جا.

اندر آلا عشق جا، تن جوڳين جاڳايا،  
 پيالا پريم ڀرت جا، تن پورين پايا،  
 ”غلام علي“ عشق ۾، سي آڏوتي آيا،  
 تن سامين سجايا، ٿيا اوجاڳا به اکين جا.

اڳهيادر الله جي، تن جوڳين جاڳايا،  
 ساري هن سنسار جا، لاڻا لاهوتين لاڳا،  
 ”غلام علي“ عشق ۾ ٿيا، آڳن جا آڳا،  
 سي سامي سپاڳا، عشق جي آڃاريا.

پاڻي منهن مڙئيءَ ۾، ٿا آڏوتي اورين،  
 تن جا طلب اندر جي، سا چُپاتيءَ چورين،  
 جو و نحن اقرب ويجهو وسي، ٿا ڏس تنهن ڏورين،  
 ”غلام علي“ عشق ۾، تڪ نه ٻي تورين،  
 سي سمرئيون سورين، جي راوت ريڌا رام سين.

مڙهيءَ ۾ مذڪور ٿيو اٿي جوڳي جاڳ،  
 آهي عشق کي ائين، لاهوتين جو لاڳ،  
 ”غلام علي“ اصل کان، اٿن عشق جي اجهاڳ،  
 سي ڏيئي ڏيل ڏهاڳ، وڃي سنمڪ سناسي ٿيا.

سي سنمڪ سناسي ٿيا، پاڻ وڃائي پاڻ،  
 پورييا پروڙ تون، ڄاڻ وڃائي ڄاڻ،  
 ”غلام علي“ عشق جو آھ اهوئي اھڃاڻ،  
 اھي سامي سدا ساڻ، هو هٽي هنگلاج ويا.

روڳي رٿائن ۾، اوري ٿيا اڙجن،  
 عاشق عشق اوڳ ۾، لنگهيا لاهوت وڃن،  
 ريتا رند رام سان، هو ويٺا وقت پڇن،  
 غازي ويا غرق ٿي، هو ٿريا ڏي نڪرن،  
 و نحن اقرب اليه من جبل الوريد، ٻوڙا ڪين ٻڌن،  
 لا تقنطو ترهو ٿا عاشق عين ڏسن،  
 محبت جي ميدان تي، پيل ڪئي پتنگن،  
 ”غلام علي“ غير جون، ڪپيون لامون لاهوتين،  
 هو روزن منجه رلن، هن کي هر دم ڏسن حضوري.

## ڪافي

ماڻا سڄڻ تنهنجا ته منهنجي ساهه ڪي وٺن.

پتي درد دل تي ڦريل تي هر هر ٻنڌن ٻنڌن.

هينءَ نوڪ نينهن تنهنجي لنگهي پار مون پئي.

چئي ڪين ڪنهن طبيبن نڪي ڪنهن ڦيڻن چنڊن.

شب روز به حيران ٿيس، مست مون مدام.

پلپل وهي ٿو نير پرين مڙن نيئن نيئن.

ويو هوش ٿيس بي هوش جڏهن يار ڪئي نظر.

ويڙهي ووهه ٻڌي گرھ زير زير ٿا هڻن.

ڏسي حال غريب جو ڪر پال تون سڄڻ.

ديدان تنهنجون ”غلام علي“ ڪي ڪهن ٿيون ڪهن.

## ڪافي

دلڙي لٽي وئين دلبر جادو ڪري ڪري.

نازن نظر نيئن جي، قابو ڪري ڪري.

رخ سڄڻ جو ماهتاب، جڏهن کولي ٿو نقاب.

گيسو مثال مارن، ڏنگ هڻن ٿا ذري ذري.

ابرو چڪي ڪمان مزگان تيار تير ڪن.

شوقون هڻي عشاقن دستي تڙي ڪڙي.

سدا صاف نڪن هڪ خيال نا مڙن.

ڪوڙين سڄڻ لاءِ حمد پيو پڙهي پڙهي.

دم دم هئين ۾ باهه برهه جي ٻري ٻري.

”غلام علي“ ٿي تون سمنڊ تري تري.

## ڪافي

ڳجهه اندر جون ڳالهڙيون ميان،  
 ريءَ سڄڻ ڪنهن سلان ڙي سرتيون.  
 راتيان ڏينهان سڪ سڄڻ جي،  
 باهه برهه جي ۾ جلان ڙي سرتيون.  
 ڪاڻ پنهل جي مان، ڏونگر ڏوريان،  
 چپر ۾ ٿي ڇلان ڙي سرتيون  
 پلپل پور پون پرينءَ جا،  
 ماڳن تي هوند ملان ڙي سرتيون.  
 ”غلام علي“ چئي سڪ سڄڻ جي،  
 تانگهن لاتيون هل هلان ڙي سرتيون.

## ڪافي جوڳ

سڪون ساهه ساري، وهون ڪينءَ وساري،  
 مارن ڪي آلا، سانگين ڪي آلا!  
 سائينءَ لڳ سومرا، ويڙهيچن ڏي واري،  
 محبت تن جي ماري.  
 آهن ڪم ڪريم تي، وڏا مون ته واري،  
 مولا اڳ نه ماري.  
 ڏوٿيئڙا هن ڏيهه ۾، ڏاٽر مون ڏيڪاري،  
 شل پوان تن پناري.  
 شاهو شاهه اسان ڪي، اڄ پرتئون پرياري،  
 نظر نيهن نهاري.  
 ”غلام علي“ توريءَ هت، گوند منجهه گذاري،  
 گهڙي هت نه گهاري.

## ڪافي

نہ ڪوهي نہ ڪو هو، پر توو عشق جو پيو.

پنڌ انهيءَ پار ڏي، وڃي ڪوڙين منجهان ڪو.  
مڙ نہ ملامت ڪون، ڏسي طالب تو.

عاشق اسان جهڙا، سڄڻ اڳيان سو.  
نالو ڳڏم نينهن جو، وڃڻ تَتِ ٿو.

پرجهي ڏسج پاڻ ۾، آهي ڪو نہ پيو.  
تون ڳولين ٿو جنهن کي، تون ئي آهين سو.

هادي اڱڻ آيو، هاڻي پرم سڀ ويو.  
شاهو شاه اسان تي، اچي ڪرم ڪيو.

”غلام علي“ عشق ۾، پوئتي پنڌ نہ پئو.  
ڳاله پريان جي ڳجهه جي، ڪنهن کي ڪيم چئو.

## ڪافي جوڳ

مون مارن جي سنڀال، عمر هت ڏينهن لڳا.

گلم، غاليجڻا، طول وهائڻا، ڇا جا هي سڪپال.

عمر سڀ شينهن لڳا.

وهان هت ڪينءَ ويسلي، محبت جهڙا مال.

عمر هت مينهن لڳا.

”غلام علي“ عشق ۾، جوش ۾ هتري جال.

عمر هت نينهن لڳا.



## ڪافي جوڳ

آيو آهي ڪنهن خواهش کان، اولو ڪري انسان ۾!

سهي سر سڃاتو سارو صورت سنڌي سلمان ۾،  
هاديءَ تان پر پياريو ڪنهن جوش سنڌي جولان ۾.

عاشق اصل کان آهن آهي، هن حسن جي حيران ۾،  
ڪنهن شوق کان آهي لائيو هن سوز جي سامان ۾.

پير پڙ چايو اچي، محبت سنڌي ميدان ۾،  
ورق واري سهي ڪيائون، دل سنڌي ديوان ۾.

و نحن اقرب ويجهو وسي، ائين پاڻ چيائين فرقان ۾،  
هيءَ رمز لائج روح سان، اعليٰ ان مڪان ۾.

شاهو شاه ۾ شاه سمايو هر طرح هر شان ۾،  
”غلام علي“ سر ڏنو دلبر هليو تنهن جي دان ۾.

## ڪافي

سڄڻ تون دلدار تولي يار ويئي ويئي ڪانگ اڏاريان.  
 تنهن جي ڏسڻ لئي آهيان مشتاقي،  
 ڪڏهن ٿيندين يار اوطاقي.  
 تنهنجي فراقن ڪئي دل فاني،  
 يار ملڻ جي ڪر مهرباني.  
 نيئين وهايان نار تو لئي،  
 پلپل پئي پوڻيدار پڇايان.  
 جوشن جيءَ ۾ جنگيون جوڙيون،  
 وهم خيال سڀئي ويو ٻوڙيون.  
 تن ۾ تنهنجي تنوار تو لئي يار  
 سينو ڪهڙو ساهيان.  
 درد منجهائون ڪيان ٿي آهون،  
 ”غلام علي“ چئي، آءُ اوراهون.  
 عيب ڏليءَ جا ڏک تون يار  
 تو لئي يار ٻي آءُ واه نه پانيان.

## ڪافي

ڏک ڏئي وئين ڏيل ڪي ميان،  
 ووڙيندس وٽڪار ڪي ميان.  
 جيڏيون سرتيون سڀئي سُو ٿيون،  
 ڇڏيو انهيءَ دليل ڪي ميان.  
 معاف ڪندو شل ڪيچي مون تان،  
 هن مٽيءَ جي ويل ڪي ميان.  
 ڏک ڏونگر جا ٻيا ڪان ڪشالا،  
 ڇا ڪندا ته عليل ڪي ميان.  
 ”غلام علي“ چوي تون ٿيءَ ناماندو  
 ٻاجه پوندي رب جليل ڪي ميان.

## ڪافي

دل درد مڙن ڪري دانهون،  
 سانگ چڙي ويا پراهون.  
 سان سانگين جي پوئي ميان،  
 ڏينهن گڏ ٿي گذاريم،  
 محبت تن جي مڇ مڇايو اندر ۾،  
 چپر چڙي ويا چاهون.  
 جوش پون ٿا نوي ميان،  
 جيئڙو جُڪي ۽ جلي ٿو  
 سور فراق تنهن ميان،  
 ڪنهن نه سلي ٿو ڏور ڏڪن جي ڏاڻي وڌائون،  
 نير وهائي ٿا نوي ميان نماڻا ووميان،  
 آهن تن جا ميان اوراڻا جهوراڻا،  
 جيءُ جڏو پانيان ٿي تڏاهون.  
 ”غلام علي“ چوي نوي ڊکڙي تن جي تن ميان،  
 ناوڪ نيهن سنڌي ميان دنگ دويارا ڪري،  
 پيچ پرت جو ويم پايون.

## ڪافي

پليل پور پون ٿا، خان پنهل جا،  
 ويندس رهندس ڪينڪي، ڏک ڏونگر جا بجهن ٿا،  
 ڇهه چولڻ آيو هاڻ مئيءَ کي، پنڌڙا پيش پون ٿا،  
 ڪاهيندس ڪڍ ڪيچين جي، چاڪ مئيءَ جا چڪن ٿا.

آڪي ”غلام علي“ تن جا،

دونهان درد دڪن ٿا.

## ڪافي

جلي ويا جولان ۾ جيئي،  
ڪاڻ تنهنجي ڪنن ڪيئي.

عشق عشاقن بسمل ڪري چمر چايو  
برهه جي آڙاهه ۾ جيءُ جنين جلايو  
سوري پائن سيج سيئي.

شاهه حسن جنتي ڪيو نظارو  
مجنون ويڙهي وڃ ۾ فرهاد ڏونگر ڌاريو  
شاهي رانجهن ترڪ ڪيئي.

پر ڪرم جام شهودي پيتائون،  
ڪسڻ قبول ڪربلائي ڪيائون،  
سوڌا ٿيا سر ڏيئي.

آڪي ”غلام علي“ تن ڪي موج بحري،  
گهيرانهيءَ سي گهرن سڪ جنين قلزم سنڌي،  
ماڻين عبث اهو ئي.

## ڪافي

دردن دم دم لائي ڏنڌڪار محرم يار  
 اڪڙيون روئڻ رت رات ڏينهان.  
 ڀرت جو پيالو يار پياري،  
 مڇ محبت جا ويڙين ٻاري،  
 خوب ٿيا ته خمار محرم يار  
 سبق سون جا ڪنهن کي سڻايان.  
 دلبر دیدان جڏهن تو لايان،  
 دام زلف جا وجهي وئين ڦاهيان،  
 نيھن اوهان جي ڪيو نروار محرم يار  
 سڀئي پلايون تنهنجون پايان.  
 ساهه سڄڻ تو لاءِ اُداسي،  
 بس ڏسڻ تنهنجي جو پياسي،  
 ڪر نه جدائي دلبر يار محرم يار  
 تولي گوندر ڏينهن گذاريان.  
 اڳڻ ”غلام علي“ جي محب تون ايندين،  
 دوست دلاسو درمانديءَ ڏيندين،  
 صدقي سر ساهه يار محرم يار  
 پور مان تنهنجا پڇاڻيان.

## ڪافي

دل ڪمبو دلبر سندو      ديدار مون کي مدام آءِ،  
جانب پنهنجي جان ٿون،      جاني يار جدا نه آءِ.

عرش اعظم قاب مؤمن،      خود خدا فرمايو آءِ،  
عاشقن کي دم به دم،      دل پنهنجيءَ ڏيان آءِ.

بيت الله، خليل الله،      امر سان جوڙائي جاءِ،  
قلب ڪمبو قدرتي،      محبوب جو مڪان آءِ.

بت خاڪيءَ ۾ اوطاقي،      يار منهنجو هميشه آءِ،  
ونحن اقرب جو اشارو،      اهو سندس ڪلام آءِ.

بي مثل محبوب منهنجو،      لم يلد سبحان آءِ،  
احد الله الصمد، مثل،      ڪل ڪوئن پاڪ آءِ.

محبت مدامي حاضري،      منهنجو سچڻ کي سلام آءِ،  
”غلام علي“ تي سو شهنشاهه،      سدائين بي حجاب آءِ.

## سرائڪي ڪلام

### ڪافي ڪلياڻ

نينهن دا نظارا، تيڏي نيٿان دا نظارا،  
طرحين طرحين جو ويڪڻ آيا!

سڀ صورت وچ سهڻا سائين، ڪليا گل هزارا،  
روز ازل ڪنون اڳي آيا، ابداءِ عشق اشارا.

سڀ گهٽ دي وچ سير ڪريندا، نينهن مريندا نعرا،  
شاهو شاه ايوين آڪيا، سهي ڪرين گهر سارا.

”غلام علي“ عشق دي وچ، وڃا نينهن نقارا.

### ڪافي روپ ملاري

ميڏا ڍولڻ نال نينهڙا لڳا، ميڏا ڍولڻ نال.  
تيري باجهون سهڻا سائين، جيون هي ته جنجال.

ساه پساهون ويجهو وسدا، وٽ نهن هڪ وال.

وچ جهان دي ٻيا نهن ڪوئي، محبت جهڙا مال.

”غلام علي“ دي سهڻا سائين! سگهڙي لهين ته سنڀال.

## ڪافي روپ مالڪونس

هاڏي والا نڪتا هڪو سهي ڪرين تون سارا،  
اندر ٻاهر سهڻا سائين، نرمل نور نظارا،  
جي ڄاڻين تان آپ سڃاڻين، ٻيا سڀ ڪوڙ پسارا،  
بيدردي ڪل دور ڪرين، هي ٻاجهون عشق اندارا،  
حسن اسان تي حملا ڪيتا، نينهن مريندا نعرا،  
ڪل فقير ڪون ڪيتر سجدا، شاهو شاهه همارا،  
”غلام علي“تون ظاهر باطن، مارين نينهن نغارا.

## ڪافي بلاولي

جادولڳا يار تيڏا، دلدار تيڏا،  
سهڻا سائين ڪر پال، اڄ اسان نال، جانب گڏ جال،  
لڳا نينهن تان نروار تيڏا،  
هر ڪٿانهين يار جو وسدا، رمزان نال دل جو ڪسدا،  
سارا اي سنسار هي جنسار تيڏا،  
من ميڏي دامهڻا تون هڻين، سڀني سيالين وچ سهڻا تون هڻين،  
سڀ سڄڻ هي سينگار تيڏا،  
عشق اسانون قابو جو ڪيتا، هڻون هاڏي پر جام پيتا،  
سارا عشق هي اسرار تيڏا،  
شاهوشاهه ديان ٻوليان ٻول، سمجهه ويڪين اڪيان ڪول،  
دم دم دي وچ هي ديدار تيڏا،  
ڦيرا پاوين فضل ڪنون، ”غلام علي“طالب اصل ڪنون،  
اهي تڪرار جو تڪرار تيڏا.



## ڪافي جوڳ

ويڪ لايو جو لايو، جادوٿڙا يار اسانون.

بي خبري نون ننڊ گهٽيري، جانب يار جڳايا.

جي مٿين جڻان آبي آيا، اوندي هوت هلايا.

ڏس اهوئي مرشد والا، ٻيا سڀ پنڌ اجايا.

”غلام علي“ دا سهڻي سائين، ڪيتا پنڌ سجايا.

## ڪافي بلاولي

عشق ٻولي ٻولڙيان، نونونان نيشان دي.

عشق آرام ڏيندا نانهين، وره وساريان، ٻيان ڪل واهين.

حسن ڪيڏي هولڙيان.

پڇن تاتون په ڪنهن ڪون، مول نه مڙ تون ڳالهه اهي تون،

بي ڪانه ڪرتڪ تولڙيان.

سڀ سياليان توکان لاون، گهٽ نه ڪائي سڀ سير سڏاون،

اسان جهليان جهولڙيان.

دردمندان دي دلڙي رنجاون، ايڏون اوڏون چغلي چاڙن،

رُل ڳيان سي رولڙيان.

بي ڪل ٻاهر ڪوڙي چالي، دلبر لڏڙم اندر چولي،

تنهن سرڳيان مين گهولڙيان.

”غلام علي“ هي طالب تيڏا، شاهو شاهه هي مرشد ميڏا،

ين گهٽيان تنهن ٻولڙيان.

## ڪافي جوڳ

اٿان رهڻ ڪنهن پي نهن پايا،  
مئين ته آخر جاوڻا.

اي سنسار هي حيلي سازي،  
بازيگر دي هي بازي،  
سمجھ ڪر پير ٽڪاوڻا!

ناڪوئي رهيا ناڪوئي رهسي،  
اٿان آخر تون به نه ٻه سين،  
بيا ٿيا ڪوڙ ڪماوڻا!

جو ڪجهه ميل چونڊ ڌاريا،  
اهو سڀ هيئي پڇين پرايا،  
اٿون ڪيا تون ئي چاوڻا!

پيان ڪل هئين ڪوڙيان چالين،  
اٿان رهسن وڃ ڪي ڳالهين،  
ساجن وڃ سماوڻا!

اتون تيڏي موت ڪڙوڻا،  
اٿان تون ول سڪ هئين سوتا،  
بن خوشيان ڪهه ڪاوڻا!

”غلام علي“ گم ٿيوسين،  
نا ڪو مئين ناتم رهيوسي،  
هڻ گيان گگن وڃ آوڻا!

## ڪافي جوڳ

دلبر نانھين سنتان ڏور  
مليا هر دم نال حضور.

ويڪ حسن هي هي حيراني، نهين سهڻي دا ٻيا ڪوئي ثاني،  
ڪيا جو حور قصور.

نعرا انا الحق مريندا، سولي تي چڙه سیر ڪريندا،  
مرد هويا منصور.

سجڻ اڀا سينگار وکيندا، جيڏي تيڏي يار ڏکيندا،  
پڙا هويا پريور.

پریم نگر دي التي چالي، سمجھي ڪوئي مست موالی،  
ظاهر ذات ظهور.

زمین تي آسمان جو ناھا، روز ازل ڪنون اڳي آھا،  
محبت دا مذکور.

سهي ڪرين تون هي سرءِ را، عاشق ماريا نينهن دا نعرا،  
تيا ملڪان وچ مشهور.

اڪيان دي وچ رنگ لڳايا، شاهو شاهن پر پلايا،  
پورائتي دا پور.

”غلام علي“ آپ سڃاڻين، آپ بنا ڪجهه اور نه ڄاڻين،  
نور نظارا نور.

## ڪافي جوڳ

مهڻا سهڻي يار دا،  
 مئين ته چايا لوڪ ڪري رسوائي.  
 غير والئين دا غرض نه ڪوئي، نينهن لڳا نروار دا،  
 ڪل ڪنهن ڪون پي نانهين، عشق دي اسرار دا،  
 سوين سودا اوبي نانهين، جو ملدا برهه دي بيمار دا،  
 شاهو شاهه اسانون ڏٽڙا، دل وچ درس ديدار دا،  
 ”غلام علي“ عشق الهه دا لڳڙا، سنهن سڄي سردار دا!

## ڪافي جهنگلو

توتان سارا سر سڃاڻين،  
 آپ وچون نا آڻين،  
 سمجھه ويڪين تون سر سارا،  
 اي سڀ هئي پريم پسارا،  
 اندر ٻاهر نور نظارا،  
 ڄاڻ اهو تون ڄاڻين،  
 دنيا دي هن چار ڏهاڙي،  
 پچ ويڪ وٽ تون اوڙي پاڙي،  
 تنهن وچ موت مريندا ڌاڙي،  
 ويندي هي ويل وهائي،  
 اي سنسار هي حيلي سازي،  
 برهه بنا بي طلسم بازي،  
 وچ ڪي گوء مريندي غازي،  
 طرف ڪنهن نا تائين،  
 پيالا تنهن تان پر ڏٽوسي،  
 نال سدا اسان ساڻي،  
 شاهو شاهن شاهه مليوسي،  
 اڪيان دي وچ منگ مليوسي،  
 آپ ڪنون آپ ڳيوسي،  
 بي سڀ ڪوڙ ڪهائي،  
 ”غلام علي“ عشق آيو سي،  
 غير گمان دا پُل پليوسي،

## ڪافي جوڳ

دن دنيا وچ چار تينون آوندا ڪيون نه ويساه.  
 فاني هي اي جڳ سارا،  
 آڻڻ سانون عشق وساريا،  
 چرخي نهين چاهه.  
 آخر جا سين تون اٿون ڪلي،  
 بيٺي گهٽان مٿين پوڻي چلي،  
 آڻڻ تون ڏيوان باهه.  
 دلبر ناهين ساڏهون ڏور  
 اي هي بيڙي والا پور  
 ساعت دي سانباھه.  
 حال دي ڳالھ مٿين آڪان ڪنهن نون،  
 حائيو مارين تون ڪيون مٿين نون،  
 ڪيهي ڏوهه گناهه.  
 تون جو ڪريندا ميڏا ميڏا،  
 ناڪو تون هئين نا ڪوئي تيڏا،  
 هيٺي سڀڪجهه فناهه.  
 سهڻا سائين نت اليندا،  
 بي نموني بي چون شيڏا،  
 ڪيتا عشق آگاهه.  
 سڄڻ ساهه سڌير اساڏا،  
 "غلام علي" هي پير اساڏا،  
 شاهو شاهن شاهه.

## ڪافي جوڳ

هي ڪوئي عشق آوڙا،

مائيوڙي مئين سمجهه نه ڄاتا.

ڪيڙيان دي منهن ڇائي، روز ازل ڪنون آ هئي،

مئين پيچ تڏان هي پاتا.

مچ محبت ٻل ٻليو سي، غيرگمان دا جل ڳيوسي،

هن اسان صحيح سڄڻ سڃاتا.

سالڪ رک تون سرت سنڀالا، حال اسان تي هادي والا،

ڇاهئون چم ڪر ڇاتا.

شاهو شاهنشاھ مليوسي، پيالا پرڪر جنهين ڏٺوسي،

رمز تنهين رنگ لاتا.

”غلام علي“ عشق هي آيا، روزان روز وڌهي سوايا،

نينهن لڳايا هي ناتا.

## ڪافي روپ بروو

دم دم هوياد دل ديدار

رهڻا هر دم سين هوشيار.

دل درياهه ديان لڪ لهريان، سوين سهڻي ديان نونو نهريان،

ڪچي پڪي دي خبر نه چار.

راهان الهه ديان ڪروڙيان ڪئي، جيوين ڄاڻي تيوين هوئي،

محبت هي مختيار.

ايڏي اوڏي مول نه ڳولين، راهان دي وچ روح نه رولين،

ڪر آپ اتي اعتبار.

محبت مست ڪيڏاهي مينون، تنهن دي ڳالهه آڪان مئين ڪنهن نون،

ويڪ سارا اسرار.

شاهو شاهن شاهه سهڻي دا، ”غلام علي“ ڪون عشق اهين دا،

آن ٿيا اظهار.

## ڪافي روپ بلاولي

نينهڙ لڳا نال تيڏي،  
 نال تيڏي نال تيڏي!  
 تڪون اسان ناز تيڏي تي،  
 راتيان ڏينهان دل ميڏي تي،  
 آوي سڄڻان سنڀال تيڏي.  
 پريم پيالا پر جو پيتا،  
 من ميڏي ڪون مست جو ڪيتا،  
 آوي جانب جمال تيڏي.  
 پریت جو ٻاوين نال جو ميڏي،  
 ٻئي طرف ڪيوين ويڪان ڪيڏي،  
 نيتا وره وصال تيڏي.  
 وره تيڏا وي وس وسان تي،  
 بخش ڪيتوئي اڃ اسان تي،  
 آوي محبت جنهن مال تيڏي.  
 ڏيندءِ ڪيئي ڏس ٻنهن تون،  
 پل پل پوندي پور اسان نون،  
 آوي هر دم حال تيڏي.  
 اقرب ڪنون نيڙي جليندا،  
 سڀ صورت وچ ڦل هليندا،  
 آوي وٽ نهن هڪ وال تيڏي.  
 پير اسان ڏا شاهو شاه وي،  
 ”غلام علي“ ميان نينهن لڳا وي،  
 آوي ٻهون ٻهون پال تيڏي.

### هندي واڻي

ساڌنا ڪي سنگ سنگ.	ڦاگنا ۾ هوري ڪيلون.
پيچ رهيو انگ انگ.	پرير ڪي پچڪاري چوڻي.
تن من پيو لال لال.	ڳيان ڪي چوڻي ڳال.
باج رهيو چنگ چنگ.	انحد ڪي ڏن لاڳي.
تر پڻا ڪي تيرما نهين.	نئنان ڪي نيرما نهين.
نايو نرمل گنگ گنگ.	سڪمڻا ڪي سيرما نهين.
جوت ڪاهي جور جور.	انحد گهن گهور گهور.
باجت هي مڙ ڌنگ ڌنگ.	آڻي مچا شور شور.
ڪنول ٽوليو ڪلي ڪلي.	"غلام علي" پرير گلي.
لاڳ رهيو رنگ رنگ.	شاهو جن گلي گلي.

### واڻي سر ريخته جهنگلو

ميلا سوئي ميلا.	دود نان ڪا ميلا.
چلڻا ايڪ اڪيلا.	جس دا يار ملڻ نا پايا.
هي پيچي ڪرتا بيلا.	رين گئي جب اڏ چيلا.
چوڏ چليا هي سويلا.	تون جو ڪرتا ميرا ميرا.
بازيگر ڪا نه ڪيلا.	ڄاڻ جڳت سڀ جوڻي.
سوئي گرو سوئي چيلا.	"غلام علي" ايڪو ايڪ هي.



## واڻي

ٻاهر پيتر ايڪ نر نتر  
وياپ رهيو هءِ پريتم پيارو.

گهٽ گهٽ مانهين ڪيل ڪرت هءِ،  
ايڪ ائيڪ رهن سو نيارو.

لاڪن مون نهين لائين هءِ،  
يه ستگر شبد ڪنهن بير بيچارو.

”غلام علي“ اُس خاڪ ملي،  
جنهن رام ڪي نام ڪونيم بسارو.

## خدا بخش فقير

هي روحل فقير جو ٽيون نمبر پٽ ۽ دريا خان جو سڳو ڀاءُ هو. هڪ اندازي موجب پاڻ 1843 ڌاري هي جهان ڇڏيو هئائين. سندس ڪلام مان هڪ اڻ پوري ٽيهه اڪري هٿ آيل آهي جنهن کي پڙهي اندازو لڳائجي ٿو ته هي به خاندان جي ٻين درويشن ۽ شاعرن وانگي قادرالڪلام هو.

### سي حرفي

الف۔ الله دي 'ذات اول هي، رنگ نڪو بيرنگي  
ڪن فيڪون وچون جڳ جوڙيس، بيرنگي ٿيا رنگي،  
ڪٿان ايراني ڪٿان عراقي، ڪٿان رومي ڪٿان رنگي،  
ڪٿان سني ڪٿان شيعا، ڪٿان صوفي ڪٿان پنگي،  
"خدا بخش" هڪا حق ڪنون، اسان محبت منگي.

ب۔ بيان نه تنهندا ڪوئي، هي بي انت اپارا،  
لامکان، مڪان نه ڪوئي، روپ ورن تئون نيارا،  
ٿي محيط هم وچ آيا، پسرپس آپ پسارا،  
جوڙ جهان خدائي دا، خود ويڪي نور نظارا.

ت۔ تن وچ طلب تنهين دي رکين، مول نه موڙين پاسا،  
سر ڏٿيان سو حاصل ٿيو، اي سودا خوش اور خاصا،  
چوڙ غازي ٺڳ بازي، تون عاشق رهين اداسا،  
رڪ خيال خدائي عاشق، تا پاوين سڪ دا واسا.

ر۔ رکين سڪ سڄڻ دي، جي چاهين سڪ پائين،  
وچ ميلان محبت دي، دل لائين قدم اُٺائين،  
ڏي سر بار برهه دا باري، نال خوشي چل چائين،  
رڪين خيال خدائي دا، هن تان سنجھ، سباهين.

ج- جدا هڪ دم نهين، هر دم تيڙي نالي،  
ايڙي اوڙي مول نه ڳولين، جان تيڙي وچ جالي،  
ڪل شي محيط نه ڄاڻين، او ڪافر دل دي ڪالي،  
من عرف ربي، رب آپ اليا، خيال خدائي والي.

ح- حق نال هميشه هووين، ٻي سڀ وهم وسارين،  
طالب وچ طلب تن ڏيون، نيڻ وهائين نارين،  
ترڪ ڪرين تدبيران ڪون، تون مٿين دي وچ مٿين وت مارين،  
بنا حرف هڪي حق باجهون، ٻي سڀ ورق وسارين.

خ- خالق دا خيال جنهان ڪون، سي ٺهي ٿرن نمائي،  
جي موتو اتي ڪر جيون، ساڌو سي سياڻي،  
ظاهر زور ضعيف ڏکيجن، ڪامل وتن ڪوماڻي،  
وچ خيال خدائي دي خود، ڄاڻن والا ڄاڻي.

ذ- ذڪر وچ رهندي عاشق، هر دم مست مدامي،  
دنيا نه عقبلي والي طالب، چوڙن طلب تامي،  
عشرت عيش عشاق نه ستن، او حرفت ڄاڻ جهاني،  
"خدا بخش" پيتوسي پيالا، دستون شاه شهاني.

غ- غرور نه ڪري عاشق، ديد جنهاندي دم وچ،  
والي نال وصال جنهان دا، قلب تنهان دي ڪم وچ،  
مسجد منهن نه ڪرن ڪڏاهان، يار مليا هي ڀر وچ،  
"خدا بخش" مور نه مري سو جنهن جام پيتاهي جم وچ.

ف- فرداتي ڪم نه رکين، هو دم دم دلبر نال ميان،  
جو دم ٿيو، دم ڪهي، تنهن دم ڪهي ڳاله ميان،  
جنهن دل درد نهين دلبردا، سونا مرد نهين ڪا زال ميان،  
ويڪي، سمجهي، سٺي، الاوي، چلد چولي چال ميان،  
"خدا بخش" مليو سي نوشه، هر ويلي هر حال ميان.

ق۔ قلب مومن دا، جنهن ڪون آڪن عرش الاهي،  
عرش سيئي هن فرس جٿاهين، بره سندي بادشاهي،  
سچي سڪ والي وچ ملدي، ڪوڙئين ڪل نه ڪائي،  
”خدا بخش“ ملين دم دم وچ، هي جڳ فنا فناهي.

ڪ۔ ڪيون آڀريا جاني، اي چاما جسماني،  
هي بي مثل بي صورت، لامورت، لاثاني،  
اربع عناصر دي وچ ڪيون، سر آيا سبحاني،  
ننڍان وچ نگاه ڪريندا، نور اهو نوراني،  
”خدا بخش“ سڃاتا دل وچ، دلبر دل دا جاني.

ل۔ لڳا رنگ عين حسن ڪون، ديك ٿئي مخمور ڪيون،  
شعلي شوق والي چڪ چاڙهيا، سولي تي منصور ڪيون،  
ديڪو باه بره دي ڪيتا، ڪر بل وچ ڪلور ڪيون،  
پرديسي پرويز ڪرايس، شيرين تي شاپور ڪيون،  
”خدا بخش“ ڏيون، سر ٿيون، محبت وچ منظور ڪيون.

## نظر علي فقير

خدا بخش فقير جو ٻيو نمبر پٽ نظر علي فقير به چڱو شاعر  
هو، جنهن جون ٻه ڪافيون هتي پيش ڪجن ٿيون؛

## ڪافي روپ پرياتي

جن لاءِ ٿي جاڳان، اهي شال ايندا،  
مبارڪ مڙهي، ڏسڻ سان ڏيندا.

جن لاءِ جيءَ ۾ ٿي جايون سنواريان،  
اڱڻ کي اکين سان ٿي هر هر پُھاريان،  
ڏسي حال منهنجو اهي نال نيندا.

اُٿم جي اميدان پڄائيندو پرور  
ڪندو ماڙ مرسل سچو سيد سرور  
ڪري ٻاجه ٻانهي سنڀاري سڏيندا.

وڏا وير وحدت جا وارث وسڻا،  
مٿي مهر مولا رضا ۾ رسيلا،  
وڏي قرب ڪامل چنيون نا ڇڏيندا.

”نظر علي“ نهايت سندو ناز نيٺن،  
هجن جي هميشه سدا ساز سيٺن،  
ٻئي دل کي جاني اچڻ سان اڏيندا.

## ڪافي

ويس وٽا ڪي آيا، جوڳي بن ۾ جوڳي،  
روانه ڄاڻي ڪوئي، جوڳي هي ڪي پوڳي.

مُڙلي وڄا مست ڪيس، موهل يس مٿن نون،  
ڳالهه سٺايس ڳجهڙي، ڪر سٺاين ڪنهن نون،  
قرب سڃاتس اپڻا، ڦردي وتيس پي ڦوڳي.

چيران ٻنڌ تي ڪلنگي، پڳوي ڪر ڪي آيا،  
بين بجا ڪي بيشڪ، پيچ پرت جنهن پايا،  
ساهه سري سرصدتي، مٿن ته اصل هس روڳي.

ڇاڪ ٻٻاڻان دل ڪون، ڇاڪ ڪيتاوي سيالين،  
نڌر نوازين آڪي، مگر اندر ديان ڳالهين،  
دم اجاڻي گذري، ملڻ بنا هس موڳي.

مٿن ته ”نظر علي“ ٿيان ملڪ ماهي دي ساري،  
نيهن ننڍاڪو لڳڙا، برهه جهين دا باري،  
مٿن تان مول نپايون، ٻن ڪهه ڪيڙا روڳي.

### فقير در محمد

فقير در محمد مسڪين ولد خداداد ولد خدا بخش فقير ولد  
روحل فقير به چڱو شاعر هو هن جون ڪي ڪافيون هيٺ  
ڏجن ٿيون جن مان پهرين ڪافي هن پنهنجي مرشد جي  
شان ۾ چئي آهي.

### ڪافي روپ شان

ڪنڊڙيءَ جا پير پروڙ سڀرو هي ٿي تنهنجي سڙا  
اچن سوالي وڃن نه خالي، روحل تنهنجي در  
توڻا جهون ٻيو ٺاهه وسيلو، وڃان ته ڪينءَ ٻي در  
ڏجانءِ مون کي ڏاڻ خوشيءَ مون، دهلو وير تون وڙا  
”در محمد“ مسڪين چوي، تون نظر پنهنجي ڌڙا

### ڪافي روپ تلنگ

پهري پوش آدم جو آئين،  
تنهنجي حسن ڪيو حيران،  
ووماهي يارا  
عرب عجم سڀ، حڪم تنهنجي ۾ توڙي زمين آسمان.  
چقمق چشمان چست ڇلايو تنهنجي نيٺن جا پيڪان.  
يڪدم زير زنار جي آندو انوميان، زاهد شيخ صنعان.  
”در محمد“ جي درد جو دلبر دلتون ڪيو ڪو درمان.

## کافي روپ کلیاڻ

رُلي نون رمز رانول دي.

ازل دي هي نه اچکله دي.

ڏيوان کنهن کون درد دانهين.

ويجان کهڙي طرف کاهين.

توڙي پڙکن بره باهين.

واڻي ول وات نا وُلدي.

بره بر سر ٿي باراني.

لڳي هينڙي سو حيراني.

نه ٿيوي پريت پرائي.

دُکي پئي پيڙ پلپل دي.

کانگل گل پاڳجي ڳاري.

کرين سجدا تي سو واري.

خبر له يار هڪ واري.

گهايل ڳهايل دي.

بره شمشير

هي ابرو پاڪ پيشاني.

مثال سيف ايراني.

کرين جنهن دم حکمراني.

آئي تقدير نا تلدي.

چايس جب نيڻ خُماري.

چتي پئي کام بيڪاري.

دو گيسو بات بس پاري.

نهين آسان سلسل دي.

سگهي دلبر درد دانهين.

تون "درمحمد" ديان دل لائين.

شراب شوق پلوائين.

ٿيوي حل کل مشکل دي.



### ڪافي

ڏاڍيان برهين باهين ٻالين، رمزين والين،  
مئن تان شرم حيا ڪنون ڳيان وي.

ديد ماهي دي شهيد جو ڪيتا،  
دو روڻ دو نالين، رمزين والين،  
مئن تاب تان حسن دي تيان وي.

چاڪ ساڏي دل چاڪ جو ڪيتي،  
چشمان ديان رک چالين، رمزين والين،  
ڏاڍي ناز نيٿان دي نيان وي.

لاڪون روز ازل دي سٿيان،  
نال ماهي دي ميڏيان ڳالهيان، رمزين والين،  
مئن تان پرت پڌر وچ پٿيان وي.

”در محمد“ آڪي نال دلبر دي،  
پرت ڳالهيان سڀ ٻالين رمزين والين،  
مئن تان ملڪ ماهي دي ٿيان وي.

## فقير محمد حسن

فقير محمد حسن ولد روحل فقير ثاني ولد شاهو فقير ولد روحل فقير  
به پنهنجي ليکي چڱو شاعر هو نموني طور سندس ڪلام هت ڏجي ٿو:

### ڪافي روپ برو

دلدار ڏي دلاسو دلبر آهيان ديواني

چڙهيو شوق وچون شڪاري،

ماريوني ڪان ڪاري،

دلڙي ڦٽيئيءَ ويچاري،

هي هي ٿي هان حيراني.

نيٺان ڏي وچ فوج چٽڪي،

مزگان ڏي ويڪ ڪٽڪي،

هٽڪي نه مول هٽڪي،

اها رضا ته رباني.

رو رو پڇان مٿين راهان،

نت نت ڪران نگاهان،

باليءَ برهه ديان باهان،

جي جل رهيا وي جاني.

”محمد حسن“ مدامي،

در تيڙي دا سلامي،

دعوا رکي غلامي،

ڪر محب مهرباني.

دريا خان جو همعصر ۽ معتقد

## صوفي جلال فقير

ولادت: 1806ع - وفات: 1921ع

صوفي جلال فقير تالپور 1220 ڌاري پنهنجي آبائي ڳوٺ تالپور وڏا تعلقي ڪوٽ ڏجي ضلع خيرپور ميرس ۾ پيدا ٿيو ۽ 1329ع ۾ وفات ڪيائين. سندس ڄمار هڪ سو ورهين کان مٿي هئي. پاڻ ڪنڊڙي وارن فقيرن مان دريا خان فقير جو صحبتي ۽ معتقد هو. ڪنڊڙي وارا فقير ولايت جا مالڪ هئا ۽ انهن جي صحبتن جو جلال فقير تي گهڻو اثر هو. تنهن جلال فقير به ولايت ڏني ٿي گذريو آهي. ڪنڊڙي وارن درويشن جا ٿر ۽ راجپوتانا ۾ ماڙيجا هندو توڙي مسلمان مريد هئا اهڙيءَ طرح جلال فقير جا پڻ انهيءَ پاسي گهڻا ماڻهو عقيدتمند ٿي ويا. فقير پنهنجي سر انهن علائقن ٿر راجپوتانا (جوڌپور جيسلمير) ۽ گرنار جو پيرين پيادو سير سفر ڪيو هو. هي تنهن زماني جي ڳالهه آهي جڏهن سنڌ ۾ اڃا ريل گاڏي شروع ڪانه ٿي هئي.

فقير صاحب ڪشف ڪرامت جو صاحب هو. ڪيترن موقعن تي جدا جدا ڳوٺن ۾ هن جا اهڙا ڪيئي ڪرشنا ڏسي هزارين ماڻهو سندس مريد اچي ٿيندا هئا. سنڌ ۾ ڪپري، ڪانڙي، جهوني ميرپور هٿونگي ۽ ٻين هنڌن تي هندن جا لکي ڏنل ٻنڌڻاڻ فقير صاحب وٽ موجود هئا، ٻي پاسي جوڌپور ۽ جيسلمير جي راجائن جا پروانا پڻ سندن مهرن سان چمڙي جي ٽڪرن تي چنڊڙايل ڪاغذن ۽ گرمڪي، شاستري اکرن ۾ فقير صاحب جي پوين وٽ اڃا تائين موجود آهن. جيسلمير جي راجا طرفان فقير صاحب کي هڪ باغ به بخشش طور مليو هو. جنهن تي

پاڻ جلال باغ نالو رکيو هيائون اهو باغ اڄ به ويران حالت ۾ اُتي موجود آهي.

جلال فقير وڏي ڄمار هوندي به ڪڏهن ڪنهن وهت تي سواري نه ڪندو هو هميشه پنڌ ٿي پنڌ هلندو ٿي رهيو نه ڪنهن ساهه واري تڪليف پهچايائين نه وري ڪنهن ماڻهو کي ڪا تڪليف ڏنائين. لالچ کان پري هو سندس مريد ڪجهه آڻيندا هئا ته انهن جي سخت ستوهه تي لاچار ڪا شيءِ قبول ٿي ڪيائين نه ته وڃي ٿيو خير. ڪڏهن به پيري مريدي وارو ڌنڌو اختيار ڪري سير سفر تي ڪونه اُسهيو سدائين رب تي توڪل هوندي هئس.

فقير صاحب سنڌي سرائڪي ۽ هنديءَ ۾ شعر چيو آهي جنهن ۾ تصوف جي فلسفي جي حقيقت جا آثار ۽ اهڃاڻ نروار ٿيل آهن. هنديءَ ۾ چيل سندس وائون ۽ ساڪيون هندستان جي راجستاني علائقي اندر خاص ڪري مارواڙ ۾ ڏاڍي چاهه سان ڳايون وڃن ٿيون. پاڻ پنهنجي جيئري ٿي مقبرو تيار ڪرايائون ۽ ٿورن ڏينهن کان پوءِ پساهه پورا ڪري وڃي اُتي آرامي ٿيا.

مرڻا اڳي جي مٿا، مري ٿيا نه مات.

## سنڌي بيت

سورھن جڻيون مون ڏنيون، آھن لال رتيون،  
 ھر ڪنھن کان هيڪليون، ورھائي ورتيون،  
 ڪنين سان رُنيون تہ ڪنين سان پرتيون،  
 اچي هوڏيون پاڻ تہ، ھنيائون شرطون،  
 وڏي ڪير ”جلال“ چوي، ساهيڙيون سرتيون.

خالق روح خلقيا، منھنجي مرضي سان،  
 الست برڪم اھوئي آھي اھڃاڻ،  
 قالو بلا روحن چيو ٻڌائي ٿو پاڻ،  
 انھيءَ ھنڌ ”جلال“ چوي، منھنجا ھئا مھمان.

مون کان اڳي مان چوان، ڄمي نڪا ڄائي،  
 نوري ھيڙس ڪپڙا، حضوري مائي،  
 اھا منھنجي ٻانھي ھئي، در مٿي دائي،  
 انھي ڳالھ جي ”جلال“ چوي، ڪل ڏيو ڪائي.

”جلال“ جوڳي سي چئجن، جي جھد ڪري جاڳن،  
 راتيون ڏينھان رب جي، آھ تات تنين جي تن،  
 اندر جن جو اُجرو اھي مير نہ رڪن مَن،  
 اھي تارن ترن، جن کي سيٺھ آھي سچ جي.

## ھندي واڻي (ٻاڻي)

ڏنيا سوتي ڪري بگوتي، ريڻ ساري،  
 مٿين جاڳي ري، ايسي لڳن مٺا لاڳي ري.  
 ستر ڏيني، مٿين گرھ ليني، چيز امولڪ ساڳي ري.  
 سمرڻ ساريا، جنم سڌاريا، الڪ لڳايو پاڳي ري.  
 دريا خان اولي، اي جس ٻولي، ڏاس ”جلال“ جس لاڳي ري.

## واڻي

اوڙو سنتان ري آسي ري.  
 ڏولر ڪاجا سي، ٿير نه آسي، لگني راکو پياسي ري.  
 ڪاگ اڏاوتي، سگن ٻولاوتي، پيا ملن ڪڏ آسي ري.  
 سيچ پر سوتي، نندران ۾ روتي، ٻيا ڪڏ آن جڳاسي ري.  
 ”جلال“ ڀاوي اي جس ڳاوي، چرن ڪنول ڪي داسي ري.

## واڻي

گونگي گايا، مڙهي ارڻايا، ٻوڙي هئي نج ٻاڻي.  
 پڻيا بيد ڪو ڀاڀي ٻاڇي، انتر پيد نرواڻي.  
 سو ڪي ۾ ايڪ ڊويتا ڏيڪليا، ڏوب مري بن پاڻي.  
 ست هڪا پيڙا پار اُتاري، سمجهي ڪو سنيائي.  
 تين لوڪ ڪا ايننڻ ڪيا، جل ۾ جوت جگاڻي.  
 سنگ جگان راتپسي تاپي، مچلي ۾ سماڻي.  
 گولي ٻوڙي کات هندولي، چنور ڍولي پت راڻي.  
 چاڪر چڪوي راج ڪرنت هي راجا هي اڳواڻي.  
 امر ڏيس ڪي امر بادشاهي، ڪسي هريجن ماڻي.  
 وائي ڏيس مئين ”جلال“ مليو هي، امر پرس پرواڻي.

# سرائڪي ڪلام

## دل

خلق ملڪ جهان نہ آھا، دل اڳي دي ڄائي،  
 قالوبلي جذبان قول ڪيتا، مئين دل فقيري پاڻي.  
 مرڻ جيون دا ڏر نهين ڪوئي، دل اڻاهين آئي،  
 پير فقير اولياءِ اله دي، پيچي وري دل لائي،  
 ڪنهن ڪنهن دل ڳول لڏي، هي ڪنهن ڪنهن دل ويائي،  
 ڪنهن ڪنهن دي دل ننڊ پئي، هي ڪنهن ڪنهن دل جڳائي،  
 ڪنهن ڪنهن دي دل رڻي پئي هي، ڪنهن ڪنهن دل پرچائي،  
 ڪنهن ڪنهن دي دل مٽي پئي هئي، ڪنهن ڪنهن دل جيوائي،  
 نماز روزا سيوئي دل دا، دل دي ڪري ڪمائي،  
 ذڪر فڪر هي سيوئي دل دا، دل دي جهد جفائي،  
 دل بناڪو داد نہ ٿئي، دل بنا هي عمر آجائي،  
 دل ڪون چوڙ تہ بي دل ويندا، دل بنا هي جاءِ نہ ڪائي،  
 سوا لک نبیان دا، آھا چلدا تخت هوائي،  
 سجدي دا احوال ٿيا، سڀ ڪيتس ملڪ توائي،  
 بهشت ڪنون ڪي آدم ستيس، ڊاڻي دي رک دغائي،  
 مڪا مدينا دل ڪون نيڙي، حج قبول سدائي،  
 حال دليندا دل ڪون آڪون، ڪون ويندا دل ڄائي،  
 دل دا دلبر دل دي نيتي، ڪنهن نادل ولائي،  
 خير ثواب سيوئي دل دا، چتي ڏوه گناهي،  
 محبوب دليندا دل ڪون مليا، دل دي نال سچائي،  
 صوفي صاف ”جلال“ دليندا، رب سهاڳڻ سائي.

نوٽ: صوفي جلال فقير جي ڪلام ۽ سوانح موڪلڻ لاءِ مرتب سندس پڙ پوٽي مير مظفر نالپور جو ٿورائتو آهي. خانداني شجرو به هن نوجوان ترتيب ڏئي اماڻيو هو.

## ٿانورداس شڪارپوري

ڪنڊڙيءَ جي درگاه جو معتقد ۽ مريد جنهن جي هڪڙي  
ڪافي هت شامل ڪجي ٿي:

### ڪافي روپ سسئي

اوهين سوال ڪريو رب کي سرتيون،  
هي نمائي ملي وڃي پنهنجي ور کي.  
پنڌ پٿر جو اديون، مون اختيارو  
پوءِ پنهل جي ڀلا، ڪنڊيس ڪڇاڙو  
آءُ ٿي ظاهر چوان سڀ کي سرتيون،  
ڀارت ڪريو ڪا پرورد ڪي.

ڏکيءَ ڏونگر ڏورڻ آيو  
ڪاف ڪشالو مون سر تي سهايو  
آءُ ٿي دعا ڪريان آب کي سرتيون،  
جنهن ڄاڻيندي لوڙهيو مون بشر کي.

سورن مون سان ڪئي پڄاڻي،  
راهه روهه ۾ پيدا نه پاڻي،  
ڪهڙو حال چوان حب کي سرتيون،  
پنڌ رليس ڏاڪا تنهن ڏونگر کي.

قرب ”ٿانور“ سان ڪيو آرياڻي،  
پنهل آيو پاڻ سڃاڻي،  
جنهن جو قدم لڳو لب کي سرتيون،  
اهو عرض آهي صوفي سرور کي.



## دريا خان دولهه

دريا خان نالي ٻه صوفي شاعر ٿي گذريا آهن، هڪ دريا خان، ڪنڊڙي واري روجل فقير جو پٽ جنهن 1853ع ۾ وفات ڪئي. ٻيو دريا خان دولهه جي لقب سان مشهور جيڪو 1891ع ڌاري فوت ٿيو. ڪنڊڙيءَ واري دريا خان سنڌي، هندي ۽ سرائڪيءَ ۾ ڪلام چيو آهي جن مان سندس ٻائيون، سي حرفيون بيت ۽ ڪافيون مشهور آهن دولهه دريا خان فقط ڪافيءَ جو شاعر هو. پوئين دريا خان بابت چيو وڃي ٿو ته هنگورجن وارن مخدومن جي خاندان مان هو جيڪي قريشي، عباسي آهن. هن جي پيءُ جو نالو محمدالياس هو. هي تعليم کان فارغ ٿي شڪارپور ۾ اچي انگريزن جي نوڪري ڪرڻ لڳو اوچتو فقيري رنگ چڙهيس جنهن ڪري نوڪري ڇڏي ڪو وقت قلندر جي درگاهه تي گذاري وري سير سفر جي سانگي هلندو رهيو. پڇاڙيءَ نوشهري واري مخدوم عبدالحق وٽ وڃي سندس مريد ٿيو. ان کان پوءِ لاڙڪاڻي لڳ لالورانڪ ۾ پنهنجو اوتارو قائم ڪيائين. انهيءَ وچ ۾ سنڌ ۽ بلوچستان جا ڪيترا هنڌ پيئيندو رهيو. آخر 5- ذوالقعد 1309ھ مطابق 1891ع وفات ڪيائين.

دولھه دريا خان حقيقت پسند ۽ منفرد ڪافي فو شاعر هو سندس ڪافين ۾ تصوف جو رنگ نظر اچي ٿو ته حسن، عشق جو بيان پڻ آهي، جيڪو سندس ذاتي ذوق جي ترجماني ڪري ٿو. ان کانسواءِ هن جي ڪافين ۾ معاشي توڙي معاشرتي معاملن جو تذڪرو پڻ شامل آهي. انهن مان ڪي ڪافيون هتي ڏجن ٿيون:



عشق عجب اسرار  
جن لايوتن کان پڇجي.  
نينهن اوهان جو ننڍڙو نياپو  
ڪم نه اُجهي ڪار  
جيترو اوهان کي نه ڏسجي.

جيڪر هلجي يار پرين جي،  
هلي پسجي هيڪار  
اِتي ڇو ويٺو لُچجي.

منهن لڪائڻ ناه مناسب،  
سڄڻ ساڙ نه ڏيار  
بيگناه پلا ڇو رُسجي.

دل تي دريا خان جي،  
بره ڏاڍو آهي بار  
تيلاھون نٿو ڪُچجي.



اُن آهي ايمان، پوءِ توڻندو ٿو اچي.  
پيرن لئي پيدا ڪيا، سگدا سي سُبھان.  
جوئر ٻاجهر به نور پر ڪڻڪ مٽ ڪان.  
دل اسان جي دال سان، ڪُنن تون قربان.  
سيڪنهن جي دل دريا خان حلوي ڪارڻ حيران.



مٿئون آيا آهن مينهن مٺي،  
 هيٺيون درياھ جي آبِ اُٿل ڪئي.  
 ڪنڊ ٻڌندي خلق ٿڪي پئي،  
 ڪير پاڻيءَ جا زور جهلي.  
 خاوند خلق کي خوش جو ڪيڙو  
 پوکون پڪيون، اُن جهلي.  
 گاهه چري ٿيا مال متارا،  
 ڏس ڀاڳين جا پاڻ بلي.  
 درد دريا خان سڀ دفع ٿيا،  
 وٽ مقصد پنهنجا جهول جهلي.



گهڙيءَ گهڙيءَ آءُ ٿينديس گهور  
 ناتي لائڻ سان، نينهن نپائڻ سان.  
 اڪڙيون اڙائي وڌءِ ڦاساڻي،  
 جهمڪڻ لائي جهور  
 چشمن چاڻڻ سان وري واجهائڻ سان.  
 من اسان جو مست ڪيو آه،  
 ٿلڻ تنهنجي تور  
 قدم اُٺائڻ سان، وڪڙي وڌائڻ سان.  
 ٿورو ڪري اڇ پير پري،  
 سائين! اور اڇي ڪا گڏ اور  
 ڪلڻ ڳالهائڻ سان، ٻولن ٻڌائڻ سان.  
 دوست دريا خان جي دلڙي لتي آه،  
 مرڪڻ تنهنجي مور  
 حڪم هلائڻ سان، ماري مڃائڻ سان.

هن دريا خان جو ننڍو ڀاءُ نشان علي فقير به ڪافيءَ جو چڱو شاعر ٿي گذريو آهي. جنهن سندس تربيت ۾ فقيريءَ جي وات اختيار ڪئي ۽ سڄي ڄمار شادي کان پري رهيو. حياتيءَ جا ڏينهن دولهه دريا خان جي قائم ڪيل اوتاري ۾ پورا ڪري 27 - رمضان 1302ھ مطابق 1884ع هي جهان ڇڏيائين. هن جي به هڪڙي ڪافي پيش ڪجي ٿي.



سگهڙو مونج ميهارا لهي وڃ سار سنڀار  
 ماري آهيان منل! ديدن جي ديدار.  
 سانگو سر جو لاهي، پئي ڪنن منجهه ڪاهي،  
 دل کي ته دهيون ڪيو چولين جي چچڪار  
 سگهڙو مونج ميهارا  
 ڪيڏو زال جگر هلي سنڀاهي سر  
 چيس نينهن نڪر پوڻ ڇڏي پلڪار  
 سگهڙو مونج ميهارا  
 توسان دلڙي اڙي، جادو ڪيو جڙي،  
 سورن سبق پڙهي، دؤر ڪيا دلدار  
 سگهڙو مونج ميهارا  
 تو سان نيهرڙو لاتم، پيچ پرت جو پاتم،  
 اڳئين ائين نه جاتم، دلبر ٿيندس ڌار  
 سگهڙو مونج ميهارا  
 چو هي منجهه چڙي، پئي لهرين منجهه لڙهي،  
 اچجانءِ ۽ سڏڙا سڻي، متان ڏکين پوءِ ميار  
 سگهڙو مونج ميهارا

سٽي تڙ تي تنوار ويس وهڻ جي وار  
 گهوري جند گهري پئي، ٻڌل ڪري ٻل ڪار  
 سگهڙو مونج ميهارا  
 جادو لڳڙس جائي، ويس وهڻ جي وائي،  
 آئي عشق تپائي، ڪرڪن جي ڪيڪار  
 سگهڙو مونج ميهارا  
 نيڻ نشان سان لائي، دلبر دلڙي ٿاسائي،  
 ويڻين منهڙو لڪائي، پلپل ڪيان ٿي پڪار  
 سگهڙو مونج ميهارا



# سنڌي ادبي بورڊ پاران ڇپايل شاعري جا ڪجهه ڪتاب

180/=	علامہ آءِ آءِ قاضي	شاھ جو رسالو
60/=	جي. ايم. سيد	شاھ جون وايون ۽ ڪافيون
100/=	ڊاڪٽر نبي بخش خان بلوچ	ڪلام فقير نواب ولي محمد خان لغاري
200/=	ڊاڪٽر نبي بخش خان بلوچ	خليفن صاحب جو رسالو
170/=	مخدوم طالب الموليٰ	ڇپر ۾ ڇڙيون
60/=	ڊاڪٽر نواز علي شوق	نينهن جا نعرا
50/=	ڊاڪٽر عطا محمد حامي	ڪليات ناز (مير علي نواز ناز)
200/=	مخدوم محمد امين فهمير (پڪو جلد)	پيغام
160/=	(ڪچو جلد)	
100/=	پروفيسر محبوب علي چنا	ڪليات امين
80/=	عبدالحسين شاھ موسوي	ديوان بيدل
80/=	محمد علي جوهر	ڳاڙها ڳوڙها
100/=	مرتب: شاھ محمد بلوچ	ڪلام محبوب سروري
30/=	اختر ”هالائي“	تسبيح محبت
100/=	انور ”هالائي“	چنڊ جون ڪلائون
80/=	شير ”هاتف“	نيٺن ۾ ڏياريون
50/=	اظھر گيلاني	ڪليات ڪمال
30/=	شمس الدين ”بلبل“	ڪلام بلبل
	مرتب: غلام محمد گرامي	
30/=	شمس الدين ”بلبل“	ديوان بلبل
110/=	سلير نور حسين	Song of Freedom (SHAIKH AYAZ)
175/=	مصنف: فقير ميان غلام علي ”مسرور“ بدوي	هیر رانجهو (مثنوي)
60/=	علي محمد ”مجروح“	سڪ جو سمونڊ
60/=	مرتب: نياز همايوني	آءِ ڪانگا ڪر ڳالهه
		(فقير دريا خان جو ڪلام)
60/=	ڊاڪٽر عبدالڪريم سنديلو	ڪليات حاجي خانڻ پنجڻي
80/=	ميرزا قليچ بيگ	ديوان قليچ
60/=	مرتب: ڊاڪٽر عبدالڪريم سنديلو	ڪليات حسين فقير ديدڙ
150/=	سهيڙيندڙ: ڊاڪٽر نبي بخش خان بلوچ	ڪليات حمل
50/=	مرتب: ڊاڪٽر ميمڻ عبدالمجيد سنڌي	ڪلام بشير